राजस्थान में शिक्षानुसंधान

सम्प्राप्तियाँ एवं सम्भावनाएँ

सम्पादक
इन्द्रजीत खन्ना
डा पन्नालाल वर्मा

शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर

राज्य शोध प्रकोष्ठ
© शिक्षा विभाग, राजस्थान,
बीकानेर
334001



प्रथम संस्करण
1976



सलाहकार
सुश्री उषासुन्दरी बली
प्रो चतरसिंह मेहता
डा श्यामलाल कौशिक



समीक्षक
भगवानलाल व्यास
जनार्दनप्रसाद शर्मा



मुद्रक
जयपुर प्रिन्टर्स
एम आई रोड जयपुर
302001

प्राक्कथन

शिक्षानुसधान से प्राप्त निष्कर्षों का समुचित लाभ उठान क माग म जो समस्याएँ अनुभव की जाती रही हैं, उनम मुख्य है – समन्वय का समस्या तथा अनुसधान से नि सृत तथ्या के प्रसारण और प्रकाशन की समस्या। समन्वय के अभाव म जहाँ एक ओर अनावश्यक दोहरान और अपव्यय होता है वहा दूसरी ओर ज्ञान की खोज व ज्ञान क विकास म रत अनुसधातागण अपने पूववर्ती अनुसधाताओ के शोध प्रयत्नो क लाभ स वचित रह जाते हैं। इसी प्रकार अनुसधान से उभरा ज्ञान यदि प्रकाश म नही लाया जाता तो उसस स्कूलो म कायरत अध्यापक, शिक्षक प्रशिक्षक और शिक्षा प्रशासक भी वचित रह जाते हैं। एसी स्थिति म शिक्षानुसधान केवल उपाधि पाने का साधन अथवा अनुपयोगी मानसिक व्यायाम मात्र बन कर रह जाता है। प्रस्तुत प्रकाशन समन्वय की दृष्टि से और अब तक की खोजो को प्रकाश में लाने का राजस्थान-स्तर पर पहला प्रयास है।



प्रथम संस्करण
1976



सलाहकार
सुश्री उषासुन्दरी बली
प्रो छतरसिंह मेहता
डा श्यामलाल कौशिक



समीक्षक
भगवानलाल व्यास
जनार्दनप्रसाद शर्मा



मुद्रक
जयपुर प्रिन्टर्स
एम आई रोड जयपुर
302001

प्राक्कथन

शिक्षानुसंधान से प्राप्त निष्कर्षों का समुचित लाभ उठाने के मार्ग में जो समस्याएँ अनुभव की जाती रही हैं उनमें मुख्य है – समन्वय की समस्या तथा अनुसंधान से निःसृत तथ्यों के प्रसारण और प्रकाशन की समस्या। समन्वय के अभाव में जहाँ एक ओर अनावश्यक दोहरान और अपव्यय होता है वहाँ दूसरी ओर ज्ञान की खोज व ज्ञान के विकास में रत अनुसंधातागण अपने पूर्ववर्ती अनुसंधाताओं के शोध प्रयत्नों के लाभ से वंचित रह जाते हैं। इसी प्रकार अनुसंधान से उभरा ज्ञान यदि प्रकाश में नहीं लाया जाता तो उससे स्कूलों में कार्यरत अध्यापक, शिक्षक प्रशिक्षक और शिक्षा प्रशासक भी वंचित रह जाते हैं। ऐसी स्थिति में शिक्षानुसंधान केवल उपाधि पाने का साधन अथवा अनुपयोगी मानसिक व्यायाम मात्र बन कर रह जाता है। प्रस्तुत प्रकाशन समन्वय की दृष्टि से और अब तक की खोजों को प्रकाश में लाने का राजस्थान-स्तर पर पहला प्रयास है।

राजस्थान में शिक्षानुसंधान की शुरुआत 1953 से हुई है, जब एम एड उपाधि प्राप्त करने के प्रयोजन से इस क्षेत्र में अनुसंधान कार्य होने लगे। तब से 1974 तक एम एड स्तर पर 673 पीएच डी (शिक्षा) स्तर पर 19 तथा संस्थागत और व्यक्तिगत स्तर पर कई अनुसंधान कार्य सम्पन्न हुए। विभिन्न स्तरों पर हुए इन कार्यों में समन्वय स्थापित करने अथवा इनके निष्कर्षों को पुस्तकाकार रूप में अध्यापकों/शिक्षाधिकारियों तक पहुँचाने की आवश्यकता एवं महत्ता स्वीकार तो की जाती रही, जैसा कि इक्के दुक्के रूप में संस्था-स्तर पर शोध सूचियों अथवा सार-संक्षेपों के प्रकाशन के प्रयत्नों से अनुमान लगाया जा सकता है किन्तु इस दिशा में कोई सुनियोजित काम अब तक हुआ हो ऐसा नहीं लगता। हाँ राष्ट्रीय स्तर पर एन सी ई आर टी आई सी एस एस आर तथा यू जी सी द्वारा शोध सूची प्रकाशन के माध्यम से और शोध प्रवृत्ति निरूपण के माध्यम से इस दिशा में कुछ प्रयत्न हुए अवश्य। फिर भी, राजस्थान में हुए शिक्षानुसंधान का समग्र चित्र कभी उजागर नहीं हो पाया। फिर जो कुछ हुआ वह अंग्रेजी में हुआ। फलतः स्कूलों में कार्यरत अध्यापकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, शिक्षा प्रशासकों आदि को उनका पूरा लाभ नहीं मिल पाया।

शिक्षानुसंधान में समन्वय की भूमिका निभाने के संदर्भ में 1973 में जब निदेशालय में राज्य शोध प्रकोष्ठ की स्थापना हुई तो इन बिखरे छितरे भिन्न भिन्न स्तरों पर हुए शिक्षानुसंधानों को संकलित करके प्रकाशित करने के विचार पर पहली बार ध्यान गया। उपलब्ध शोधों के सार-संक्षेप उन सभी अध्यापकों/प्रधानाध्यापकों द्वारा तैयार करवाए गए। प्रश्न था प्रकाशन के स्वरूप निर्धारण का। एम एड अनुसंधानों सहित सभी अनुसंधान कार्यों के सार-संक्षेप प्रकाशित करने का विचार त्यागना उचित समझा गया क्योंकि उस रूप में प्रकाशन बहुत व्ययसाध्य हो जाता और उसकी उपयोगिता भी सन्दिग्ध रहती। प्रस्तुत प्रकाशन के स्वरूप निर्धारण की बुनियादी धारणा यह रही है कि यह एक ओर तो स्कूलों में कार्यरत अध्यापकों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए उपयोगी हो सके और दूसरी ओर शिक्षानुसंधान में रुचि रखने वाले एवं कार्यरत व्यक्ति/संस्थाओं के लिए यह प्रामाणिक सन्दर्भ साहित्य का काम कर सके। इससे उपलब्ध शोध निष्कर्षों से अध्यापक/प्रधानाध्यापक अपनी अपनी भूमिका के निर्वहन में भी लाभ उठा सकें और अनुसंधानागण यह जान सकें कि अब तक शिक्षानुसंधान के क्षेत्र विशेष में क्या क्या तथा कितना कुछ हुआ है कौन-कौन से विषय अछूते हैं तथा सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों तथा आवश्यकताओं के सन्दर्भ में किस प्रकार की शोध प्रवृत्तियाँ जन्मी हैं। इस सन्दर्भ में श्री जे पी नायक मेम्बर सैक्रेट्री आई सी एस एस आर के प्रति आभार व्यक्त

करना उपयुक्त होगा, जिनके द्वारा पहले किए गए सार-सक्षेपो के हमारे प्रयासो पर दी गई उनकी टिप्पणी से हम मार्गदर्शन मिला तथा प्रकाशन को हिन्दी भाषा म प्रस्तुत करन का चुनौतीपूर्ण निर्णय हम ल सके।

उपलब्ध अनुसधाना की समीक्षा 12 क्षेत्रा म की गई है। क्षेत्र विभाजन का निश्चय किसी पहले से प्रकाशित पुस्तक का अनुकरण करत हुए नही, अपितु स्वतत्र भाव से, राजस्थान के उपलब्ध अनुसधाना की प्रकृति तथा प्रवत्ति निरूपण की सभावना के सदभ म किया गया है। इस म सलाहकार मडल की अनुशसा समीक्षा समिति की टिप्पणी तथा 16–17 जनवरी 1976 को आयोजित कार्यगोष्ठी म हुए विचार विमर्शो का मुख्य योगदान रहा।

उपलब्ध अनुसधाना के अनुशीलन म लेखका के अनुसधान कार्यो की स्वतत्रता का सम्मान करत हुए, प्रवत्ति निरूपण के प्रस्तुतीकरण म कुछ सीमा तक एकरूपता एव तारतम्य लाने की दष्टि से और विभिन्न दष्टिकोणा स उनकी समीक्षा करत हुए प्राप्त निष्कर्षों को सग्रथित करन उनम सबध भाव स्थापित करन तथा अनुशीलन प्रक्रिया स उभरने वाली प्रवृत्तिया अछूते आयामो तथा सामाजिक परिवतना के सदभ म भावी अनुसधाना के लिए दिशा सकेत करन की नीति इस ग्रथ के निर्माण म रही है। यह इसलिए कि प्रस्तुत ग्रथ मात्र निष्कर्षों का सकलन ही न बन, वरन स्कूला और अनुसधाताओ के लिए पथ प्रदशक बन सके।

निश्चय ही इन अपेक्षाओ के कारण प्रवत्ति निरूपण का काय और अधिक कठिन बन जाता है किन्तु मुझे प्रसन्नता है कि लेखका ने काय के साथ न्याय किया है। मैं उन्हें इस काय म सफलता के लिए बधाई देता हूँ, वहा साथ ही आभार व्यक्त करना चाहूँगा कि उन्होने बिना किसी पारिश्रमिक की अभिलाषा के यह महत्वपूर्ण व चुनौती भरा काय अपने अतिरिक्त समय म पूरा किया।

लेखको के चयन म जहाँ एक ओर यह ध्यान रखा गया कि व शिक्षानुसधान तथा लेखन दोना की समुचित योग्यता/क्षमता रखत हैं वहाँ दूसरी ओर यह भी ध्यान रखा गया कि पूरे लेखक दल म शिक्षानुसधान स सबद्ध सभी सस्थाओ/अभिकरणो का प्रतिनिधित्व भी हो जाए। इसी प्रकार इस चयन म यह भी ध्यान रखा गया कि अध्यापक प्रधानाध्यापक, शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षा प्रशासक आदि सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व भी यथासभव हो जाए।

राजस्थान में शिक्षानुसंधान की शुरूआत 1953 से हुई है, जब एम. एड. उपाधि प्राप्त करने के प्रयोजन से इस क्षेत्र में अनुसंधान कार्य होने लगे। तब से 1974 तक एम. एड. स्तर पर 673 पीएच. डी. (शिक्षा) स्तर पर 19 तथा संस्थागत और व्यक्तिगत-स्तर पर कई अनुसंधान कार्य सम्पन्न हुए। विभिन्न स्तरों पर हुए इन कार्यों में समन्वय स्थापित करने अथवा इनके निष्कर्षों को पुस्तकालयों की बन्द अलमारियों से बाहर लाने की आवश्यकता एवं महत्ता स्वीकार तो की जाती रही, जैसा कि समय-समय पर फुटकर रूप में संस्था स्तर पर शोध सूचियाँ अथवा सार-संक्षेप के प्रकाशन के प्रयत्नों से अनुमान लगाया जा सकता है किन्तु इस दिशा में कोई सुनियोजित काम अब तक हुआ हो ऐसा नहीं लगता। हाँ, राष्ट्रीय स्तर पर एन. सी. ई. आर. टी., आई. सी. एस. एस. आर. तथा यू. जी. सी. द्वारा शोध सूची प्रकाशन के माध्यम से और शोध प्रवृत्ति निरूपण के माध्यम से इस दिशा में कुछ प्रयत्न हुए अवश्य। फिर भी, राजस्थान में हुए शिक्षानुसंधान का समग्र चित्र कभी उजागर नहीं हो पाया। फिर जो कुछ हुआ वह अंग्रेजी में हुआ। फलतः स्कूलों में कार्यरत अध्यापकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, शिक्षा प्रशासकों आदि को उसका पूरा लाभ नहीं मिल पाया।

शिक्षानुसंधान में समन्वय की भूमिका निभाने के लक्ष्य से 1973 में जब निदेशालय में राज्य शोध प्रकोष्ठ की स्थापना हुई तो इन बिखरे छितरे भिन्न भिन्न स्तरों पर हुए शिक्षानुसंधानों को संकलित करके प्रकाशित करने के विचार पर पहली बार ध्यान गया। उपलब्ध शोधों के सार-संक्षेप सक्षम अध्यापकों/प्रधानाध्यापकों द्वारा तैयार करवाए गए। प्रश्न था, प्रकाशन के स्वरूप निर्धारण का। एम. एड. अनुसंधानों सहित सभी अनुसंधान कार्यों के सार-संक्षेप प्रकाशित करने का विचार त्यागना उचित समझा गया क्योंकि उस रूप में प्रकाशन बहुत व्ययसाध्य हो जाता और उसकी उपयोगिता भी संदिग्ध रहती। प्रस्तुत प्रकाशन के स्वरूप निर्धारण की बुनियादी धारणा यह रही है कि यह एक ओर तो स्कूलों में कार्यरत अध्यापकों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए उपयोगी हो सके और दूसरी ओर शिक्षानुसंधान में रुचि रखने वाले एवं कार्यरत व्यक्ति/संस्थाओं के लिए यह प्रामाणिक संदर्भ साहित्य का काम कर सके। इसमें उपलब्ध शोध निष्कर्षों से अध्यापक/प्रधानाध्यापक अपनी अपनी भूमिका के निर्वहन में भी लाभ उठा सकें और अनुसंधानकर्तागण यह जान सकें कि अब तक शिक्षानुसंधान के क्षेत्र विशेष में क्या क्या तथा कितना कुछ हुआ है, कौन-कौन से विषय अछूते हैं तथा सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों तथा आवश्यकताओं के संदर्भ में किस प्रकार की शोध प्रवृत्तियाँ उभरी हैं। इस संदर्भ में श्री जे. पी. नायक, मेम्बर सेक्रेट्री, आई. सी. एस. एस. आर. के प्रति आभार व्यक्त

करना उपयुक्त होगा, जिनके द्वारा पहले किए गए सार-सक्षेपो के हमारे प्रयासो पर दी गई उनकी टिप्पणी से हमे मार्गदर्शन मिला तथा प्रकाशन को हिन्दी भाषा मे प्रस्तुत करने का चुनौतीपूर्ण निर्णय हम ले सके ।

उपलब्ध अनुसधानो की सवीक्षा 12 क्षेत्रो मे की गई है । क्षेत्र विभाजन का निश्चय किसी पहले से प्रकाशित पुस्तक का अनुकरण करते हुए नही, अपितु स्वतत्र भाव से, राजस्थान के उपलब्ध अनुसधानो की प्रकृति तथा प्रवत्ति निरूपण की सभावना के सदर्भ मे किया गया है । इस मे सलाहकार मडल की अनुशसा समीक्षा समिति की टिप्पणी तथा 16–17 जनवरी 1976 को आयोजित कार्यगोष्ठी मे हुए विचार विमर्शो का मुख्य योगदान रहा ।

उपलब्ध अनुसधानो के अनुशीलन मे लेखको के अनुसधान कार्यो की स्वतत्रता का सम्मान करते हुए, प्रवत्ति निरूपण के प्रस्तुतीकरण मे कुछ सीमा तक एकरूपता एव तारतम्य लाने की दष्टि से और विभिन्न दष्टिकोणो से उनकी सवीक्षा करते हुए प्राप्त निष्कर्षों को सग्रथित करने, उनमे सबध भाव स्थापित करने तथा अनुशीलन प्रक्रिया से उभरने वाली प्रवत्तिया, अछूते आयामो तथा सामाजिक परिवर्तनो के सदर्भ मे भावी अनुसधानो के लिए दिशा सकेत करने की नीति इस ग्रथ के निर्माण मे रही है । यह इसलिए कि प्रस्तुत ग्रथ मात्र निष्कर्षों का सकलन ही न बने, वरन स्कूलो और अनुसधाताओ के लिए पथ प्रदर्शक बन सके ।

निश्चय ही इन अपेक्षाओ के कारण प्रवत्ति निरूपण का कार्य और अधिक कठिन बन जाता है किन्तु मुझे प्रसन्नता है कि लेखको ने कार्य के साथ न्याय किया है । मैं उन्हे इस कार्य मे सफलता के लिए बधाई देता हूँ, वहाँ साथ ही आभार व्यक्त करना चाहूँगा कि उन्होने बिना किसी पारिश्रमिक की अभिलाषा के यह महत्वपूर्ण व चुनौती भरा कार्य अपने अतिरिक्त समय मे पूरा किया ।

लेखको के चयन मे जहा एक ओर यह ध्यान रखा गया कि वे शिक्षानुसधान तथा लेखन दोनो की समुचित योग्यता/क्षमता रखते हैं वहाँ दूसरी ओर यह भी ध्यान रखा गया कि पूरे लेखक दल मे शिक्षानुसधान से सबद्ध सभी सस्थाओ/अभिकरणो का प्रतिनिधित्व भी हो जाए । इसी प्रकार इस चयन मे यह भी ध्यान रखा गया कि अध्यापक प्रधानाध्यापक शिक्षक प्रशिक्षक, शिक्षा प्रशासक आदि सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व भी यथासभव हो जाए ।

राज्य शोध प्रकोष्ठ ने इस प्रयोजना के आयोजन तथा क्रियान्वयन में जो भूमिका निभाई वह इसकी स्थापना के औचित्य को सिद्ध करती है। मैं उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के प्रति जिनका इसमें प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष सहयोग रहा आभार व्यक्त करता हूँ।

मैं भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद् के प्रति कृतज्ञ हूँ जिसने इस पुस्तक की उपयोगिता मानी और आर्थिक सहायता प्रदान की।

मुझे आशा है कि प्रस्तुत प्रकाशन राज्य में एक महत्त्वपूर्ण अभाव की पूर्ति कर सकेगा तथा अध्यापक, अभिभावक, अनुसंधाता, शिक्षाधिकारी, शिक्षक प्रशिक्षक आदि सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगा तथा सभी की भूमिकाओं के लिए किसी न किसी रूप में कमोबेश मार्गदर्शन कर सकेगा। शिक्षा विभाग का यह एक नवीन प्रयास है जो कई स्तरों के भिन्न भिन्न लोगों के सामूहिक निष्कर्ष का फल है। बहुत संभव है कहीं कोई त्रुटि रह भी गई हो। मुझे विश्वास है कि सहृदय पाठक इस ओर ध्यान आकर्षित करेंगे, ताकि भविष्य के लिए उस पर विचार किया जा सके।

इन्द्रजीत खन्ना
निदेशक
प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा
राजस्थान बीकानेर

बीकानेर
31 3 76
चैत्र नवरात्र प्रथमा

अनुक्रम

इस प्रकाशन के लिए आर्थिक सहायता भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद् से प्राप्त हुई। प्रस्तुत तथ्यों, अभिमतों अथवा निष्कर्षों के लिए सम्पूर्ण जिम्मेदारी लेखक की है। परिषद् इनके लिए उत्तरदायी नहीं है।

विहगावलोकन

शिक्षा के प्रसार तथा शिक्षा म सुधार सम्बन्धी समस्याओ के प्रति जिस गति से जागरूकता बढती जाती है लगभग उसी अनुपात मे शिक्षानुसधान की आवश्यकता एव महत्ता को उत्तरोत्तर स्वीकार किया जाने लगता है। इसका कारण है-शिक्षानुसधान की प्रकृति एव उसकी उपादेयता। शिक्षानुसधान का प्रारम्भ समस्या के चयन से होता है तथा समाधान खोजने की दिशा म तक सम्मत, वध तथा विश्वसनीय आधार प्रस्तुत करना उसका लक्ष्य होता है, क्योकि शिक्षानुसधान अंतिम समाधान देने का दावा नही करता तात्कालिक समाधान नई समस्याओ क चयन की सभावना बनाते हैं और परिवतनो के परिप्रेक्ष्य म इसका क्षेत्र व्यापकतर तथा नानारूपी होता जाता है। किन्तु शिक्षानुसधान वज्ञानिक दृष्टि रखत हुए तथ्यो का विश्वसनीय सकलन करके विवेकपूण विश्लेपण के आधार पर तकपूण व्याख्या करन की लीक का नही छोडता और शिक्षानुसधान की यही विशेपता उसके महत्व की प्रतिपादक है।

भारत मे शिक्षानुसधान की आवश्यकता पर सवप्रथम 1913 के शिक्षा नीति सम्बधी प्रस्ताव म बल दिया गया था तथा 1917 म सडलर आयोग (Sadler Commission) न इस दिशा म ठास सुझाव दिए। आयोग न सिफारिश की कि भारत के प्रत्यक विश्वविद्यालय म शिक्षा-सकाय खोला जाना चाहिए उसका अध्यक्ष प्रोफेसर हो तथा शिक्षा स्नातकीय उपाधि के बाद एम एड का दो वप का पाठ्यक्रम आरभ किया जाए।

किन्तु आयोग की इस सिफारिश पर ठोस कायवाही करीब 20 वप बाद ही हो पाई। अलीगढ और बनारस विश्वविद्यालयो म शिक्षा सकायो की स्थापना अवश्य हुई किन्तु शिक्षानुसधान आरभ करने का श्रेय बम्बई विश्वविद्यालय का है जहाँ भारत में प्रथम बार, 1936 म शिक्षानुसधान का दो वर्षीय पाठ्यक्रम शुरू किया गया। इसी विश्वविद्यालय ने एम एड की उपाधि 1939 मे प्रथम बार प्रदान की।

राजस्थान मे शिक्षानुसधान का श्रीगणश लगभग इसी परम्परा मे अर्थात एम एड उपाधि के प्रयोजन स 1953 म हुआ, जब विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय उदयपुर के सात विद्यार्थियो (एक महिला तथा छह पुरुप) न राजस्थान विश्वविद्यालय स एम एड उपाधि प्राप्त करन हेतु लघुशोध प्रबध प्रस्तुत किए। ठीक छह वप बाद गांधी विद्यामदिर बेसिक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय सरदारशहर म भी एम एड कक्षाएँ आरभ हुइ। यह सयोग था कि इस महाविद्यालय स भी पहली बार एम एड उपाधि प्राप्त करन वाल विद्यार्थियो की सख्या सात ही थी।

1964-65 म उदयपुर विश्वविद्यालय की स्थापना हुई और विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय उदयपुर उस नये विश्वविद्यालय से सबद्ध हो गया। किन्तु प्रयत्न हो पर राजस्थान म वनस्थली विद्यापीठ शिक्षा महाविद्यालय म एम एड कक्षाएं चालू हो जाने से पुन राजस्थान विश्वविद्यालय स सो शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय सबद्ध हो गए। राजस्थान विश्वविद्यालय क परिक्षेत्र म सन 1967 68 म जिलाधीन शिक्षा सस्थान अजमेर म एम एड कक्षाएँ चालू हुई किन्तु 5 वर्ष बाद ही वह पाठ्यक्रम बन्द कर दिया गया। इसी बीच 1969-70 में जोधपुर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत महेश शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय जोधपुर म 16 छात्र छात्राओं ने एम एड कक्षा में प्रवेश प्राप्त किया किन्तु उस महाविद्यालय म इस पाठ्यक्रम का वह पहला और अन्तिम वर्ष रहा।

इस प्रकार राजस्थान म 1970 तक एम एड पाठ्यक्रम चलाने का श्रेय सस्थानों को प्राप्त नहीं हो सका था। किन्तु 1970-71 म प्रथम बार एक राजकीय महाविद्यालय ने इस क्षेत्र में प्रवेश किया जबकि राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानेर में एम एड पाठ्यक्रम चालू हुआ। इसके एक वर्ष बाद राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान एव प्रशिक्षण परिषद द्वारा सचालित क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय अजमेर ने 1971-72 में एम एड पाठ्यक्रम चालू किया। इस प्रकार इस समय राजस्थान म पाँच महाविद्यालयों म एम एड पाठ्यक्रम के प्रयोजन से विद्यार्थीगण अनुसधान काय करते हैं। चार शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय राजस्थान विश्वविद्यालय स सबद्ध हैं तथा एक उदयपुर विश्वविद्यालय से।

इसी सन्दर्भ में 1963 में राज्य शिक्षा सस्थान उदयपुर की स्थापना शिक्षानुसधान की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण घटना मानी जा सकती है क्योंकि शिक्षानुसधान को इसकी तीन प्रमुख भूमिकाओं में से एक माना गया है। इसकी स्थापना से लेकर 1974 तक इस सस्थान ने वस्तुत अनुभूत समस्याओं को लेकर 25 अनुसधान-काय सम्पन्न किए।

शिक्षानुसधान की प्रवत्तियाँ

राजस्थान में अब तक हुए शिक्षानुसधान कार्यों को मुख्यत दो वर्गों में बाँटा जा सकता है—एक वग में उपाधि प्राप्ति के लिए किए गए शिक्षानुसधान हैं दूसरे में अनुभूत समस्याओं के समाधान खोजने की दृष्टि से किए गए अनुसधान काय जो या तो सस्था-स्तर पर हुए हैं अथवा व्यक्तिगत स्तर पर। उपाधि प्राप्ति के लिए किए गए अनुसधान काय पुन दो प्रकार के हैं एम एड स्तर के तथा पीएच डी स्तर के।

अ एम एड स्तर के शिक्षानुसधान 1953 से 1974 की अवधि म कुल मिलाकर 673 एम एड लघुशोध प्रबन्ध विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत हुए। उनका वषवार विवरण निम्नांकित तालिका में दिया जा रहा है

तालिका संख्या 1

वर्षवार विभिन्न विश्वविद्यालयों में हुए एम एड अनुसंधानों की संख्या

वर्ष	विश्वविद्यालय			योग
	राजस्थान	उदयपुर	जोधपुर	
1953	7	..	..	7
1954	12	—	..	12
1955	11	—	—	11
1956	8	..	—	8
1957	18	..	..	18
1958	12	..	—	12
1959	22	—	—	22
1960	22	—	—	22
1961	18	..	—	18
1962	20	—	..	20
1963	16	..	..	16
1964	14	—	—	14
1965	11	10	—	21
1966	18	32	..	50
1967	15	30	..	45
1968	32	16	..	48
1969	34	25	—	59
1970	31	10	16	57
1971	34	12	—	46
1972	50	11	—	61
1973	39	9	—	48
1974	43	15	—	58
कुल	487	170	16	673
प्रतिशत	72 36	25 41	2 23	100

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि लगभग तीन चौथाई (72 36%) एम एड लघुशोध प्रबंध राजस्थान विश्वविद्यालय में ही प्रस्तुत हुए। इसका एक कारण तो यह रहा कि राजस्थान विश्वविद्यालय के परिक्षेत्र में 1953 से 1974 की अवधि में प्रतिवर्ष एम एड अनुसंधान हुए हैं जब कि उदयपुर विश्वविद्यालय की स्थापना ही 1964-65 में हुई। उधर जोधपुर विश्वविद्यालय में तो एम एड पाठ्यक्रम एक ही वर्ष (1969-70) चला। दूसरा कारण परिव्याप्ति सम्बन्धी है। उदयपुर विश्वविद्यालय से

सबद्ध स्नातकोत्तर महाविद्यालय जहाँ शुरू स अब तक एक ही रहा राजस्थान म सबद्ध महाविद्यालयो की सख्या अभी भी चार है। राजस्थान म 1953 म 1965 क बीच एम एड स्तर पर प्रतिवष औसतन 15 5 अनुसधान हुए किन्तु 1966 स इनकी सख्या म काफी वृद्धि हुइ तथा 1966 स 1974 की अवधि म इनकी सख्या का वार्षिक औसत 52 33% पहुँच गया। इसस स्पष्ट होता ह कि 1966 स इन अनुसधानो क औसत म तीन गुना से अधिक की वृद्धि हो गइ। इस महत्वपूण वृद्धि का एक कारण यह रहा कि राज्य सरकार न प्रोत्साहन दने क लिए 1965 मे एम एड उपाधि प्राप्त अध्यापको, प्रधानाध्यापको व शिक्षाधिकारियो को उनकी वतन शृखला म दो अग्रिम वतन वृद्धियाँ दन का प्रावधान किया। यद्यपि यह सुविधा राज्य सरकार न 1970 क बाद समाप्त कर दी किन्तु 1970 के बाद दो नय महाविद्यालयो म इस पाठ्यक्रम की सुविधा उपलब्ध हो जान स एम एड स्तरीय अनुसधानो की सख्या का औसत लगभग पूववत रहा।

एम एड स्तरीय अनुसधान कार्यो म मुख्यत गर सरकारी सस्थाओ का प्रमुख योगदान रहा है। निम्नाकित तालिका म यह स्थिति अधिक स्पष्ट हो सकगी

तालिका सख्या 2

1974 तक विभिन्न शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों मे हुए एम एड स्तर के शिक्षानुसधानों का विवरण

क्र स	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय	सख्या	अवधि	कुल का प्र श
1	विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय उदयपुर	304	1953–74	45 25
2	गांधी विद्यामन्दिर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय सरदारशहर (चूरू)	172	1959–74	25 52
3	वनस्थली विद्यापीठ शिक्षा महाविद्यालय, वनस्थली विद्यापीठ	69	1966–74	10 22
4	जियालाल शिक्षा सस्थान अजमेर	38	1968–72	5 63
5	महेश शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय जोधपुर	16	1970	2 47
6	राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानेर	47	1971–	7 00
7	क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय	27	1972–7	

उपरोक्त ता कि एम एड अनुसध
गर-सरकारी सस्थाओ गर सरकारी
विशेषत विद्याभवन का जिसन
(45 25 प्रतिशत) गांधी
शिक्षक प्रशिक्षण
काय सपन्न हुए।

यहा यह ध्यातव्य है कि राजस्थान म वनस्थली विद्यापीठ शिक्षा महाविद्यालय ही इस क्षेत्र म एक मात्र एसी सस्था है, जा केवल महिलाग्रा का एम एड प्रशिक्षण दती है। यद्यपि एम एड ग्रनुसधाना म इसका योग 10 2 प्रतिशत है, तथापि ग्रन्य महाविद्यालयो मे भी महिलाग्रो न एम एड ग्रनुसधान किए हैं। 1953 से 1974 की ग्रवधि म महिलाग्रा द्वारा कुल 164 एम एड ग्रनुसधान किए गए जो कुल ग्रनुसधाना का 24 4 प्रतिशत होता है। ग्रध्यापिकाग्रा के राजस्थान म ग्रनुपात को देखते हुए एम एड ग्रनुसधाना म महिलाग्रा का एक चौथाई योगदान विशेष महत्व की बात है।

एम एड ग्रनुसधानो न शिक्षा के लगभग सभी क्षेत्रा की समस्याग्रा का छुग्रा है। निम्नाकित तालिका म इन ग्रनुसधाना का क्षेत्रवार विभाजन प्रस्तुत किया गया है

तालिका सख्या 3

शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रा मे सम्पन्न हुए एम एड ग्रनुसधान

क्र स	शिक्षा का क्षेत्र	1953 1954	1955 1959	1960 1964	1965 1969	1970 1974	कुल योग	प्र श
1	शिक्षा दशन एव शिक्षा समाज शास्त्र	5	7	4	16	11	43	6 4
2	शिक्षाक्रम एव पाठय पुस्तकें	2	11	10	5	25	53	8 0
3	व्यक्तित्व	1	5	9	22	43	80	11 9
4	ग्रध्ययन ग्रध्यापन प्रक्रिया	—	7	3	12	27	49	7 3
5	शक्षिक निर्देशन	1	16	18	34	33	102	15 1
6	व्यावसायिक निर्देशन	—	3	8	22	6	39	5 8
7	शक्षिक सप्राप्ति के सहसम्बन्धक	—	4	8	23	24	59	8 75
8	मापन एव मूल्याकन	4	10	9	13	23	59	8 75
9	शिक्षक प्रशिक्षण	1	2	6	37	41	87	13 0
10	विद्यालय व्यवस्था	4	4	10	31	23	72	10 7
11	शिक्षा प्रशासन	—	1	5	8	12	26	3 9
12	समाज शिक्षा	1	1	—	—	2	4	0 6

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक एम एड ग्रनुसधान शक्षिक निर्देशन के क्षेत्र म हुए। यदि शक्षिक निर्देशन एव व्यावसायिक निर्देशन का एक क्षेत्र माना जाए तो इस क्षेत्र म हुए एम एड ग्रनुसधाना का प्रतिशत 21 तक हो जाता है। वस दूसरे स्थान पर ग्रनुसधाताग्रा की रुचि का क्षेत्र शिक्षक प्रशिक्षण दिखाई देता है, जिसम कुल ग्रनुसधाना का 13 प्रतिशत काय हुग्रा है। किन्तु यदि विद्यालय

व्यवस्था एव शिक्षा प्रशासन को एक ही क्षेत्र माना जाए तो दूसरा स्थान इस क्षेत्र का रहेगा क्योंकि इस सम्मिलित क्षेत्र म अनुसधानो का प्रतिशत 14 6 हो जाता है।

शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र म 1953 से 1964 तक 12 वष की अवधि म कुल 10 अनुसधान हुए किन्तु उसके बाद के 10 वर्षों की अवधि म इनकी सख्या 78 हो गई, जो करीब 8 गुना वृद्धि का द्योतक है। इस क्षेत्र की यह लोकप्रियता विशषत अथपूण है। इसी प्रकार जिन क्षेत्रों म एम एड अनुसधानो की सख्या म उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है वे हैं शिक्षाक्रम एव पाठ्य पुस्तकें व्यक्तित्व अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया शक्ति सम्प्राप्ति के सहसबधक मापन एव मूल्याकन आदि। किन्तु व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र म पिछले पाँच सालो म एम एड अनुसधानो की सख्या म गिरावट इस परिप्रक्ष्य म खलने वाली बात लगती है कि इसी समय म व्यवसायो मुखी शिक्षा की विचारधारा प्रबल हुई है, मगर अनुसधान उस दिशा म कम होते गए हैं। समाज शिक्षा के क्षत्र म एम एड स्तर पर नगण्य-सा अनुसधान काय हुआ है।

पी एच डी स्तरीय अनुसधान राजस्थान म पीएच डी स्तर पर पहला शिक्षानुसधान 1963 म श्री गुलशन लाल जुनेजा ने राजस्थान विश्वविद्यालय से किया था। तब स 1974 तक कुल 19 अनुसधान शिक्षा में इस स्तर पर सम्पन्न हुए। इनका वषवार विभाजन निम्नांकित तालिका में दिया जा रहा है

तालिका सख्या 4

राजस्थान मे पीएच डी अनुसधानो का विवरण

वष	राजस्थान	उदयपुर	जोधपुर	योग
1963	1	—	—	1
1964	2	—	—	2
1965	—	—	—	—
1966	1	—	—	1
1967	1	—	—	1
1968	1	—	—	1
1969	—	1	—	1
1970	1	—	—	1
1971	—	—	—	—
1972	—	5	—	5
1973	2	1	—	3
1974	3	—	—	3
	12	7	—	19

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि पीएच डी स्तर पर शिक्षा में जोधपुर विश्वविद्यालय में अब तक एक भी अनुसधान नही हुआ, जबकि राजस्थान विश्वविद्यालय में सर्वाधिक (12) अनुसधान हुए। इस स्तर पर कुल अनुसधानो में कोई काल क्रमिकता नही दिखाई देती। 1965 तथा 1971 में इस स्तर का एक भी अनुसधान नहीं हुआ, जब कि 1972 में अकेले उदयपुर विश्वविद्यालय में पीएच डी (शिक्षा) के पाँच अनुसधान हुए, जो हुए वार्षिक अनुसधानो में सर्वोच्च उपलब्धि है। अब तक हुए पीएच डी स्तरीय शिक्षानुसधानो का 58 प्रतिशत केवल पिछले तीन वर्षों में होना एक रोचक एव महत्वपूर्ण बात है।

क्षेत्रवार वर्गीकरण करने पर मालूम होता है कि सर्वाधिक (पाँच) अनुसधान व्यक्तित्व के क्षेत्र में हुए इसके बाद शिक्षक प्रशिक्षण का क्षेत्र आता है, जहाँ तीन अनुसधान हुए। शिक्षा दर्शन एव शिक्षा समाज शास्त्र, व्यावसायिक निर्देशन तथा समाज शिक्षा के क्षेत्र में पीएच डी स्तर पर एक भी अनुसधान हुआ नजर नही आता।

इ संस्था स्तर पर किए गए अनुसधान इस वर्ग में मुख्यत वे ही अनुसधान उपलब्ध हुए हैं जो राज्य शिक्षा संस्थान, उदयपुर में विभागीय समस्याओं को लेकर किए गए। इनकी कुल संख्या 25 है। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड स्तर पर हुए चार अनुसधान भी उपलब्ध हुए है। अन्य संस्था स्तरीय अनुसधानो की संख्या गिनती की है, तथा वे प्राय किसी न किसी अभिकरण से प्राप्त अनुदान मिलने पर ही सपन्न हुए हैं।

शिक्षानुसधान मे प्रयुक्त विधियाँ

उपलब्ध शिक्षानुसधानो की समीक्षा से ज्ञात होता है कि वे प्राय सर्वेक्षण विधि को अपना कर सम्पन्न किए गए है। एम एड स्तर के ऐसे अनुसधानो की संख्या 95 प्रतिशत से अधिक है। ऐसे अनुसधान इक्के दुक्के ही मिलते हैं, जिनमे प्रयोगात्मक विधि को अपनाया गया हो। जहा प्रयोग किए गए हैं वे भी समुचित रूप से विश्वसनीयता के धरातल पर खडे हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यह एक गभीर बात है कि शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, जिन पर शिक्षानुसधान का प्रशिक्षण देने का दायित्व है ऐसी समस्याओ के लिए अनुसधाताओ को उत्प्रेरित नहीं कर सके, जिनसे प्रयोगनिष्ठ निष्कर्ष उभरते। संस्था-स्तरीय अनुसधानो मे प्रहर पाठशाला पर राज्य शिक्षा संस्थान द्वारा सम्पन्न प्रायोजना महत्वपूर्ण है।

प्रारभिक वर्षो मे कतिपय सप्राप्ति परखो तथा विविध मापनियो का निर्माण किया गया था। कार्य प्रारभिक स्तर का था। किन्तु सभवत सूचना के अभाव मे अथवा श्रमसाध्य माना जाने के कारण इस प्रारभिक कार्य के सूत्र को पकडकर मानकीकरण करने की दिशा मे आगे बढने की प्रवृत्ति नही देखी गई। फलत जहा एक ओर ऐसे कार्यों का अनावश्यक दोहरान हुआ वहाँ दूसरी ओर प्रारभिक अनुसधान कार्यों से लाभ उठाने के अवसर नही खोज गए। अनुसधाताओ की एक प्रवृत्ति जो इस सदर्भ मे दिखाई दी, वह यह कि मापनी/परखो का इसी धरातल पर निर्माण करके उसका मानकीकरण

करने की बजाय प्रायः किन्हीं अथवा अन्यत्र मानकीकृत मापनियों/परीक्षणों का प्रयोग करने में ही इन्होंने संतोष किया। फिर भी पांच या छः स्तर पर ऐसे कुछ महत्वपूर्ण कार्य मानकीकरण के क्षेत्र में हुए हैं।

न्यादर्श के चयन में अनुसंधानकर्ताओं ने प्रायः अपनी सुविधा का ही ध्यान रखा है फलतः अधिकांश अनुसंधानों में न्यादर्श सांख्यिकी दृष्टि से प्रतिनिधि तथा विश्वसनीय नहीं बन पाए हैं। कुछ ऐसे अनुसंधान उपलब्ध हैं जिनमें न्यादर्श स्वच्छन्द आधार एवं सोद्देश्य (Purposive) है। अधिकतर शहरी क्षेत्र के विद्यालयों के छात्र-छात्राओं अध्यापक अध्यापिकाओं को ही न्यादर्श में सम्मिलित किए जाने की प्रवृत्ति अनुसंधानों में दिखाई देती है। इसका परिणाम यह हुआ है कि न्यादर्श में ग्रामीण परिवेश के प्राथमिक अथवा पूर्व प्राथमिक छात्र-छात्राओं पिछड़े वर्गों आदि को नगण्य-सा स्थान ही मिल पाया है। निश्चय ही न्यादर्श का चयन अनुसंधान के उद्देश्यों से संबद्ध महत्वपूर्ण समस्या है फिर भी इस उपेक्षित पक्ष पर भावी अनुसंधानकर्ता समुचित ध्यान दें तो उचित होगा।

शिक्षानुसंधान में उपलब्धियों का सर्वेक्षण

अब तक जिन क्षेत्रों में शिक्षानुसंधान सम्पन्न हुए हैं उनमें क्षेत्रवार उपलब्धियों तथा रिक्तियों की स्थिति इस प्रकार रहती है

शिक्षा दर्शन एव शिक्षा समाजशास्त्र इस क्षेत्र में एम एड स्तर के कुल 43 अनुसंधान उपलब्ध हैं। पीएच डी स्तर का एक भी अनुसंधान उपलब्ध नहीं। शिक्षा दर्शन वर्ग में तो सम्पन्न अनुसंधानों की संख्या कुल 4 ही है जो अनुसंधानकर्ताओं की दृष्टि में इस क्षेत्र का उपेक्षित होना इंगित करता है।

शिक्षा दर्शन के क्षेत्र में कुछ प्रसिद्ध विचारधाराओं का संकलन अथवा विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं के ऐतिहासिक विकास पर इक्के-दुक्के अनुसंधान हुए हैं किन्तु व्यावहारिक दार्शनिक समस्याओं का उत्खनन नव शिक्षा दर्शन के विकास की चेष्टा प्रचलित शिक्षा प्रणाली में निहित दार्शनिक विचार समस्या आदि एवं अछूते आयाम हैं जिन पर अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान जाना अपेक्षित है।

इसी प्रकार शिक्षा समाजशास्त्र के संदर्भ में समाजीकरण और अध्यापक समुदाय की समस्याओं पर तो काफी काम हुआ है मगर सतत परिवर्तनशील समाज में शिक्षा की भूमिका परिवर्तन के अभिकर्ता के रूप में शिक्षा का योगदान इसकी भूमिका एवं अपेक्षित स्वरूप कमजोर वर्ग के समाजीकरण में शिक्षा का दायित्व जैसे अधुनातन पक्षों पर अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान जाना अपेक्षित है। साथ ही यह भी अपेक्षित है कि अनुसंधानों में विचार शिक्षा की व्यावहारिकता का विश्लेषण किया जाए इस क्षेत्र में ऐतिहासिक अनुसंधानों के लिए भी व्यापक एवं रोचक क्षेत्र बाकी है जो अनुसंधाताओं के ध्यान की अपेक्षा करते हैं।

शिक्षाक्रम एव पाठयपुस्तकें शिक्षाक्रम एव पाठ्यपुस्तका के क्षेत्र को लेकर जितन अनुसधान हुए हैं उनम सामान्य शिक्षा क्रम के अन्तगत बुनियादी शिक्षा, विभिन्न पाठ्यक्रमीय अगा में रुचि अरुचि, पाठ्यपुस्तका के राष्ट्रीयकरण जैसे पक्षो पर तो काय हुआ है और वह किसी सीमा तक ऐतिहासिक विकास क्रम, समसामयिक चिन्तना आदि को भी व्यक्त करता है, मगर भारतीय सामाजिक सास्कृतिक सन्दर्भों में प्रचलित शिक्षा क्रम की वधता, उपयोगिता तथा उसकी परिवतन क्षमता पर अनुसधानकर्ताओ का ध्यान गया नही। लगता तो यह भी है कि एम एड स्तर पर अनुसधाना के पन्न भी पाठ्यक्रम के घेरा से घिरे हुए चले हैं यद्यपि वे काय महत्वपूण नही है ऐसा तो नही कह सकते। क्योकि अग्रेजी, गणित हिन्दी, सामाजिक ज्ञान और सामान्य विज्ञान जस आधारिक विषया को लेकर उनके पाठ्यक्रमो का मूल्याकन, पाठ्यपुस्तको की परख, छात्रा/अध्यापको की अभिवृत्ति, रुचि आदि पर साथक अनुसधान किए गए हैं। मगर आवश्यक है कि उनके फलितार्थों की जानकारी अध्यापका, पुस्तक निमाताओ और नीति निर्धारको तक पहुँचे। इस दृष्टि से शिक्षा व्यवस्था की सचार प्रणाली में कोई उपयुक्त तन्त्र कायम करन की आवश्यकता है। निश्चय ही अब तक अगर वसा कुछ हा पाता तो सामाजिक ज्ञान, विज्ञान और अग्रेजा विषय के शिक्षाक्रम और पाठ्य पुस्तका की असगतियाँ बराबर दूर होती रहती, क्योकि इन पक्षो पर प्राय हर वष कोई न कोई अनुसधान हुआ है और उपयोगी सुझाव उभरे हैं।

अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया इस क्षेत्र म समस्या समाधान में पूव कल्पना के उपयाग की क्षमता विविध विधिया की प्रयुक्ति की सीमाएँ, प्रशिक्षण का शिक्षण विधिया के साथक उपयाग पर प्रभाव, पठनारभ काल की समस्याएँ छात्रा की विभिन्न स्थितियो में विभिन्न विषयगत रुचिया विभिन्न विषया के प्रति छात्रा/अध्यापका की अभिवृत्तियाँ, खेल, उद्याग, कायानुभव आदि का विधिगत उपयाग इत्यादि प्रकरणा पर कुछ अत्यन्त उपयागी शोध उपलब्धिया तो हुई ही हैं अभिक्रमित अध्ययन प्रणाली पर भी कुछ सकारात्मक तथ्य अनुसधाताओ ने उभारे है। यद्यपि अभिप्ररण कक्षागत व्यवहार, प्रस्तुतीकरण की तकनीका आदि पर प्रयोगनिष्ठ काय कम हुए हैं मगर जो कुछ भी हुआ है, यदि उस पर व्यवहार-फलन हा सका होता तो अवश्य ही भावी अनुसधानो को भी एक और विधायक दिशा मिल सकी हाती। अनुसधाताओ ने विभिन्न विषय क्षेत्रा म निदानात्मक उपकरण तक भी तयार किए हैं, और सामाजिक आर्थिक विशेषका के साथ विधियो का सह सम्ब ध तक भी खोजा है। इतना जरूर है कि उनका ध्यान माध्यमिक स्तर पर ज्यादा रहा है और प्राथमिक तथा पूव प्राथमिक स्तर अपक्षाकृत कम ध्यान आकर्षित कर पाए हैं। अब समय है कि भावी अनुसधाना म प्राथमिक पूव प्राथमिक और अनौपचारिक अध्ययन अध्यापन के पक्षा पर अधिकाधिक ध्यान दिया जाए और अनुसधाना की उपलब्धिया को क्रियान्वयन के धरातल पर भी उतारा जाए। इसके साथ ही लोक-सचार के साधना, शिक्षण अधिगम सामग्री आदि के प्रभावा का भी आकलन करना जरूरी है। शिक्षा की विशिष्ट स्थितिया—यथा, एक अध्यापकीय विद्यालया, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रा, शिक्षक

प्रशिक्षण सस्थाओं में व्यावहारिक एव उपयुक्त शिक्षण विधियां तथा अधिगम क्रियाओं का विकसित करके परीक्षण किए जाने का क्षेत्र अछूता सा पड़ा है। आयातित विधियां व सकल्पनाओं पर निर्भरता कहां तक उचित कही जा सकती ? एम एड अनुसधाताओं से न सही सबद्ध शिक्षा सस्थाओं/सस्थानों से तो इस पक्ष पर विशेष अपेक्षा की ही जा सकती है।

व्यक्तित्व शिक्षा में मनोविज्ञान की एकांतिक महत्ता स्वय सिद्धा की उपपत्ति है। पश्चिमी शिक्षा मनोविज्ञान में इसीलिए व्यक्तित्व और अधिगम पर स्वतंत्र अनुसधान सम्बन्धी कार्य बहुतायत से सपादित हुआ है। राजस्थान में भी लगभग यही स्थिति दिखाई पड़ती है। व्यक्तित्व के विविध पक्षों को लेकर उसके विभिन्न विशेषकों और घटकों के मापन और निर्धारण का प्रयास विदेशी या भारतीयकृत विदेशी उपकरणों के माध्यम से किया गया है। यह कहा जाना कठिन है कि एम अनुसधान शिक्षक को किस सीमा तक लाभ पहुँचा सकेंगे मगर समस्याग्रस्त और अपराधी मनोवृत्ति के छात्रों की पहचान के लक्षण उसे जरूर मालूम हो सकते हैं—बशर्ते कि अनुसधान के तथ्य निर्विवाद हो और सर्वथा निरपवाद हो। तदर्थ इस क्षेत्र में अनुसधानों के लिए समुचित न्यादर्श का चुनाव करके अध्ययन करने तथा विश्वसनीय उपकरणों का निर्माण किए जाने की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्र तथा पिछड़े बालकों के न्यादर्श को लेकर भी व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों का अध्ययन अपेक्षित है। इस क्षेत्र में भारतीय परिवेश की पृष्ठभूमि में उपकरणों के निर्माण एव मानकीकरण के कार्य की तो अनुसधाताओं से विशेष अपेक्षा है।

शैक्षिक सम्प्राप्ति के सह सम्बन्धक अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया में ही एक महत्वपूर्ण विशेषक होता है शैक्षिक सम्प्राप्ति के सह सम्बन्धकों के प्रकारों की जानकारी रखना और उनकी अधिकारी भूमिका का सार्थक नियोजन करना। राजस्थान में अब तक इस क्षेत्र में 59 अध्ययन हो चुके हैं जो सभी एम एड स्तर के हैं। इनके अतिरिक्त चार पांच पी एच डी स्तर के अनुसधान भी उपलब्ध हैं और उनमें बुद्धि (प्रतिभा) आत्मप्रत्यय अभिवृत्ति दुश्चिन्ता, समायोजन, समाजमिति सामाजिक आर्थिक स्तर ग्रामीण/नगरी पर्यावरण विद्यालयी स्थितियां आदि के साथ शैक्षिक सम्प्राप्ति के सह सम्बन्ध भाव खोजे गए है। कहना नहीं होगा कि उनके निष्कर्षों को अध्ययन अध्यापन तथा शिक्षक प्रशिक्षण के साथ मिलाकर यदि हमारे शिक्षक प्रशिक्षक या शिक्षा प्रशासक कोई चेष्टा करें तो उनसे शिक्षा के सुधार में नये आयाम जरूर खोजे जा सकते हैं। सवाल केवल आस्थापूर्वक प्रयोग करने और अनुसधानगत निष्कर्षों को क्रियान्वयन की कसौटी पर परखने का है। विद्यालयी व्यवहार में और विद्यालयी कार्यक्रमों के सयोजन सचालन में निश्चित रूप से इस क्षेत्र के निष्कर्ष शिक्षकों और प्रशासकों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे अगर वे उनमें क्रियान्वयन की उत्सुकता जगा सकें। इतना जरूर है कि अपनी स्थितिजन्य प्रतिबद्धताओं या सीमाओं के कारण अनुसधातागण प्रयोगात्मक साक्ष्य न दे पाए हो मगर जो कुछ उन्होंने वर्ष भर या तीन चार वर्षों तक परिश्रम करके तथ्य खोज निकाले हैं वे क्रियान्वयन के लिए आधार भूमिका तो प्रस्तुत करते ही हैं।

व्यवहार क्षेत्र के कार्यकर्त्ताओं का दायित्व है कि वे उन तथ्यों को क्रियान्वयन के धरातल पर उतारें, जांचे परखें और अनुकूल जान पड़े तो उन्हें अपने नैमित्तिक आचरण में ढालें।

इस संदर्भ में पुरोहित व शेखावत की समीक्षात्मक टिप्पणी उल्लेखनीय है— इस क्षेत्र में हुए अनुसंधानों में अध्ययन अध्यापन तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति वाला उपक्षेत्र बहुत ही दुर्बल रह गया है। यह ठीक है कि बुद्धि और शैक्षिक सम्प्राप्ति का घनिष्ठ सहसम्बन्ध सिद्ध किया गया है तथा यह भी ठीक है कि सामाजिक आर्थिक स्तर का शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रभाव पड़ता है परन्तु इनमें अध्यापक को अपने दैनंदिन कार्य में विशेष सहायता नहीं मिलती। अध्यापक को सहायता तब मिल सकती है, जब अनुसंधान इन प्रश्नों का उत्तर ज्ञात करें कि कौनसी अध्यापन विधियाँ शैक्षिक सम्प्राप्ति को अपेक्षाकृत अधिक उन्नत कर सकती है ? अंग्रेजी तथा गणित विषयों में जिनमें कि माध्यमिक शिक्षा-स्तर पर सम्प्राप्ति का स्तर बहुत नीचा है, अधिक व्यवस्थित अनुसंधानों की अपेक्षा बनी हुई है।..........सहशैक्षिक प्रवृत्तियाँ तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का क्षेत्र भी अधिक नियोजित अनुसंधान की अपेक्षा करता है।

मापन एवं मूल्यांकन मापन और मूल्यांकन अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया की सहज उपपत्ति है। इस क्षेत्र में राजस्थान के अनुसंधाताओं ने अब तक अभिवृत्ति, बुद्धि, अभिक्षमता, अभिरुचि, व्यक्तित्व विद्यालय व्यवस्था आदि के मापन उपकरणों का विकास करने की चेष्टा की है, परीक्षा और परखों के निर्माण, संचालन और सम्प्राप्तियों के मानक तैयार किए हैं, कहीं विदेशी उपकरणों का भारतीय परिस्थितियों में अनुकूलन भी किया है और उनका पुनर्मानकीकरण भी किया है। उन सबकी उपयोगिता से इनकार नहीं किया जा सकता और अगर शिक्षा व्यवस्था उनको सुलभ कराने की दिशा में कुछ कर सके तो विद्यालयी शिक्षा अवश्य उनसे लाभान्वित हो सकती है। परीक्षा और परख सम्बन्धी जो तथ्य और निष्कर्ष इन अनुसंधानों में उभरे हैं, उनका उपयोग करते हुए विद्यालयों की आन्तरिक परीक्षाओं में भी सुधारात्मक दिशा बन सकती है। इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण उपलब्धियों में कुछ नवनिर्मित उपकरणों का उल्लेख सर्वथा समीचीन होगा। वे हैं—अभिवृत्ति मापनी बुद्धि परीक्षण प्रपत्र अभिरुचि मापनी *निदानात्मक परख (भाषा), कुण्ठा प्रतिक्रिया परख मूल्य निर्धारण परख, अध्यापक* व्यवहार-तालिका, अध्ययन आदत तालिका और खेल किट। ये सर्वथा भारतीय पर्यावरण में विकसित और निर्मित हैं तथा इनका उपयोग भावी अनुसंधाताओं तथा शिक्षकों के लिए भी प्रस्तुत्य है।

अपेक्षित अनुसंधानों के सन्दर्भ में प्रो भाजक की टिप्पणी, परीक्षाओं, असफलता व उसके कारणों, छात्रों की विभिन्न विषयों में अशुद्धियों उनकी आवश्यकताओं, अभिवृत्तियों, व्यक्तित्व समायोजन, आपसी सामाजिक संबंध आदि विषयों में और अधिक मूल्यांकन शोध कार्य किए जाने अपेक्षित हैं। खेल शारीरिक विकास आदि क्षेत्रों में मूल्यांकन की तरफ तो शोधकर्ताओं का ध्यान गया ही नहीं,[1] उल्लेखनीय है।

शैक्षिक निर्देशन : राजस्थान में शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य का प्रतिशत अधिकांश अन्य क्षेत्रों की तुलना में सर्वाधिक रहा है। शैक्षिक निर्देशन के क्षेत्र में किए गए कार्यों का लाभ एक ओर शिक्षा समाजशास्त्र के लिए, और दूसरी ओर अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया के लिए उठाया जा सकता है। वहीं समायोजन, अभिरुचियाँ, अध्ययन आदतें, प्रतिभा, सृजनशीलता, अध्ययन में बाधक घटक आदि को लेकर तथ्यान्वेषण हुआ है जो काफी मात्रा तक शिक्षकों, अभिभावकों और प्रशासकों का मार्गदर्शन तो कर ही सकता है। मगर जब तक ये तथ्य सबके ध्यान में नहीं आते और जब तक इन पर क्रियान्वयन तथा प्रयोग की तत्परता नहीं पैदा होती तब तक ये शिक्षा जगत की सेवा नहीं कर सकते, यह सर्वोपरि तथ्य है। शैक्षिक निर्देशन के उपकरणों का निर्माण अनुसंधानकर्ताओं के लिए एक स्वागतेय चुनौती है। शैक्षिक निर्देशन सेवाओं के प्रभाव का आकलन, नए तथ्य, उपकरण निर्माण, प्रतिभाशाली तथा सृजनशील छात्रों के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम निर्माण, विशिष्ट विधियों का विकास करना, शैक्षिक पिछड़ेपन को दूर करने संबंधी कार्यक्रम बनाना, आयुवार तथा विभिन्न स्तरों में राजस्थानी परिवेश में व्यावसायिक निर्देशन सेवाओं का स्वरूप निर्धारण आदि ऐसे पक्ष हैं जो अनुसंधानकर्ताओं से नए प्रयत्नों की अपेक्षा करते हैं।

और भविष्योन्मुखी है—इसका आभास इस क्षेत्र के अनुसंधान हमें कराते हैं। दरअसल वह स्थिति हमें यह सोचने को मजबूर करती है कि आखिर किन उपायों से हम अपनी शिक्षा और उसके मुख्य प्रेरक शिक्षक प्रशिक्षण को भारतीय भूमि पर संस्थापित कर सकेंगे? प्रशिक्षण में नवाचार प्रशिक्षणों की पाठ्यचर्या, प्रशिक्षणों की स्तर वारिता, प्रवेश ग्रहता, शिक्षण अभ्यास की स्थितियाँ, सहयोगी विद्यालयों की दुश्चिंताएँ जैसे प्रकरणों पर और, प्रशिक्षण की व्यवहार में परिणति की स्थिति पर अनुसंधाताओं ने सर्वेक्षणनिष्ठ निष्कर्ष निकाले हैं और एक दो स्थितियों में प्रयोगनिष्ठ तथ्य भी उद्घाटित किए हैं। वे सब मिलकर कम से कम इस क्षेत्र की वास्तविक स्थिति तो बताते ही हैं कुछ मार्गदर्शन भी करते हैं। उनमें शिक्षक प्रशिक्षण को नई दिशा देने और वहां भारतीय विद्यालयों के योग्य व्यावहारिक चर्या विकसित करने के लिए काफी सामग्री मिलती है। मगर जरूरत यह भी है कि हमारे शिक्षक प्रशिक्षणालय अपने बारे में और अपने ही यहाँ सम्पादित अनुसंधानों का स्वयं ही कोई उपयोग कर पाएँ तथा निष्कर्षों के आधार पर कार्यक्रम विकसित करके परीक्षण कर पाएँ। इसके अलावा इस क्षेत्र में विद्यालयी वातावरण व्यवहार और पर्यावरण के संदर्भ में शिक्षण विधियों के इजाद, पाठ्यक्रम के मूल्यांकन शिक्षण साँचों में उसके रूपान्तर पर अध्ययनों की आवश्यकता है और अनौपचारिक शिक्षण विधियों/कार्यक्रमों में भी प्रशिक्षण को प्रवेश करने की जरूरत है।

शिक्षा प्रशासन शिक्षा प्रशासन के क्षेत्र को लेकर सत्ता व अधिकारों का प्रत्यायोजन विभिन्न घटकों में पारस्परिक सम्बन्ध, नवाचार, परिवीक्षण और वित्तीय मुद्दों पर अनुसंधाताओं ने अब तक काम किया है। इनमें भी कार्मिक समस्याओं और कठिनाइयों पर जितना अधिक बल दिया गया है उससे आभास होता है कि शिक्षा प्रशासन मूलतः आर्थिक समस्याओं और मानवीय सम्बन्धों की ग्रंथियों से ही अधिक ग्रस्त है और शैक्षिक कही जा सकने लायक स्थिति उस प्रशासन के दायरे में अभी तक आ नहीं पाई है। इस क्षेत्र में शायद शैक्षिक आयोजन और नियोजन के समावेश की स्थिति बनी ही नहीं है न किसी अधिकार प्रत्यायोजन के प्रयोग का साहसी समावेश हो पाया है। निजी संस्थाओं का दायरा और पंचायत समितिगत शिक्षा प्रशासन का दायरा भी अछूता रह गया है जबकि ये क्षेत्र ज्वलंत समस्याओं से त्रस्त हैं। अनौपचारिक शिक्षा का आयाम अपेक्षाकृत नया है यह कहकर उसकी अनुपस्थिति को क्षम्य कहा जा सकता है किन्तु शिक्षाधिकारियों शिक्षकों तथा छात्रों के बीच सम्बन्धों के प्रत्यायोजन, सहकारिता, प्रयोगशीलता, विकेन्द्रीकरण इत्यादि के पक्ष भी अनुसंधाताओं का ध्यान आकर्षित क्यों नहीं कर पाए यह विस्मयकारक है। वित्तीय व्यवस्थापन और नियोजन पर भी अनुसंधानों की कमी खटकती है। अब जब कि शिक्षा विभाग ने प्रशासनिक अधिकारों का विकेन्द्रीकरण कर दिया है, तथा वित्तीय अधिकारों का नया प्रत्यायोजन हो गया है, तो इन प्रकरणों पर सघन और सतत सर्वेक्षणों की जरूरत है।

इस क्षेत्र में यद्यपि शोधकर्ताओं की सर्वाधिक रुचि का विषय संभवतः प्रशासन में मानवीय पक्ष रहा है, किन्तु शिक्षा प्रशासन के किसी मॉडल को आधार बनाकर

शैक्षिक निर्देशन : राजस्थान में शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य की प्रगति अधिकांश अन्य क्षेत्रों की तुलना में सर्वाधिक हो सकती है। शैक्षिक निर्देशन के क्षेत्र में किए गए कार्यों का लाभ एक ओर शिक्षा समाज दोनों के लिए, और दूसरी ओर अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया के लिए उपयोगी हो सकता है। यहाँ समजन प्रतिक्रियाएँ अध्ययन आदतें प्रतिभा सृजनात्मकता अध्ययन में बाधक घटक आदि का गहन अध्ययन हुआ है जो बालकों तक शिक्षा, प्रतिभा और प्रतिभाओं का मार्गदर्शन तो कर ही सकता है। मगर जब तक ये तथ्य सबके ध्यान में नहीं आते और जब तक इन पर क्रियान्वयन तथा प्रयोग की वास्तविकता नहीं होती तब तक ये शिक्षा जगत की सेवा नहीं कर सकते यह सर्वोपरि तथ्य है। शैक्षिक निर्देशन के उपकरणों का निर्माण अनुसंधानकर्ताओं के लिए एक रोचक चुनौती है। शैक्षिक निर्देशन सेवाओं के प्रभाव का मूल्यांकन तथा समस्त उपकरण निर्माण, प्रतिभाशालियों तथा सृजनात्मक छात्रों के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम निर्माण, विशिष्ट विधियों का विकास करना, शैक्षिक पिछड़ेपन को दूर करने संबंधी कार्यक्रम बनाना, आदिवासी तथा पिछड़े क्षेत्रों में राजस्थानी परिवेश में व्यावहारिक निर्देशन सेवाओं का स्वरूप निर्धारण आदि ऐसे क्षेत्र हैं जो अनुसंधानकर्ताओं से साथ सार्थकता की अपेक्षा करते हैं।

व्यावसायिक निर्देशन : व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र में अनुसंधानकर्ताओं ने छात्रों की व्यावसायिक अभिरुचियों एवं सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में जाना है आर्थिक स्तर का सार्थक अभिवृत्तियों का स्तर का है व्यवसायों के सार्थक आकलन का माना है और यह भूमिका बनाने का प्रयत्न किया है कि अगर हम शिक्षा को व्यवसायोन्मुखी बनाना चाहें तो किन बातों का ध्यान रखें किन व्यवसायों के लिए प्रावधान रखें आदि। किन्तु विभिन्न स्तरों पर कार्यानुभव शिक्षोपरान्त व्यवसाय सामान्य कक्षाओं पाठ्यक्रम विस्तृत तथा महाविद्यालय स्तर जैसे क्षेत्रों में विभिन्न स्तर के छात्र छात्राओं की रुचियों, क्षमताओं एवं समायोजन समस्याओं को उनके समाधान की जरूरत अभी तक बाकी है।

व्यावसायिक निर्देशन कार्यक्रमों के संदर्भ में अध्यापकों प्रधानाध्यापकों शिक्षक प्रशिक्षकों शिक्षाधिकारियों आदि की रुचियों आकांक्षाओं तथा भूमिका का गहन अनुसंधान कार्य अपेक्षित है। अनुसंधानकर्ताओं के लिए यह भी चुनौती है कि वे ऐसे उपकरणों का निर्माण करें जिनकी सहायता से भिन्न भिन्न स्तरों पर बालकों की व्यावसायिक रुचियों/अभिरुचियों का पता लगाया जा सके। व्यावसायिक निर्देशन के लिए उपयुक्त एवं व्यावहारिक कार्यक्रम निर्माण करना भी अनुसंधानकर्ताओं के लिए एक रोचक एवं अछूता आयाम है।

शिक्षक-प्रशिक्षण : राजस्थान में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा स्तरों पर शिक्षक प्रशिक्षण की मात्रात्मक स्थिति तो असन्तोषजनक नहीं कही जा सकती, मगर गुणात्मक स्तर पर वह कितना गतिशील है कितना युगीन सापेक्ष है, समसामयिक

और भविष्योन्मुखी है—इसका आभास इस क्षेत्र के अनुसंधान हमें कराते हैं। दरअसल वह स्थिति हम यह सोचने को मजबूर करती है कि आखिर किन उपायों से हम अपनी शिक्षा और उसके मुख्य प्रेरक शिक्षक प्रशिक्षण को भारतीय भूमि पर संस्थापित कर सकेंगे? प्रशिक्षण में नवाचार प्रशिक्षणों की पाठ्यचर्या, प्रशिक्षणों की स्तरवारिता, प्रवेश ग्रहता, शिक्षण अभ्यास की स्थितियां, सहयोगी विद्यालयों की दुश्चिंताएँ जैसे प्रकरणों पर और, प्रशिक्षण की व्यवहार में परिणति की स्थिति पर अनुसंधाताओं ने सर्वेक्षणनिष्ठ निष्कर्ष निकाले हैं और एक-दो स्थितियों में प्रयोगनिष्ठ तथ्य भी उद्घाटित किए हैं। वे सब मिलकर कम से कम इस क्षेत्र की वास्तविक स्थिति तो बताते ही हैं, कुछ मार्गदर्शन भी करते हैं। उनमें शिक्षक प्रशिक्षण को नई दिशा देने और वहां भारतीय विद्यालयों के योग्य व्यावहारिक चर्या विकसित करने के लिए काफी सामग्री मिलती है। मगर जरूरत यह भी है कि हमारे शिक्षक प्रशिक्षणालय अपने बारे में और अपने ही यहां सम्पादित अनुसंधानों का स्वयं ही कोई उपयोग कर पाएँ तथा निष्कर्षों के आधार पर कार्यक्रम विकसित करके परीक्षण कर पाएँ। इसके अलावा इस क्षेत्र में विद्यालयी वातावरण, व्यवहार और पर्यावरण के संदर्भ में शिक्षण विधियों के इजाद, पाठ्यक्रम के मूल्यांकन, शिक्षण सांचों में उसके रूपान्तर पर अध्ययनों की आवश्यकता है और अनौपचारिक शिक्षण विधियों/कार्यक्रमों में भी प्रशिक्षण का प्रवेश कराने की जरूरत है।

शिक्षा प्रशासन शिक्षा प्रशासन के क्षेत्र को लेकर सत्ता व अधिकारों का प्रत्यायोजन विभिन्न घटकों में पारम्परिक सम्बन्ध, नवाचार, परिवीक्षण और वित्तीय मुद्दों पर अनुसंधाताओं ने अब तक काम किया है। इनमें भी कार्मिक समस्याओं और कठिनाइयों पर जितना अधिक बल दिया गया है उससे आभास होता है कि शिक्षा प्रशासन मूलतः आर्थिक समस्याओं और मानवीय सम्बन्धों की प्रक्रिया से ही अधिक ग्रस्त है और शैक्षिक कही जा सकने लायक स्थिति उस प्रशासन के दायरे में अभी तक आ नहीं पाई है। इस क्षेत्र में शायद शैक्षिक आयोजन और नियोजन के समावेश की स्थिति बनी ही नहीं है न किसी अधिकार प्रत्यायोजन के प्रयोग का सार्थक समावेश हो पाया है। निजी संस्थाओं का दायरा और पंचायत समितिगत शिक्षा प्रशासन का दायरा भी अछूता रह गया है जबकि ये क्षेत्र ज्वलंत समस्याओं से ग्रस्त हैं। अनौपचारिक शिक्षा का आयाम अपेक्षाकृत नया है यह कहकर उसकी अनुपस्थिति को क्षम्य कहा जा सकता है किन्तु शिक्षाधिकारियों शिक्षकों तथा छात्रों के बीच सम्बन्धों के प्रत्यायोजन, सहकारिता, प्रयोगशीलता, विकेन्द्रीकरण इत्यादि के पक्ष भी अनुसंधाताओं का ध्यान आकर्षित क्यों नहीं कर पाए यह विस्मयकारक है। वित्तीय व्यवस्थापन और नियोजन पर भी अनुसंधानों की कमी खटकती है। अब जब कि शिक्षा विभाग ने प्रशासनिक अधिकारों का विकेन्द्रीकरण कर दिया है तथा वित्तीय अधिकारों का नया प्रत्यायोजन हो गया है, तो इन प्रकरणों पर सघन और मनन सर्वेक्षणों की जरूरत है।

इस क्षेत्र में यद्यपि शासकताओं का सर्वाधिक रुचि का विषय सम्बन्ध प्रशासन में मानवीय पक्ष रहा है, किन्तु शिक्षा प्रशासन के क्रिया मानव को आधार बनाकर

शोध प्रयास नगण्य से रहे हैं जबकि ज्ञान के विकास की दृष्टि से ये महत्वपूर्ण न था। इस दृष्टि से गेट्ज़ेल्स व कोलाडार्सी (Getzels and Coladarci) द्वारा स्थापित शिक्षा प्रशासन सम्बन्धी प्रमेय (Theory) बहुत उपयोगी हो सकता है। जिन शोधकर्ताओं का अधिकतर जोर सैद्धान्तिक अनुसंधानों पर रहा जबकि शिक्षा प्रशासन के विभिन्न विशिष्ट पक्षों के प्रकरण अध्ययन शिक्षा प्रशासन में सुधार की दृष्टि से अधिक उपयोगी होंगे।

वर्तमान दशक एवं विगत दशकों में शिक्षा प्रशासन की विशिष्ट समस्याओं एवं प्रयोगात्मक विद्यालयों के सन्दर्भ में प्रशासनिक समस्याओं, शिक्षा को सार्वजनीन बनाने तथा शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने के मार्ग में अनुभूत समस्याओं के स्वरूप निर्धारण तथा समाधान खोजने की दिशा में अनुसंधानों की आवश्यकता बनी हुई है। शिक्षा सुधार कार्यक्रमों के परिप्रेक्ष्य में तथा विद्यालयों में शिक्षा सुविधाओं के विस्तार के सन्दर्भ में शिक्षा प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका तथा उसके स्वरूप निर्धारण के प्रयोजन को लेकर अनुसंधान किए जाने चाहिए। जिन सामाजिक परिवर्तनों के सन्दर्भ में शिक्षा प्रशासन का ढाँचा कैसा हो, उसका स्वरूप क्या हो, आदि ऐसे प्रश्न हैं जो अनुसंधानों से उत्तर की अपेक्षा रखते हैं। शिक्षा के प्रसार तथा शिक्षा के बदलते-बढ़ते दायित्वों की पृष्ठभूमि में जिला शिक्षाधिकारियों के कार्यभार, कार्य प्रक्रिया आदि पक्ष उपेक्षित रहे हैं।

विद्यालय व्यवस्था : शिक्षा प्रशासन का एक उपांग विद्यालय व्यवस्था को माना है जिसमें विद्यालयों का सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण, मानवीय सम्बन्ध, कार्मिक सम्बन्ध और सामुदायिक सम्पर्क के महत्वपूर्ण आयाम आते हैं। मगर इस क्षेत्र में अनुसंधानों ने संस्थागत योजनाएँ, पत्राचार, विद्यालयी कार्यक्रम, सहगामी प्रवृत्तियाँ, कार्मिक सम्बन्ध जैसे प्रकरणों पर ही अनुसंधान किए हैं और समय विनियोजन, स्तर अनुसार उनकी उपादेयता के प्रसंग में अन्तःव्यवहार, शैक्षिक सामाजिक वातावरण आदि के प्रकरण अछूते छोड़ दिए हैं। प्रशासनिक समस्याओं पर जो हुए अध्ययनों में कोई उपयोगी तथ्य प्रकाश में आए हैं मगर उनके आधार से नया मोड़ या सुधार की कोई दिशा नहीं बनती। जरूरत इस बात की है कि विद्यालय व्यवस्था के विभिन्न प्रकरणों पर गहन पर्यावलोकी अध्ययन हों और उनके आधार पर कुछ प्रयोगनिष्ठ कार्य भी किए जाएँ। वास्तविक रूप से देखा जाए तो विद्यालयी व्यवस्था में योजनाबद्ध कार्यक्रम, मानवीय सम्बन्ध, नीति का पुनर्गठन, सामुदायिक सम्पर्क और सह जीवन के उत्तम सार्वजनीनता के उद्देश्यों में विद्यालय का प्रवेश, लोकतांत्रिक राष्ट्रीय संस्था और आदर्श नागरिकता के जन जन तक इनका प्रसार—ये सब ऐसे दायित्व हैं जिनकी उपेक्षा करके विद्यालय व्यवस्था नहीं चल सकती। विद्यालयों को आदर्श बनाने में अब, उन परिस्थितियों में इन बातों को अन्वेषित किया जाना चाहिए और शैक्षिक जगत को इन दिशाओं में विचाराधीन होना चाहिए।

समाज शिक्षा : समाज शिक्षा और प्रौढ़ तथा व्यावसायिक निर्देशन हमारी शिक्षा में अभी नए परिशिष्टात्मक क्षेत्र हैं और अभी तक विद्यालयी शिक्षा धारा

म व पूरी तरह सम्पृक्त भी नही हो पाए हैं। निर्देशन की तुलना म समाज शिक्षा के क्षेत्र म अनुसधाना का योगदान एम एड स्तर पर उतना नही है जितना समाज शास्त्र या प्रौढ शिक्षा सकाया के स्तर पर है। इन अनुसधाना म जो दृष्टि रही है वह विभिन्न समाज शिक्षा कायक्रमा के सर्वेक्षण या सवीक्षण की रही है मगर सतत शिक्षा, आजीवन शिक्षा और विद्यालयी शिक्षा की त्रिवेणी का सगम कहा हो, कम हो, हो भी या नहीं, कोई एसा प्रयोगनिष्ठ अनुसधान अभी तक हुआ नही है न ऐसा जो भारतीय परिस्थितियो म भारतीय समाज शिक्षा के स्वरूप निर्माण मे कोई मदद कर सक। अब, जब कि सावजनीन शिक्षा के लिए अनौपचारिक शिक्षा उपक्रम, क्रियाशील किसान साक्षरता नेहरू युवक केन्द्र, आजीवन शिक्षा आदि विविध प्रयोजनमूलक कायक्रम जोर पकड रहे हैं तब समाज शिक्षा के क्षेत्र को शिक्षा के मुख्य प्रवाह का समानातर उपप्रवाह मानकर नहीं चला जा सकगा। चेष्टा यह रखनी आवश्यक है कि विद्यालयी शिक्षा और समाज शिक्षा अन्त ग्र थित होकर चलें और अनुसधाना उस दिशा म अधिक सजग और सक्रिय हो। इसके साथ ही साथ समाज शिक्षा म निरत निजी और स्वायत्तशासी सस्थाओ पर भी विशद खोजबीन होनी जरूरी है।

शिक्षानुसधान की गतिविधियाँ

1970 के बाद का काल शिक्षानुसधान की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जा सकता है। शिक्षानुसधान की गतिविधियाँ मुख्यत दो प्रयोजना को लेकर चल रही हैं ज्ञान के विकास का प्रयोजन तथा तात्कालिक समस्याओ के लिए वध तकसम्मत एव उपयुक्त समाधान खोजने का प्रयोजन। ज्ञान के विकास को लेकर राजस्थान म पाँच शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय (एम एड एव पीएच डी उपाधि की तयारी के निमित्त से) सक्रिय हैं। साथ ही एम एड स्तर पर तात्कालिक समस्याओ के लिए समाधान खोजने का प्रयोजन उत्तरोत्तर बल पकडने लगा है। उधर व्यावहारिक समस्याओ के समाधान खोजने के उद्देश्य को लेकर जहाँ एक ओर राज्य शिक्षा सस्थान सक्रिय है वही शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय भी अनुदान/सहायता से अनुसधान प्रायोजनाओ पर काय करते हैं।

कुछ समय से शिक्षा विभाग की इसम ली गई रुचि ने शिक्षानुसधान की गतिविधियो म एक रोचक एव महत्वपूर्ण आयाम जोड दिया है। प्राय यह अनुभव किया जाता था कि उपाधि प्राप्त करने के बाद शिक्षानुसधानागण निष्क्रिय म हो जाते थे। जहाँ एक ओर यह आवश्यकता थी कि उनके ज्ञान को अभिनवीकरण होता रहे उन्हे अनुसधान कुशलता के प्रयोग के अवसर मिलत रहे वहाँ यह आवश्यकता भी अनुभव की गई कि उनके ज्ञान व कुशलता का अनुभूत शिक्षा समस्याओ के समाधान ढूँढने की दिशा म वस्तुत उपयोग किया जाए। इससे एक लाभ यह भी सोचा गया कि वे अपनी भूमिका निबाहने म भी वज्ञानिक दृष्टिकोण रखेंगे। शिक्षा विभाग की पहल तथा उत्प्रेरणा से अब लगभग सभी जिलो म शिक्षानुसधाता वाकपीठो का गठन हो गया है। शिक्षानुसधाता वाक्पीठ (District Education Researchers

Forum) में जिनके सम्मेलन, गोष्ठी द्वारा एवं क्रियानुसंधान में रुचि व तत्परता रखने वाले अध्यापक/प्रधानाध्यापक होते हैं। उनसे अपेक्षा है कि वे व्यक्तिगत स्तर पर अथवा सामूहिक स्तर पर अनुभूत शिक्षा समस्या को लेकर अनुसंधान कार्य करें। राज्य शिक्षा संस्थान के निर्देशन में उन्हें उल्लेखनीय प्रोत्साहन मिला है। फलस्वरूप काफी संख्या में क्रियानुसंधान कार्य हुए यद्यपि उन्हें इस पुस्तक में सम्मिलित नहीं किया जा सका है। किन्तु एक ओर कार्य की व्यापकता को देखते हुए तथा दूसरी ओर से अभिकरणों को भी इस कार्य में संलग्न करने की दृष्टि से राजस्थान को तीन क्षेत्रों में बाँटा गया है और इस निर्देशन/प्रशिक्षण कार्य में राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय अजमेर तथा राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानेर को भी राज्य शिक्षा संस्थान के साथ संलग्न किया गया है। अब अपने अपने निर्धारित क्षेत्र में क्रियानुसंधानों का प्रशिक्षण देने का दायित्व इन तीनों अभिकरणों का है।

राज्य में शिक्षानुसंधान की गतिविधियों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान की रुचि लेना भी एक महत्वपूर्ण आयाम है। बोर्ड अपनी रुचि की समस्याओं पर शोधकार्य करने हेतु अनुदान की व्यवस्था करता है। अनुदान देकर शोध कार्य को प्रोत्साहित करने में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद का योगदान तो महत्वपूर्ण रहा ही है।

इस प्रकार राजस्थान में शिक्षानुसंधान की गतिविधियों में उल्लेखनीय त्वरा आई है। एक ओर शैक्षिक विभाग के प्रयोजन को लेकर तो दूसरी ओर अनुभूत समस्याओं का तात्कालिक समाधान खोजने के प्रयोजन को लेकर तथा तीसरी ओर के रागन समस्याओं का तात्कालिक समाधान अथवा क्रियात्मक परिकल्पनाओं का परीक्षण करने की दृष्टि से अनुसंधान कार्य हो रहे हैं। अनावश्यक दुहराव न हो, श्रम व शक्ति का अनावश्यक अपव्यय न हो, प्राप्त निष्कर्षों एवं किए हुए कार्यों का अन्य अनुसंधानकर्ता लाभ उठाकर आगे बढ़ें इस दृष्टि से समन्वय की आवश्यकता थी। शिक्षा निदेशालय शिक्षा विभाग राजस्थान ने इस समस्या को अनुभव किया तथा निदेशालय स्तर पर राज्य स्तरीय शोध प्रकोष्ठ की स्थापना 1973 में की गई। प्रस्तुत कार्य राज्य स्तरीय शोध प्रकोष्ठ की समन्वयक भूमिका का एक अंग है।

एम एड स्तर पर किए शिक्षानुसंधान के निष्कर्षों की वैधता एवं विश्वसनीयता संदिग्ध मानी जाती है। फलतः इनसे प्राप्त निष्कर्षों से लाभ उठाने में संकोच रहता है। फिर शिक्षानुसंधान व्ययसाध्य, श्रमसाध्य एवं समयसाध्य होता है। एम एड छात्रों अथवा संस्थाओं को साधन की सीमाओं के कारण प्रादर्श चयन को समुचित रूप में व्यापक एवं प्रतिनिधि बनाने के मार्ग में बचत की विवशता उठानी पड़ती है। इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर वैध एवं विश्वसनीय अनुसंधान किए जा सकने की संभावना बढ़ सकती है यदि इस प्रयोजन से विभिन्न स्तरों पर उपलब्ध साधन सुविधाओं, ज्ञान व कौशल को सामुदायिक रूप में नियोजित किया जाए। इस दिशा में जो इक्के-दुक्के प्रयास हुए हैं उनकी सफलता से शिक्षानुसंधान को सामूहिक स्तर पर किए

जाने का औचित्य सिद्ध होता है। 1966 में विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर में कतिपय एम एड शोधकर्ताओं ने विभिन्न सामाजिक परिवेश की स्थितियों में चल रहे माध्यमिक विद्यालयों पर शोध अध्ययन किया। संस्था स्तर पर भी इसी प्रकार राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर तथा जिला शिक्षा निरीक्षणालय चित्तौड़गढ़ द्वारा 1972 में विद्यालय संगम के भिन्न भिन्न पक्षों को लेकर अध्ययन किए गए तथा निष्कर्षों को समाहित करके शोध अध्ययन प्रस्तुत किया गया। ऐसे प्रयोग, विशेष रूप से व्यावहारिक समस्याओं को लेकर, और भी सफलतापूर्वक किए जा सकते हैं, किए जाने का औचित्य है किए जाने अपेक्षित हैं—एम एड स्तर पर भी, संस्था अभिकरण स्तर पर भी और जिला शिक्षानुसंधाता वाकपीठ स्तर पर भी। आयोजन एवं विश्लेषण संबंधी निर्णय मिल-बैठकर किए जा सकते हैं। साथ ही शिक्षानुसंधाता संबंधी सूचनाओं के समुचित प्रकाशन प्रसारण की महत्ता की ओर भी पिछले कुछ समय से ध्यान गया है तथा राज्य शैक्षिक शोध प्रकोष्ठ इस दिशा में सजग एवं प्रयत्नशील भी है।

कुल मिलाकर राजस्थान में शिक्षानुसंधान की स्थिति काफी सुदृढ़, व्यवस्थित तथा आशावादी दिखाई देती है। शिक्षानुसंधान के लिए अभिकरणों/संस्थाओं का एक व्यवस्थित ढांचा खड़ा हो चुका है। कक्षा में कार्यरत शिक्षक के लिए भी शिक्षानुसंधान उपयोगी हो सके, शिक्षानुसंधान में निहित वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर सामान्य शिक्षक भी इन विधियों का अपनी रोजमर्रा की समस्याओं के समाधान के लिए प्रयुक्त कर सके, इस प्रयोजन से सुनियोजित प्रयत्न चल रहे हैं। शिक्षानुसंधाताओं को समुचित निर्देशन एवं प्रोत्साहन मिले, इसके लिए भी प्रयत्न चल रहे हैं। फिर भी आवश्यकता है कि इस क्षेत्र में प्रयत्न और व्यवस्थित हों, सम्पन्न प्रयत्नों का लाभ उठाते हुए आगे सुविचारित ढंग से गहन अध्ययन की नीति अपनाई जाए, तो राजस्थान शिक्षानुसंधान के क्षेत्र में और भी अधिक योगदान दे सकेगा—शिक्षा समस्याओं के समाधान के लिए आधार जुटा सकेगा।

शिक्षानुसंधान की आवश्यकता एवं महत्ता के प्रति उत्तरोत्तर बढ़ती जागरूकता एवं रुचि निश्चय ही शिक्षानुसंधान को उसके दायित्व निर्वहन के अवसर प्राप्त कराने में सहायक हो सकेगी।

□ इन्द्रजीत खन्ना
□ डा० पन्नालाल वर्मा

शिक्षा-दर्शन एवं शिक्षा समाजशास्त्र

□ रवीन्द्र अग्निहोत्री
□ वीरेन्द्र सभरवाल

शिक्षा-दर्शन

शिक्षा-दर्शन के क्षेत्र में अनुसंधान करने के इच्छुक व्यक्ति को सबसे पहले जिस कठिनाई का सामना करना पड़ता है वह है—शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी अनुसंधान के लिए उपयुक्त सैद्धान्तिक मॉडल। शोध करने के मॉडल जैसे अन्य कतिपय अनुशासनों के लिए उपलब्ध हैं वैसे शिक्षा-दर्शन के लिए नहीं। सम्भवतः इसी कारण शिक्षानुसंधान के इस क्षेत्र में अन्य किसी भी क्षेत्र की अपेक्षा सबसे कम अनुसंधान हुए हैं। राजस्थान में किए गए शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी अनुसंधान-कार्यों का सिंहावलोकन करने पर प्रथम अनुभूति यह होती है कि अनुसंधान की दृष्टि से यह क्षेत्र अत्यन्त उपेक्षित रहा है। इसका एक अन्य कारण यह भी हो सकता है कि इस क्षेत्र में अनुसंधान करने के लिए जिस वैचारिक परिपक्वता की आवश्यकता है वह इस क्षेत्र में कई वर्षों तक कार्य करने के परिणाम स्वरूप ही प्राप्त हो सकती है।

समीक्ष्य युग में (1974 तक) केवल तीन उपक्षेत्रों में ही कार्य हुआ और वह भी इस शताब्दी के छठे दशक में (क) दार्शनिकों के शिक्षा-दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन (ख) शिक्षा की विभिन्न विचारधाराओं का ऐतिहासिक विकास परक अध्ययन तथा (ग) विशिष्ट दार्शनिक विचारधाराओं पर आधारित शिक्षण संस्थाओं के कार्य का समीक्षात्मक अध्ययन। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम माथुर (1953) ने शिक्षा की गुरुकुल पद्धति पर अध्ययन किया। उनके निष्कर्ष के अनुसार गुरुकुल पद्धति अपने प्राचीन मूल रूप में तो आधुनिक युग के लिए सर्वथा असंगत है पर उसके कतिपय मूल्यों को आधुनिक शिक्षा पद्धति में समाविष्ट करना सम्भव भी है और प्रकाम्य भी। वे मूल्य हैं—आत्मसंयम, ब्रह्मचर्य, परिश्रम युक्त सादा जीवन, अध्यापक विद्यार्थी के निकट सम्बन्ध, अनुशासन एवं चरित्र। गुप्ता (1955) ने भारत में बुनियादी शिक्षा के विकास का सर्वेक्षण करते हुए यह विश्वास व्यक्त किया कि भारत के लिए बुनियादी शिक्षा प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर एकमात्र अनुकूल शिक्षा पद्धति थी तथा इसका सीधा सम्बन्ध सामाजिक पुनर्रचना और राष्ट्रीय नैतिक एवं बौद्धिक पुनरुत्थान से था। इसकी असफलता के दो मुख्य कारण थे—पुष्ट दार्शनिक आधार का अभाव तथा शिल्प के माध्यम से सभी विद्यालयी विषयों के अध्यापन की कठिनाई। योगेन्द्रजीत (1958) ने

रवीन्द्र नाथ टगोर के शक्षिक विचारों का विकासात्मक दृष्टि से अध्ययन किया । उनके अनुसार टगोर का उद्देश्य था—अतीत और वतमान की उपलब्धियों का स्वस्थ और नवीन समन्वय । इसके लिए टगोर ने धम को आध्यात्मिक अनुभूति की प्रक्रिया माना तथा भारतीय सस्कृति को पुनर्जीवित करने पर बल दिया, टगोर के य शक्षिक विचार तत्कालीन सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलनों के तथा सामाजिक जाग्रति के सवथा अनुकूल थे ।

शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी उपयु क्त तीनों अनुसधानों म दार्शनिक पक्षों के लिए जो गहन विवेचना अपक्षित है, यहाँ उसका अभाव है ।

सम्भावनाएँ और सुझाव

वतमान भारतीय समाज की आवश्यकताओं को ध्यान म रखते हुए शिक्षा दर्शन के क्षेत्र म निम्नलिखित आयामों म अध्ययनों की अधिक आवश्यकता है (1) शिक्षा प्रक्रिया के विभिन्न आयामों के दार्शनिक निहिताथ (जसे—शक्षिक उद्देश्यों का पुनस्थापन, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, मूल्यांकन, निर्देशन शिक्षा का परिवेश) (2) विशिष्ट दार्शनिक विचारधाराओं पर आधारित शिक्षण-सस्थाओं के कार्यों का समीक्षात्मक अध्ययन (3) आधुनिक—विशेषतया भारतीय दार्शनिकों के शिक्षा-दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन अनुशीलन, व्याख्या एव मूल्यांकन तथा (4) शिक्षानुसधानों की दार्शनिक विवेचना । उल्लिखित सबसे अन्तिम आयाम का सबसे कम महत्व का न समझ लिया जाए । वस्तुत शिक्षा सम्बन्धी सभी प्रश्न मूलत दार्शनिक होते हैं । अत शिक्षानुसधान का मूल्यांकन दार्शनिक दृष्टिकोण से होना अपक्षित है । निश्चय ही इस प्रकार के अध्ययन से शिक्षानुसधान को सही दिशा निर्देश हो सकेगा ।

शिक्षा समाजशास्त्र

यद्यपि ऐतिहासिक विकास क्रम मे शिक्षा के अन्तसम्बन्धों की पहचान समाजशास्त्र की अपेक्षा दर्शन के प्रसग म पहले हो गई थी, तथापि शिक्षानुसधान की दृष्टि से, समीक्ष्य युग म शिक्षा दर्शन की अपेक्षा शिक्षा समाजशास्त्र म शोधकाय अधिक हुआ है । यदि शिक्षानुसधान के अन्य क्षेत्रों के कार्यों से तुलना की जाए तो शिक्षा समाजशास्त्र के क्षेत्र म अभी काय कम ही हुआ है । इस क्षेत्र म अनुसधान का श्रीगणेश दलिया (1953) ने किया था, और उसके बाद से इसकी लोकप्रियता बढती गई है । सन् 1953 से लेकर अब तक बीच के केवल दो वर्षों (1963 तथा 1964) को छोड कर, इस क्षेत्र म निरन्तर शोधकाय हो रहा है । सबसे अधिक शोधकाय सन् 1966 म हुआ, जब शिक्षा समाजशास्त्र के विविध पक्षों पर नौ अनुसधान काय सम्पन्न हुए ।

उपलब्ध शिक्षानुसधानों की दृष्टि से शिक्षा समाजशास्त्र के जो प्रमुख उपक्षेत्र हो सकते हैं वे हैं समाजीकरण सामाजिक व्यवस्था के रूप म विद्यालय सामाजिक सरचना का सघटक विद्यालय, विद्यालयों पर सामाजिक नियन्त्रण सामाजिक परिवतन तथा विद्यालय, विद्यार्थी समाज भारतीय समाज अध्यापक समाज, जनसख्या प्रवृत्तियाँ आर्थिक, सामाजिक तथा विभिन्न सामाजिक समूह ।

भारतीय समाज को समझने का प्रयास करने वाले अन्य पाठ्यचर्याओं की तुलना में शिक्षाचर्या के क्षेत्र में अधिक अनुसंधान हुए हैं। इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा को समाजशास्त्र में जो रुचि लेना चाहिए वह शिक्षा के विद्यार्थी ले रहे हैं।

इन सभी अध्ययनों में प्रायः सर्वेक्षण विधि का ही प्रयोग किया गया है। न्यादर्श साहेश्य मगर आकस्मिक रहे हैं। अधिकांश अध्ययनों में न्यादर्श राजस्थान का ही है। केवल 4 प्रतिशत अध्ययन ऐसे हैं जिनमें राजस्थान से बाहर का भी न्यादर्श लिया गया है। अधिकांश अध्ययनों में माध्यमिक/उच्च माध्यमिक विद्यालयों से न्यादर्श लिया गया और महाविद्यालय स्तर के न्यादर्श को लेकर 6 प्रतिशत अध्ययन किए गए हैं। सभी अध्ययन गुणात्मक हैं, सांख्यिकी कार्य इनमें अधिक नहीं किया गया है। सांख्यिकी कार्य जितना किया गया है वह विवरणात्मक है निष्कर्षात्मक नहीं। किसी भी अध्ययन में उच्च सांख्यिकी पद्धतियाँ जैसे—एफ रेशियो, अनालिसिस ऑफ वेरियंस नान पैरामीट्रिक सांख्यिकी आदि का प्रयोग नहीं मिला। समाजमिति अध्ययनों में समाजमिति उपकरणों का प्रयोग किया गया है।

दत्त सामग्री के संकलन के लिए प्रायः मानक उपकरणों का ही प्रयोग किया गया है। इनमें मुख्य हैं सामाजिक आर्थिक-स्तर मापनी प्रश्नावली साक्षात्कार (संरचित तथा असंरचित दोनों) प्रेक्षण अनुसूची, संप्राप्ति परीक्षाएँ। कुछ शोधकर्ताओं ने कतिपय अन्य प्रचलित उपकरणों का भी उपयोग किया है। जहाँ उपयुक्त उपकरण उपलब्ध नहीं हुआ वहाँ शोधकर्ताओं ने स्वयं भी आवश्यक उपकरणों का निर्माण किया है।

समाजीकरण

समाजीकरण संबंधी अध्ययनों के अन्तर्गत श्रीमाली (1954) ने ग्रामीण और शहरी परिवारों के बालकों की बुद्धि पर पड़ने वाले आर्थिक-सामाजिक कारकों के प्रभाव का अध्ययन करने पर पाया कि चाहे ग्रामीण क्षेत्र हो चाहे शहरी, अच्छे आर्थिक परिवारों से आने वाले बालक शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ हैं शहरी बच्चों की संवेगात्मक स्थिरता ग्रामीण बालकों की अपेक्षा अच्छी है, पर चारित्रिक विकास की दृष्टि से शहरी तथा ग्रामीण बालकों में कोई अन्तर नहीं है। इसी तथ्य जैन (1966) व नारायणना (1966) के अध्ययनों में मिलते हैं कि माध्यमिक विद्यालय में पढ़ने वाले उच्च-स्तरीय परिवारों के बालक-बालिकाओं में शैक्षिक संप्राप्ति की अभिप्रेरणा का कारण है—उन परिवारों में शिक्षा को अधिक महत्व देना। टिक्कू (1966) द्वारा स्नातक महाविद्यालय में किए गए अध्ययन से एक ओर उपर्युक्त अध्ययन की पुष्टि होती है, पर दूसरी ओर यह भी ज्ञात होता है कि मध्यम सामाजिक स्तर से तथा ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाले छात्र अन्य सामाजिक स्तरों के तथा शहरी छात्रों की अपेक्षा अधिक अच्छी शैक्षिक संप्राप्ति वाले हैं। भागीरथ सिंह (1959) ने अस्पृश्यता सम्बन्धी अभिवृत्ति के अध्ययन में यह सिद्ध किया कि बालक माता पिता द्वारा शिक्षित होने के भय से अस्पृश्यता का पालन करते हैं। इस दृष्टि से वे अपने वर्ग के सामाजिक मानकों द्वारा प्रभावित होते हैं। भाटिया (1967) ने बालकों के समाजीकरण के सम्बन्ध में यह पता लगाया कि

माता पिता की आयु जितनी कम होती है, बच्चा के समाजीकरण म उनकी भूमिका उतनी ही अधिक साधनमूलक एव सवेगात्मक होती है। बडी आयु वाला की अपेक्षा छोटी आयु वाल माता पिता अधिक साधनमूलक भूमिका निभात हैं। सुशिक्षित माताओं की अपेक्षा अल्प शिक्षित माताएँ अधिक सवेगात्मक होती हैं।

सामाजिक सरचना से ही सबधित अन्य तीन अध्ययना म माध्यमिक विद्यालया का शहरी (भटनागर 1966), ग्रामीण (सक्सेना 1966) तथा आदिवासी (दुबे 1966) परिवश म अध्ययन किया गया। तीना ही अध्ययना म एक सर्वनिष्ठ निष्कर्ष यह मिलता है कि शहरी, ग्रामीण और आदिवासी—तीनों ही प्रकार की सामाजिक सरच नाओं म उच्चवर्गीय छात्रा की शक्ति सप्राप्ति निम्नवर्गीय छात्रा की अपेक्षा अधिक है, और सामाजिक सभाग म भी य उच्चवर्गीय छात्र अधिक सक्रिय हैं। दुबे न एक अन्य निष्कर्ष यह भी निकाला है कि ग्रामीण क्षेत्रा के छात्र सामाजिक सभाग और सामाजिक व्यवहार दोना ही बाता म शहरी छात्रा की अपेक्षा गुणात्मक एव सख्यात्मक दृष्टि से बेहतर हैं।

सामाजिक व्यवस्था के रूप म विद्यालय

सामाजिक व्यवस्था क रूप म विद्यालय सम्बन्धी अनुसधाना म अन्त क्रिया का अध्ययन भी किया गया है। माथुर (1965) क अनुसार छात्रावासा म लडकिया के व्यक्तित्व का जो विकास होता है वह शहरी ग्रामीण, शिक्षित अशिक्षित जस अभिधाना से विशषित नहीं होता। मार्टी (1967) न छात्रावास की सामाजिक व्यवस्था म औपचारिक एव अनौपचारिक सम्बन्धा की व्यवस्था पर बल दिया, मगर पाण्डेय (1972) न समाज कल्याण विभाग द्वारा सचालित छात्रावासा का वातावरण शक्षिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं पाया। शिक्षण सस्थाओं के वातावरण पर गर शक्षणिक कारका का अध्ययन करन पर दशोरा (1969) न पाया कि विद्यार्थी परिषदें विद्यालया म जनतन्त्रीय आदर्शों का पोषण करन म असमर्थ रही हैं। य परिषदें राजनतिक दला का आर्थिक सहायता म अवाछित हथकण्डे अपनाती हैं। त्यागी (1972) न सग भाई-बहना के मध्य स्पर्धा और विद्यालय की परिस्थितियों पर पडन वाले उसक प्रभाव का अध्ययन करक आक्रामकता निर्भीकता, सरक्षा क प्रति असन्ताप आदि का स्पष्ट का ही प्रति फलन बताया। इसी आधार पर उन्होंने अध्यापका तथा सरक्षका क लिए बच्चा क प्रति स्नेह सहिष्णुता और सहानुभूति युक्त व्यवहार करन की आवश्यकता पर बल दिया। पालीवाल (1961) न सास्कृतिक सरचना का अध्ययन करते हुए विद्यालय द्वारा प्रति पालित निम्नलिखित चार मान्यताओं का विद्यालय की सस्कृति का आधार बताया (1) मानव व्यक्तित्व के लिए सम्मान, (2) स्वतन्त्रता, (3) समुदाय सेवा द्वारा आत्म परितोष तथा (4) सजनात्मक आनन्द। तोमर (1968) न उच्च सप्राप्ति तथा निम्न सप्राप्ति वाले विद्यालया के सामाजिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन करके यह सिद्ध किया कि विद्यालय मे मानवीय सम्बन्ध छात्रा क सप्राप्ति स्तरा का विशेष रूप से प्रभावित करत हैं।

सामाजिक सरचना का घटक विद्यालय

शहरी सामाजिक सरचना के परिप्रेक्ष्य म उच्च प्राथमिक, माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयों म कार्यानुभव सम्बन्धी कार्यक्रम के क्रियान्वयन पर अभी तक केवल एक ही अध्ययन हुआ (द्विवेदी 1974)। इस अध्ययन द्वारा ये तथ्य प्रकाश म आए कि निम्न आय वाले परिवारों के छात्र कार्यानुभव कार्यक्रम म उच्च आय वाले परिवारों के छात्रों की अपेक्षा अधिक रुचि लेते हैं। कार्यानुभव कार्यक्रम म विद्यार्थियों की जो रुचि उच्च प्राथमिक स्तर पर होती है माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक स्तर पर वह क्रमश घटती जाती है। पारिवारिक आय म ज्यो-ज्यो वृद्धि होती जाती है, त्यो-त्यो भी कार्यानुभव कार्यक्रम म रुचि का ह्रास होता जाता है। कार्यानुभव कार्यक्रम म अपर्याप्त सफलता न मिलने का प्रधान कारण है कार्यानुभव कार्यक्रम एव स्वतन्त्र व्यवसायों के बीच अपेक्षित सम्बन्ध का अभाव और कार्यानुभव कार्यक्रम को विद्यालयी कार्यक्रम का अभिन्न अग न बनाना।

सामाजिक सरचना के एक अन्य आयाम विद्यालय और समुदाय के सहयोग को लेकर पाण्डेय (1960) ने वल्गाँव खण्ड म तथा व्यास (1966) ने उदयपुर जिले म विद्यालय और समुदाय सबधो के अध्ययन द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि ग्रामीण क्षेत्रों म दोनों के सबधो म निकटता है और वे परस्पर सहयोग के लिए तत्पर रहते हैं, परन्तु शहरी वातावरण म स्थिति इसके विपरीत है। इसके अतिरिक्त शहरी वातावरण म सामाजिक मान्यताए भिन्न होने के कारण अध्यापकों का उनकी शक्ति व्यावसायिक योग्यताओं के आधार पर सम्मान किया जाता है जबकि ग्रामीण वातावरण म ऐसी स्थिति नहीं होती।

विद्यालयों पर सामाजिक नियत्रण

विभिन्न सामाजिक वर्ग सामाजिक समूह जातीय समूह तथा शिक्षा से सबधित चार आयामों म जो शोधकार्य हुए हैं वे हैं भील जाति से सबधित अध्ययन (प्रकाश चन्द 1958, वृन्दावन 1967, लाल 1969) महिला वर्ग सबधी अध्ययन (गुलाटी 1953 कुलश्रेष्ठ 1967 और भण्डारी 1974), विभिन्न सामाजिक वर्गों की समस्याओं का अध्ययन (परवाना 1954 शर्मा 1970 मीणा 1974, मुरारी जाट 1974) और शिक्षा के प्रति ग्रामवासियों की अभिवृत्ति का अध्ययन (चौधरी 1957, शर्मा 1961)। इनम स भील बालक बालिकाओं की शिक्षा स सबधित अध्ययनों स ज्ञात होता है कि यद्यपि शिक्षा के परिणामस्वरूप भील बालकों के दृष्टिकोण म, व्यक्तिगत जीवन म तथा विचारों म पर्याप्त परिवर्तन हुआ है (प्रकाश चन्द) तथापि भील बालिकाओं का दृष्टिकोण अभी भी रूढ़िवादी है, वे जातीय बधनों स मुक्त नहीं हो सकी हैं (लाल)। भील छात्रों की समायोजन सबधी समस्याओं का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि वे प्राय अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले होते हैं अन्य लोगों स सामाजिक सपर्क व प्राय नहीं करते। आधुनिक शिक्षा के अनेक विषयों म विशेषतया अग्रेजी और गणित म उन्हें अधिगम सबधी विशेष कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है (वृन्दावन)।

महिला वग सवधी अध्ययना के माध्यम से इस क्षेत्र की महिलाओं की शक्षिक स्थिति का, तथा शिक्षित महिलाओं की और कायरत महिलाओं की उनके शिशुओं सवधी समस्याओं का पता चलता है। सामान्य शिक्षा की भांति ही महिला शिक्षा की अधिकाश शक्षिक सुविधाएँ शहरों म ही केंद्रित हैं अत ग्रामीण महिलाओं का बहुत बडा वग शिक्षा स वचित रह जाता है। इस कारण महिलाएँ पिछडी हुई हैं। उनके पिछडेपन के कुछ अन्य प्रमुख कारण हैं अल्पायु म विवाह परिणामत अल्पायु म ही मातृत्व की प्राप्ति स्त्रियों के गुरुतर पारिवारिक दायित्व आदि (गुलाटी)। शिक्षित एव कायरत महिलाओं की सतान सवधी समस्याओं के अध्ययन स यह स्पष्ट हुआ है कि सन्तति का पालन-पोषण कायरत महिलाओं की कायदक्षता म स्पष्ट रूप से बाधक है, पर य महिलाएँ इस कठिनाई को समस्या नही मानती और कायरत बने रहना चाहती हैं (कुलश्रेष्ठ)। इस तथ्य की पुष्टि भडारी (1974) द्वारा किए गए अध्ययन मे भी होती है। इस अध्ययन स यह भी पता चलता है कि शिक्षित महिलाएँ नौकरी करना चाहती हैं क्योंकि परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने क लिए उन्हें इसकी आवश्यकता है। व सोचती हैं कि नौकरी करने पर उन्हें समाज म अधिक सम्मान मिल सकेगा। श्रीवास्तव (1957) के अनुसार बरला आदिम जाति मे किशोर आयु के लडके लडकियों म कोई कठोर विभेद नही किया जाता। दूसरी वरीयता पाने क बावजूद य लडकियाँ पिता क घर म अपने को अत्यत सुरक्षित अनुभव करती हैं। भारतीय समाज की सरचना के सबध म राजपूत (1965) न मालूम किया कि सयुक्त परिवारो स आने वाली छात्राएँ इस सयुक्त व्यवस्था को पसद नही करती। उन्हें न तो अपनी पसद का विवाह करने की अनुमति मिलती है, न शक्षिक यात्राओं पर जाने की और न विभिन्न सांस्कृतिक कायक्रमों म भाग लेने की। अनको का जेब खच भी नहीं मिलता। अनक लडकियाँ अपने सरक्षकों को अपनी समस्याएँ बताना चाहती हैं पर बता नही पाती। अनको की इच्छा अग्रेजी नत्य एव अग्रेजी गीत सीखने की होती है, पर सरक्षकों के बन्धनों के कारण व सीख नही पाती। अनक लडकियों की अनुभूति यह है कि घर क धार्मिक कृत्यों म भाग लने के लिए उन्हें विवश किया जाता है। इन विविध कारणों से किशोरियों के सबध अपने सरक्षकों के साथ मधुर नही रहत।

विभिन्न सामाजिक वर्गों की समस्याओं से सबद्ध अध्ययनो के अन्तगत राजस्थान म आ जाने वाले पजाबी, सिन्धी, पश्तो, बगला, कश्मीरी आदि विभिन्न भाषा भाषी शरणार्थियों की शक्षिक समस्याओं का अध्ययन करते हुए परवानी (1954) ने सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों को सवथा अपर्याप्त पाया। अध्यापक विद्यार्थी अनुपात 1 60 स्वीकार करते हुए उन्होंने एक ऐसी योजना प्रस्तावित की जिसके आधार पर सभी शरणार्थियों के बच्चों को शिक्षा सुलभ हो सके। ग्रामीण छात्रों द्वारा शहरी विद्यालयों म अनुभव की जाने वाली समायोजन-समस्याओं के अध्ययन स यह ज्ञात होता है कि आर्थिक कठिनाइयाँ अध्यापकों की उपेक्षावृत्ति आवासीय असुविधाएँ आदि ऐसे कारक हैं जो ग्रामीण विद्यार्थियों क (शहरी वातावरण म) समायोजन म बाधक बनते हैं। अत उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने की तथा अनुदान एव छात्रवृत्ति द्वारा उनकी

आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने की आवश्यकता है (जैन 1970)। प्रवासी परिवारों के द्वारा की समायोजन संबंधी समस्याओं का अध्ययन करते हुए मेहता (1974) ने इस तथ्य पर जोर दिया है कि सभी प्रवासी परिवारों के स्थान परिवर्तन के कारण समान रूप से प्रभावित नहीं होते। जो अधिक गतिशील रहे हैं उनको ही स्थान की नवीन परिवेश में समायोजित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। उनकी मुख्य कठिनाइयाँ आर्थिक प्रकार एवं पारिवारिक समायोजन संबंधी होती हैं। जनजाति परिवारों के बच्चे स्थानीय परिवारों के बालकों की अपेक्षा समायोजन संबंधी गुणात्मक अध्ययन में अत्याचार द्वारा की समायोजन संबंधी कठिनाइयों की जानकारी मिलती है (गुरु आर 1974)।

शिक्षा के प्रति ग्रामवासियों की अभिवृत्तियों के अध्ययन से पता चलता है कि ग्रामवासियों की शिक्षा के प्रति रुचि स्थान अत्यन्त कम है फिर भी ग्रामीण लोगों के विचारों में शिक्षा की इतनी कम होने का कारण यह है कि वर्तमान पाठ्यक्रम ग्रामीण परिवेश की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। इस तथ्य की पुष्टि करते हुए यह भी प्रमाण पाए हैं कि ग्रामवासी और शिक्षा के व्यवस्था में अधिक रुचि रखते हैं क्योंकि वे व्यावहारिक विद्यालयी पाठ्यक्रम की ओर ही ग्रामवासियों की अधिक मांग के प्रति होते हैं (गोयल 1957)। इन निष्कर्षों की पुष्टि ... (1961) द्वारा भी होती है। ग्रामीण समुदाय अनुभव करता है कि कृषि अनुशासन तथा ग्रामीण जीवन के अनुरूप ही सम्बन्धित व्यवस्था में धार्मिक परिवर्तन किए जाने पर शिक्षण पाठ्यक्रम को उसका व्यावहारिक बनाए रखना आवश्यक है। इन आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य ग्रामीण जनता धार्मिक शिक्षा के पक्ष में है जबकि आधुनिक शिक्षा धर्म निरपेक्ष व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास करती है (भा)।

भारतीय समाज एवं अध्यापक समाज

समग्र शिक्षण प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग है—अध्यापक। जिस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवेश से प्रभावित होती है और उसे प्रभावित करती है उसी प्रकार शिक्षक भी अपने सामाजिक परिवेश से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता भी है।

आधुनिक समाज में प्रत्येक व्यक्ति के सामाजिक आर्थिक स्तर को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इसी कारण अधिकांश शोधकर्ताओं ने इसी आयाम को शोध का विषय बनाया है। इन अध्ययनों के न्यादर्श में अध्यापक वर्ग के सदस्य होते थे कोई भी अध्ययन तुलनात्मक नहीं था। सभी अध्ययनों में यह पाया गया कि अध्यापकों जैसी ही योग्यता वाले दूसरे व्यवसायों के व्यक्तियों का सामाजिक आर्थिक स्तर अध्यापकों से अच्छा है। यह अन्तर अध्यापकों में व्यावसायिक असंतोष बढ़ाता है (जैन 1954 ठाकुर 1962 मिश्र 1969 सिसोदिया 1972)। अध्यापकों के सामाजिक आर्थिक स्तर को प्रभावित करने वाले दो अन्य प्रमुख कारक हैं अध्यापकों के लिए समाज में सम्मान का अभाव तथा अध्यापकों का बार-बार स्थानान्तरण। इस अन्य तथ्य भी प्रकाश में आए

हैं। एक यह कि माध्यमिक विद्यालयो के, विशेषतया निजी सस्थाओ के अध्यापक, ऋणग्रस्त हैं और दूसरा यह है कि अध्यापक वर्ग भोजन की अपेक्षा अपनी सन्तान की शिक्षा पर अधिक खर्च करता है (शर्मा 1954)। अध्यापिकाओ द्वारा शिक्षण व्यवसाय चुने जाने के दो कारको की ओर सुखवाल (1971) ने सकेत किया है। एक तो यह कि लगभग 90% अध्यापिकाएँ अपनी शक्षिक योग्यता सुधारने के लिए इस व्यवसाय को चुनती है, और दूसरा यह कि इस व्यवसाय द्वारा उन्हे समाज सेवा के भी अवसर प्राप्त होत हैं। परन्तु स्याल (1955) तथा वर्मा (1967) द्वारा सुखवाल के निष्कर्ष का समर्थन नही होता। स्याल और वर्मा के अनुसार सभी अध्यापिकाएँ आर्थिक दबावो के कारण ही इस व्यवसाय को चुनती हैं। अध्यापको की वयक्तिक एव सामाजिक समस्याओ पर केवल एक ही अध्ययन किया गया है और वह अध्यापिकाओ के सम्बन्ध म हुआ है वर्मा (1967) द्वारा। इसके अनुसार अविवाहित अध्यापिकाओ की मुख्य समस्या है—मानसिक अशान्ति। विवाहित अध्यापिकाओ की समस्याएँ दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी हैं। दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी कितनी समस्याएँ इस व्यवसाय म आने से पूर्व थी और कितनी इसम प्रवेश करने का परिणाम हैं, यह कहन की स्थिति नही बनती। विधवा अध्यापिकाओ की दो मुख्य समस्याएँ सामने आइ, एक तो मनोरजन सम्बन्धी सुविधाओ का अभाव और दूसरी अस्वस्थता। इन समस्याओ का सामना अविवाहिताएँ भी कर रही है। अविवाहित विवाहित और विधवा तीनो ही प्रकार की अध्यापिकाएँ अनुभव करती है कि उनका सामाजिक स्तर निम्नतर है उनकी आर्थिक स्थिति निम्नतर है और उनके प्रति समाज का दृष्टिकोण प्रतिकूल है।

राजस्थान म प्राथमिक शिक्षा पचायत राज के अधीन है। उस पर एक वृत्त अध्ययन भी हुआ है (जन 1969)। इस अध्ययन के द्वारा नव विकेन्द्रित व्यवस्था मे प्राथमिक विद्यालय के अध्यापको की समस्याओ का पता लगा। इनम स कुछ समस्याएँ जो प्रकाश म आई व थी पदोन्नति के सीमित अवसर, निम्न वेतनमान आवासीय सुविधाओ का अभाव, बार-बार स्थानान्तरण, मनोरजन के साधनो का अभाव, निम्न सामाजिक सम्मान आदि। अध्यापको की अवकाशकालीन प्रवृत्तियो पर केवल एक अध्ययन किया गया है (मुरारीदान सिंह 1966)। शोधकर्त्ता के अनुसार अधिकाश अध्यापक और अध्यापिकाओ को औसतन तीन चार घण्टे तक दनिक अवकाश प्राप्त था। इनकी अवकाशकालीन प्रवृत्तियाँ प्राय चार प्रकार की थी—(1) अध्ययन सम्बन्धी (2) खेल कूद सम्बन्धी (3) बागवानी सम्बन्धी और (4) अपनी सतान को शिक्षा देने से सम्बन्धित। अधिकाश अध्यापक धार्मिक, साहित्यिक और सास्कृतिक समितियो के सदस्य नही थे। अध्यापको का आर्थिक सकोच मनोरजन के अच्छे साधन प्राप्त करने म बाधा उपस्थित करता था। उनकी अवकाशकालीन प्रवृत्तियो मे भिन्नता के कारक थे—आयु लिंग और सामाजिक आर्थिक स्थिति।

विद्यार्थी समाज

विद्यार्थी समुदाय विद्यालय एव समाज स सम्बन्धित अध्ययनो के मुख्य आयाम हैं (क) विद्यार्थियो की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि (दलिया 1953, डक 1974),

हैं। एक यह कि माध्यमिक विद्यालया के, विशेषतया निजी सस्थाग्रा के अध्यापक, ऋणग्रस्त हैं और दूसरा यह है कि अध्यापक वग भोजन की अपेक्षा अपनी सन्तान की शिक्षा पर अधिक खच करता है (शमा 1954)। अध्यापिकाओं द्वारा शिक्षण व्यवसाय चुन जान के दो कारका की ओर सुखवाल (1971) न सकेत किया है। एक तो यह कि लगभग 90% अध्यापिकाएँ अपनी शक्षिक योग्यता सुधारन के लिए इस व्यवसाय को चुनती हैं, और दूसरा यह कि इस व्यवसाय द्वारा उन्ह समाज सेवा के भी अवसर प्राप्त होते हैं। परन्तु स्याल (1955) तथा वर्मा (1967) द्वारा सुखवाल के निष्कष का समथन नही होता। स्याल और वर्मा के अनुसार सभी अध्यापिकाएँ आर्थिक दवावा के कारण ही इस व्यवसाय को चुनती हैं। अध्यापका की वयक्तिक एव सामाजिक समस्याग्रा पर केवल एक ही अध्ययन किया गया है और वह अध्यापिकाग्रा के सम्बन्ध म हुआ है वर्मा (1967) द्वारा। इनके अनुसार अविवाहित अध्यापिकाग्रा की मुख्य समस्या है—मानसिक अशान्ति। विवाहित अध्यापिकाग्रा की समस्याएँ दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी हैं। दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी कितनी समस्याएँ इस व्यवसाय म आने स पूव थीं और कितनी इसम प्रवेश करन का परिणाम हैं, यह कहने की स्थिति नही बनती। विधवा अध्यापिकाग्रा की दो मुख्य समस्याएँ सामन आइ, एक तो मनोरजन सम्बन्धी सुविधाग्रा का अभाव और दूसरी अस्वस्थता। इन समस्याग्रा का सामना अविवाहिताएँ भी कर रही हैं। अविवाहित विवाहित और विधवा तीनो ही प्रकार की अध्यापिकाएँ अनुभव करता हैं कि उनका सामाजिक स्तर निम्नतर है उनकी आर्थिक स्थिति निम्नतर है और उनके प्रति समाज का दृष्टिकोण प्रतिकूल है।

राजस्थान म प्राथमिक शिक्षा पचायत राज के अधीन है। उस पर एक वृत्त अध्ययन भी हुआ है (जन 1969)। इस अध्ययन के द्वारा नव विकेन्द्रित व्यवस्था म प्राथमिक विद्यालय क अध्यापका की समस्याग्रा का पता लगा। इनमे से कुछ समस्याएँ जो प्रकाश म आइ, वे थी पदोन्नति के सीमित अवसर, निम्न वतनमान आवासीय सुविधाग्रा का अभाव, बार-बार स्थानान्तरण, मनोरजन के साधना का अभाव, निम्न सामाजिक सम्मान आदि। अध्यापका की अवकाशकालीन प्रवृत्तिया पर केवल एक अध्ययन किया गया है (मुरारीदान सिंह 1966)। शोधकर्त्ता के अनुसार अधिकाश अध्यापक और अध्यापिकाओं को औसतन तीन-चार घण्टे तक दनिक अवकाश प्राप्त था। इनकी अवकाशकालीन प्रवृत्तियाँ प्राय चार प्रकार की थी—(1) अध्ययन सम्बन्धी (2) खेल-कूद सम्बन्धी (3) बागवानी सम्बन्धी और (4) अपनी सतान को शिक्षा देने से सम्बन्धित। अधिकाश अध्यापक धार्मिक, साहित्यिक और सास्कृतिक समितिया के सदस्य नही थे। अध्यापको का आर्थिक सकोच मनोरजन के अच्छे साधन प्राप्त करने म बाधा उपस्थित करता था। उनकी अवकाशकालीन प्रवृत्तिया मे भिन्नता के कारक थे—आयु लिंग और सामाजिक आर्थिक स्थिति।

विद्यार्थी समाज

विद्यार्थी समुदाय, विद्यालय एव समाज से सम्बन्धित अध्ययना के मुख्य आयाम हैं (क) विद्यार्थिया की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि (दनिया 1953, इव 1974),

नही हो पाया है। ये विकलाग समाज के सास्कृतिक जीवन म सहज रूप से भाग ले सकें ऐसा प्रयास किया जाना चाहिए।

सम्भावनाएँ एव सुझाव

शिक्षा समाजशास्त्र के कई क्षेत्र सवथा उपेक्षित रहे है, जिन क्षेत्रा म कुछ काय हुग्रा है, उनके भी ग्रनेक ग्रायाम उपेक्षित रह गए हैं। समाजीकरण के ग्र तगत ग्रनौप चारिक ग्रभिकरणो के साथ तुलना के लिए मूल्या के एव निष्ठाग्रा के विकास पर तथा उनके विकास म बाधक कारका पर भी ग्रभी ग्रध्ययन नही हुग्रा है। भारतीय समाज की सरचना म केवल परिवार का ग्रध्ययन किया गया, शेष सभी सघटक ग्रभी ग्रध्ययन किए जाने की प्रतीक्षा म हैं। विभिन्न सामाजिक वग सामाजिक समूह, जातीय समूह तथा शिक्षा के ग्र तगत ग्रनुसूचित जनजातिया मे, मुख्यतया भीलो के बारे मे ही ग्र ययन किए गए है। राजस्थान म ग्र य भी ग्रनुसूचित जनजातिया हैं, शिक्षा ने उन्हें कितना प्रभावित किया है इसका भी ग्र ययन होना चाहिए। विकलागो की शिक्षा के क्षेत्र का विविध ग्रायामा म अध्ययन किया जाना चाहिए। मूक बधिर ग्रपग ग्रपाहिज यक्तियो को शिक्षा देकर इस याग्य बनाना ग्रावश्यक है कि वे सामाजिक कार्यों म सभागी बनकर सम्मानपूण जीवन जी सकें। इस दृष्टि से उनकी समस्याग्रा की, ग्रौर उस मजिल तक पहुँचने के रास्ते के ग्रवरोधको की पहचान करनी ग्रावश्यक है। जिन विषयो पर ग्रनुसधान हो चुका है उनमे से ग्रनक क्षेत्रा के ज्ञान का ग्रद्यतन बनाने के लिए पुन ग्रनुसधान ग्रपेक्षित ह।

यह सत्य है कि उल्लिखित उपेक्षित क्षेत्रा म ग्रनुसधान सरल नही है पर यह भी सत्य है कि यह ग्रावश्यक है। यह शोधकर्त्ताग्रा के लिए एक चुनौती है। इधर जो कुछ भी तथ्य विद्यालय-समाज के बारे म, पारस्परिक ग्र त प्रक्रियाग्रा के बार म, ग्रध्यापको की सामाजिक स्थितियो के उनकी व्यावसायिक कुशलता पर प्रभाव के सबध म प्रकाशित हुए हैं उन्हें उपेक्षित करके कोई भी व्यवस्था शक्षिक सुधार का दावा नही कर सकती। इन शिक्षानुसधानो क तथ्या को सामाजिक सास्कृतिक स दर्भों म परख कर उनका उपयोग भविष्यमिति म करना ग्रावश्यक है।

सन्दर्भाकित ग्रनुसधान

कुलश्रेष्ठ, स्नहलता	Problems of Educated Working Women with Special Reference to Their Children, M Ed Udaipur Uni 1967
कलाशच द	Education of Bhil Children in Vidya Bhawan Udaipur M Ed Raj Uni 1958
खान, इशहाक मोहम्मद	Investigation into School Attitudes (Social Distance) of High School Boys and Girls of Udaipur City M Ed Raj Uni 1956

मगावन, बालकृष्ण	गुरुकुल व आधुनिक शिक्षा प्रणाली का प्राथमिक स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन, एम एड , राज वि वि , 1972
गुप्ता हजारीलाल	Growth of Basic Education in India M Ed Raj Uni 1955
गुलाटी जी क	The Educational Backwardness of Women in Udaipur Division M Ed Raj Uni 1953
चौधरी जहानसिंह	Social Survey of the Village Bedla with Special Reference to the Villagers Attitude towards Education M Ed Raj Uni 1957
जन बाबूलाल	A Boys Higher Secondary School in Social Structure of a Small Pilgrim Town M Ed Udaipur Uni 1966
जन श्यामलाल	A Study of Primary Education in Panchayat Raj (Local Self Government) A Case Study M A (Sociology) Udaipur Uni 1969
जाशी रविकान्त	A Comparative Study of the Socio Econo mic Conditions of the Student Teachers of Vidya Bhawan Handicraft Institute and E C Ed M Ed Udaipur Uni 1973
झावर वशीलाल	छात्रो का समाजमितिक स्तर और उसका छात्र अध्यापन सम्बन्ध पर प्रभाव, एम एड उदयपुर वि वि , 1970
झा आर क	Outcomes of Education as viewed by the Rural Community M Ed Raj Uni 1961
टिक्कू दुलारी	A Degree College in the Social Structure of a Small Pilgrim Town M Ed Udaipur Uni 1966
ठाकुर, जितेन्द्रसिंह	Changing Socio Economic Status of Teachers after 1947 M Ed Raj Uni 1962
डक प्रेम	Social Background of Guardians Teachers and Students in Primary Education M A (Sociology) Udaipur Uni 1974
त्यागी राजकिशोर	सगे भाई बहनो म प्रतिस्पर्द्धा भावनाओं का अध्ययन एव उनका शाला परिस्थितियों म प्रभाव, एम एड , राज वि वि , 1972
तोमर रणजीतसिंह	A Comparative Study of Social Climate Factors of Low Achiever and High Achiever Schools M Ed , Raj Uni 1968

दलिया, विद्यासागर	The Socio Economic Background of Children in Vidya Bhawan and Other Indian Public Schools M Ed Raj Uni 1953
दशोरा, यमुनाशकर	Influence of Political Parties on Students Unions of the Colleges of Udaipur City, M Ed Udaipur Uni 1969
द्विवेदी, गगास्वरूप	बीकानेर शहर के उच्च प्राथमिक एव माध्यमिक विद्यालयो मे कार्यानुभव योजना की क्रियान्विति का अध्ययन एम एड, राज वि वि, 1974
दीवान रीता	Occupational Aspirations of Youth in an Urban Setting A Field Work Report M A (Sociology) Raj Uni 1973
दुबे, उमेशचन्द्र	A Mixed Higher Secondary School in the Social Structure of a Town in Tribal Area M Ed, Udaipur Uni 1966
परवानी, चेतनदास	Educational Problems of the Refugees in Rajasthan M Ed Raj Uni 1954
पाटीदार, विजयपाल	शिक्षा स्नातक छात्राध्यापको के पारिवारिक प्रारूप का अध्ययन, एम एड, उदयपुर वि वि, 1971
पाण्डेय रामस्वरूप	समाज कल्याण विभाग राजस्थान द्वारा सचालित छात्रावासो के सामाजिक एव भावात्मक वातावरण का मनोवैज्ञानिक अध्ययन एम एड, राज वि वि, 1972
पाण्डय, त्रिभुवनपट	The Mutual Contribution of School and Community in Badgaon Block M Ed Raj Uni 1960
पालीवाल, शकरलाल	The Culture Pattern of a School M Ed Raj Uni 1961
मगू जसवन्तसिह	A Study into Democratic Values of Ninth Class Students and their Relationship with the Mental Ability Academic Achievement and Socio Economic Status of these Students M Ed Raj Uni 1972
भडारी प्रमिला	A Sociological Study of the Problems of Educated Women, M A (Sociology) Udaipur Uni 1974
भडारी, विजयसिह	A Boys Higher Secondary School in the Social Structure of a City, M Ed Udaipur Uni 1966
भागीरथसिह	Attitudes of School Children towards Untouchability M Ed, Raj Uni, 1959

भाटिया विमल	Instrumental and Expressive Roles of Parents in the Socialization of their Children M S W Udaipur Uni 1967
भार्गव प्रेमनारायण	Human Relationship in the Classroom An Exploratory Study in Sociometry M Ed Raj Uni 1965
माथुर, इन्दुबाला	Life and Culture of the Teenagers A Study of the Inmates of a Girls Hostel M A (Sociology) Raj Uni, 1965
माथुर, विजयबिहारीलाल	The Gurukul System of Education M Ed Raj Uni 1953
मीना सुशीला	Adjustment of Children from Migrated Families Some Case Studies M Ed Raj Uni 1974
मिश्रा शशिप्रभा	A Study of the Socio Economic Status and Teachers Attitudes toward Education M Ed Raj Uni 1969
मुरारीलाल नागर	An Investigation into the Leisure time Activities of Secondary School Teachers of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1966
मोदी इन्दुबाला	The Social System of Girls Hostel A Study in Social Interaction M A (Sociology) Raj Uni 1967
याज्ञदत्त	Educational Thoughts of Ravindra Nath Tagore M Ed Raj Uni 1958
राजपूत कुसुम	A Study of Harmony and Dis harmony between Parents and their School going Adolescent Girls M Ed Udaipur Uni 1965
लाल रत्नका डी	Education of Bhil Girls in Middle and Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1969
शर्मा गिरधारीलाल	किशोर छात्रो म व्याप्त विद्यालय सम्बन्धी असतोष क कारणों का एक अध्ययन एम एड राज वि वि 1971
वर्मा, विद्याप्रभा	A Survey of Personal and Social Problems of Lady Teachers in Elementary Schools M Ed Udaipur Uni 1967
व्यास लक्ष्मीनारायण	School Community Relationship in Higher Secondary Schools of Udaipur District M Ed Udaipur Uni 1966
शर्मा, दाऊलाल	ग्रामीण क्षत्र के छात्रों की शहरी विद्यालयो मे समायोजन की समस्याए एम एड उदयपुर वि वि, 1970

शर्मा, शिवकुमार	The Socio Economic Status of Secondary School Teachers in Udaipur City M Ed Raj Uni 1954
श्रीमाली, नन्दकिशोर	Influence of Socio Economic Factors of the Environment on the Growth of Children M Ed Raj Uni 1954
श्रीवास्तव चम्पा	A Study of Some Aspects of Growing up of Adolescent Barela Girls M Ed Raj Uni 1957
सक्सेना, श्रीराम	A Study of Mixed Higher Secondary Schools in the Rural Social Structure M Ed Udaipur Uni 1966
स्याल, सावित्री	The Socio Economic Condition of Secondary School Women Teachers in Bikaner City M Ed Raj Uni 1955
सिसोदिया जगमल	एस टी सी छात्राध्यापकों की सामाजिक एव आर्थिक परिस्थिति, एम एड, उदयपुर वि वि, 1972
सुखवाल, कलाशदेवी	अध्यापिकाओं द्वारा शिक्षण व्यवसाय के चयन के कारण, एम एड, उदयपुर वि वि, 1971
सुभ्रजाल	Adjustment of Hostel Boys from Affluent Homes and Tribal Homes in School M Ed Udaipur Uni 1974
हडपावत, कन्हैयालाल	Adjustment Problems of Bhil Students in Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1967
हिंडसा हरिसिंह	The Education of the Handicapped in India M Ed Raj Uni 1955
हीरानन्दानी, देविका	A Comparative Study of Girls and Boys Secondary Schools in the Social Structure of Two Small Pilgrim Towns M Ed Udaipur Uni 1966

भाटिया विमल	Instrumental and Expressive Roles of Parents in the Socialization of their Children M S W Udaipur Uni 1967
भार्गव प्रेमनारायण	Human Relationship in the Classroom An Exploratory Study in Sociometry M Ed Raj Uni 1965
माथुर, इन्दुबाला	Life and Culture of th Teenagers A Study of the Inmates of a Girls Hostel M A (Sociology) Raj Uni, 1965
माथुर, विजयबिहारीलाल	The Gurukul System of Education M Ed Raj Uni 1953
मीणा सुशीला	Adjustment of Children from Migrated Families Some Case Studies M Ed Raj Uni 1974
मिश्रा शशिप्रभा	A Study of the Socio Economic Status and Teachers Attitudes toward Education M Ed Raj Uni 1969
मुरारीमानसिंह	An Investigation into the Leisure time Activities of Secondary School Teachers of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1966
माथुर इन्दुबाला	The Social System of Girls Hostel A Study in Social Interaction M A (Sociology) Raj Uni 1967
योगेन्द्रलाल	Educational Thoughts of Ravindra Nath Tagore M Ed Raj Uni 1958
राजपूत कुसुम	A Study of Harmony and Dis harmony between Parents and th ir School going Adolescent Girls M Ed Udaipur Uni 1965
लाल स्वर्ण डा	Education of Bhil Girls in Middle and Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1969
वर्मा गिरधारीलाल	किशोर छात्रों में व्याप्त विद्यालय सम्बन्धी असंतोष के कारणों का एक अध्ययन एम एड राज वि वि 1971
वर्मा, विद्याप्रभा	A Survey of Personal and Social Problems of Lady Teachers in Elementary Schools M Ed Udaipur Uni 1967
व्यास लक्ष्मीनारायण	School Community Relationship in Higher S condary Schools of Udaipur District M Ed Udaipur Uni 1966
शर्मा, दाऊलाल	ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों की शहरी विद्यालयों में समायोजन की समस्याएं एम एड, उदयपुर वि वि, 1970

शर्मा, शिवकुमार	The Socio Economic Status of Secondary School Teachers in Udaipur City, M Ed Raj Uni 1954
श्रीमाला, नन्दकिशोर	Influence of Socio Economic Factors of the Environment on the Growth of Children, M Ed Raj Uni 1954
श्रीवास्तव, चम्पा	A Study of Some Aspects of Growing up of Adolescent Barela Girls M Ed Raj Uni 1957
सक्सेना, श्रीराम	A Study of Mixed Higher Secondary Schools in the Rural Social Structure M Ed Udaipur Uni 1966
स्याल सावित्री	The Socio Economic Condition of Secondary School Women Teachers in Bikaner City, M Ed Raj Uni 1955
सिसोदिया, जगमल	एस टी सी छात्राध्यापको की सामाजिक एव आर्थिक परिस्थिति, एम एड, उदयपुर वि वि, 1972
सुखवाल, प्रकाशदेवी	अध्यापिकाओ द्वारा शिक्षण व्यवसाय के चयन के कारण, एम एड, उदयपुर वि वि, 1971
सुन्नुजाल	Adjustment of Hostel Boys from Affluent Homes and Tribal Homes in School M Ed Udaipur Uni 1974
हडपावत, कन्हैयालाल	Adjustment Problems of Bhil Students in Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1967
हिडसा हरिसिंह	The Education of the Handicapped in India M Ed Raj Uni 1955
हीरानन्दानी, देविका	A Comparative Study of Girls and Boys Secondary Schools in the Social Structure of Two Small Pilgrim Towns, M Ed Udaipur Uni 1966

□

शिक्षाक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें

□ डा श्यामलाल कौशिक
□ पुरुषोत्तम लाल तिवारी

यद्यपि राजस्थान राज्य में राज्य स्तरीय शिक्षा नीति 1949 में लागू हो चुकी थी तथा पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीयकरण 1952 में ही प्रभावशाली हो गया था किन्तु शिक्षाक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों से सम्बन्धित अनुसंधान कार्यों का आरम्भ 1954 से होने का प्रमाण मिलता है। 20-21 वर्ष की अवधि में अर्थात् 1974 तक इस क्षेत्र में 44 अनुसंधान कार्य सम्पन्न हुए जो क्षेत्रगत व्याप्ति की दृष्टि से सामान्य शिक्षाक्रम, भाषागत पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों, सामाजिक ज्ञान पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों, विज्ञान पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों तथा सहशैक्षिक कार्यक्रमों से सम्बन्धित हैं।

उपादेयता की दृष्टि से इनकी व्याप्ति, स्कूली शिक्षा में समाहित होने वाले विषयगत पाठ्यक्रमों, पाठ्येतर कार्यक्रमों, स्कूली कार्यक्रमों के दार्शनिक आधारों, विशेष शिक्षा योजनाओं, सरकारी पाठ्यक्रमों और स्कूली वातावरण में प्रचलित अपव्यय प्रवृत्तियों तक है।

प्रयुक्त अध्ययन विधियों की दृष्टि से देखें तो केवल चार अनुसंधान कार्यों में प्रयोगात्मक विधि अपनाई गई। शेष प्रायः सभी में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। सर्वाधिक प्रयुक्त उपकरण प्रश्नावली (70 प्रतिशत से अधिक) और साक्षात्कार (लगभग 30 प्रतिशत) रहे। अभिवृत्ति मापक, सम्प्राप्ति परीक्षा, बुद्धि परीक्षा, सामाजिक आर्थिक स्तर मापक और अभिरुचि मापक अन्य उपकरण भी काम में लिए गए, जिनका प्रयोग 10 प्रतिशत के लगभग रहा है। सांख्यिकी विधियों में प्रतिशत, मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, काई स्क्वायर, टी टेस्ट और सहसम्बन्ध का प्रयोग किया गया।

सामान्य शिक्षाक्रम

1964 तक देश में और राज्य में बुनियादी शिक्षा का सुनिश्चित वातावरण था। इस क्षेत्र में एक विशेष शिक्षाक्रम और स्वच्छिक अभिव्यक्ति के प्रयास स्कूलों में चल रहे थे। सभा ने 1953 में बुनियादी शिक्षा की बीस वर्षीय योजना का प्रारूप तैयार किया और बताया कि इसके शीघ्र प्रसार और विस्तार के लिए मन्दिरों तथा अन्य भवनों के उपयोग में भी संकोच नहीं करना चाहिए। दूसरी ओर सरकार से आवश्यक वित्तीय प्रावधान की आशा भी की गई। शिक्षा की भविष्यमिति पर बहुत एक

अच्छा अध्ययन है। 1955 में सक्सेना ने मालूम किया कि बुनियादी स्कूलें आत्मनिर्भरता का लक्ष्य सामने रखकर उसे कताई-बुनाई व कृषि उद्योग से प्राप्त करना चाहती थी, आत्मनिर्भरता की स्थिति शून्य प्रतिशत से 70 प्रतिशत तक थी, लक्ष्य की प्राप्ति मे बाधक कारण थे—उद्योगों के लिए समय की कमी, अयोग्य शिक्षक, साधन सुविधाओं की कमी और विपणन की कठिनाइयाँ। श्रीमती साघी (1955) ने मालूम किया कि बुनियादी शिक्षा में मौखिक कार्य पर अधिक बल दिया जाता था और लिखित कार्यों में अनुभवाश्रित लेखों और वर्णन विवरणों को प्रोत्साहित किया जाता था। किन्तु मटाई (1959) ने सर्वेक्षण करने पर पाया कि वर्णन विवरण को केवल प्रतिभाशाली छात्र पसंद करते थे और औसत छात्रों की उनमें रुचि नहीं थी। बुनियादी शिक्षा मे एक लक्षण सामाजिक ज्ञान को सग्रथित इकाई के रूप में और विज्ञान को प्रायोजना कार्यों के रूप में पढ़ाने का था (श्रीमती साघी 1955)। किन्तु शुक्ल (1956) ने यह तथ्य निकाला कि स्कूलों में चल रही तत्कालीन पाठ्यपुस्तकें सग्रथित भाव से नहीं बनी हुई थी और उनमें इतिहास भूगोल, नागरिक शास्त्र के प्रकरण असम्बद्ध और विच्छिन्न भाव से प्रस्तुत किए हुए थे। त्रिपाठी (1962) द्वारा किया गया एक ही अध्ययन सामान्य विज्ञान के सग्रथित पाठ्यक्रम की समीक्षा करता है और उसमें (इंग्लण्ड के पाठ्यक्रम की तुलना में) अनिर्दिष्टता, अस्पष्टता और प्रायोगिक कार्यों का अभाव सकलित करता है। इसी प्रकार बुनियादी शिक्षा धारा और परम्परित विषय प्रधान शिक्षा धारा की असगतियों के जो संकेत इन अनुसधान कार्यों में प्रत्यक्ष होते हैं वे बताते है कि बुनियादी शिक्षा धारा के कुण्ठित हो जाने का एक प्रबल कारण यह रहा है कि उसकी पाठ्यक्रमीय आकांक्षाएँ समानान्तर भाव से परिपूर्ण नहीं हो पाई थीं, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें एक दिशा में चल रही थीं और बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रम और प्रयास अपने केंचुल में सिमट कर रह गए थे। एम ही तथ्य चारण (1957) ने उजागर किए और बताया कि बुनियादी शिक्षा उच्चतर शिक्षा से पूर्वापर जुड़ी हुई नहीं थी उसके योग्य पुस्तकों का नितान्त अभाव था, कृषि भूमि का अभाव था, बुनियादी और गैर-बुनियादी सस्थाएँ समानान्तर भाव से चल रही थी गैर बुनियादी स्कूलों के केवल नामपट्ट बदले गए थे, शिक्षकों का प्रशिक्षण नहीं हुआ था और पाठ्यक्रम को गम्भीरतापूर्वक बदलने की चेष्टा नहीं हुई थी।

शिक्षाक्रम और पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीयकरण की लहर देश मे 1947 के बाद आई थी। राजस्थान मे राष्ट्रीयकृत शिक्षाक्रम और पाठ्यपुस्तकें 1952 में लागू हुई थी किन्तु दूसरे देशों की तुलना में इस राष्ट्रीयकरण का स्वरूप और सयोजन किस कोटि का था, इसका पता गिरधारीलाल (1958) ने लगाया। इस अध्ययन के अनुसार रूस मे पुस्तक लेखन के लिए दस लेखकों के पैनल थे, केलिफोर्निया में नीति निर्धारण शिक्षा विभाग करता था और पाठ्यपुस्तक मण्डल पुस्तकों के मूल्यांकन, लेखन व सुधार की एक स्वायत्त राष्ट्रीय इकाई थी, किन्तु भारत में वैसी कोई स्थायी शिक्षाक्रम समिति या मूल्यांकन सुधार इकाई कार्यरत नहीं थी। राजस्थान में राष्ट्रीयकरण पाठ्यपुस्तक मंडल 1973 से स्वायत्तशासी सस्थान बन गया है किन्तु पाठ्यक्रम, शिक्षाक्रम सम्बन्धी स्थायी

समिति के अभाव की बात आज भी कायम है। हाँ, माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्तर पर कभी विषय समितियां माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अधीन अस्तित्व में हैं।

शिक्षाक्रम में शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं और उनके स्थान का महत्व दर्शन का सिद्धान्त एवं विचार के स्तर पर चिन्तन में भले पुराना रहा हो, किन्तु व्यवहारतया फलित होने वाले पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों में वह किस कदर उपेक्षित रहा है इसका पता फाटक (1961) ने लगाते हुए स्थापित किया कि कक्षा 3–4 के पाठ्यक्रम में ऐसी बुनियादी कमियाँ थी कि वह छात्रों में विशिष्ट त्रुटियाँ उत्पन्न करता था और छात्रों की आवश्यकताओं और क्षमताओं का ध्यान न रखने के कारण कक्षा 4 तक छात्रों में गुणा सम्बन्धी और कक्षा 5 तक भाग सम्बन्धी संस्कार नहीं बन पाते। माध्यमिक स्तर पर लगभग ऐसी ही अवस्था मुरडिया (1970) ने देखी। इसके अनुसार माध्यमिक शिक्षा क्रम छात्रों की मानसिक योग्यता के अनुरूप नहीं था पाठ्यक्रमों के प्रकरण पिछली कक्षाओं से असम्बद्ध थे अंग्रेजी विषय और उसके पाठ्यक्रम के प्रति छात्रों में 68 प्रतिशत अनचाह थी और गणित उनके लिए हौवा था। विभिन्न पाठ्यक्रमों के प्रकरणों में पारस्परिकता और सुसम्बद्धता का भी अभाव पाया गया था। इसी प्रसंग में राव (1974) ने पाया कि भारतीय स्कूलों में वातावरणजन्य शिक्षाक्रम का नितान्त अभाव है और स्कूलों में सम्बन्धित विषय शिक्षण के विकास की पूरी संभावनाएँ अभी तक शेष हैं। 1974 में ही मूलचन्द ने पता लगाया कि माध्यमिक स्तर पर 92 प्रतिशत छात्र शिक्षाक्रम में अपने लिए सुरक्षित भविष्य की आकांक्षा रखते हैं, किन्तु अभिनिहोत्री के उसी वर्ष के अध्ययन से यह तथ्य प्रकाशित होता है कि पाठ्यक्रम छात्रों में न तो समसामयिक नागरिक समस्याओं पर विचार करने की क्षमता पैदा करता है और न ही उनमें सत्यासत्य का विवेक एवं सृजनात्मकता के तत्व पैदा करने की अर्हता रखता है। भाटी ने 1959 में ही शिक्षाक्रम की ये प्रवृत्तियां निरूपित की थी कि राज्य में सम कालिक सामाजिक आर्थिक विकास की स्थितियाँ पाठ्यक्रमों में नहीं उभर रही हैं व्यावहारिक शिक्षण का महत्व घटता जा रहा है अंग्रेजी भाषा के प्रति लगाव कम होता जा रहा है और कृषि विज्ञान तथा वाणिज्य विषयों का मान छात्रों में बढ़ती जा रही है। यों सन 1959 से 1974 तक प्रचलित शिक्षाक्रम में शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं और उनके स्थानों की व्यवहारतया उपेक्षा स्पष्ट रूप से झलकती है।

यह तो हुई औपचारिक रूप में निर्दिष्ट और परीक्षाजन्य पाठ्यक्रमों की बात किन्तु जब श्रीमती शर्मा (1967) ने स्कूलों में चल रही नवीन प्रवृत्तियों की खोज की तो उन्होंने पाया कि स्कूलों में उदात्त विचारों का महत्व स्वीकार किया जा रहा था प्रातःकालीन प्रार्थना-सभा, स्काउटिंग व गुरु पुस्तकालय की प्रवृत्तियाँ स्कूलों में वर्तमान थीं अनुशासन को विशेष महत्व मिल रहा था और अन्तर्निहित मूल्यांकन कार्यक्रमों को जाँचा भी जा रहा था। शिक्षाक्रम में ये सब पक्ष भी आनुषंगिक अपरिभाषित पाठ्यक्रम के रूप में समाहित हैं इन्हें यह मानकर चलना चाहिए। इनके अलावा धार्मिक व नैतिक शिक्षा भी इसी तरह के आनुषंगिक शिक्षाक्रम का अंग है यह बात जैन (1974) के अनुसंधान से उभरती है जिसमें यह पाया गया है कि शिक्षकगण इस शिक्षा को छात्रों

के लिए जरूरी मानते हैं, यद्यपि वे यह नहीं मानते कि जन्म के धर्म का ही आजीवन सिखाया जाए, उसके स्थान पर वे छात्रों का सर्वधर्म-सामान्य सिद्धान्त सिखाना पसन्द करते हैं यह भी नियमित पाठ्यक्रम के रूप में नहीं, वरन प्रार्थना सभा की प्रवृत्ति के समय।

देश के अन्य भागों की तरह राजस्थान में भी कुछ विशिष्ट शिक्षा धाराएँ यथा माँटेसरी शिक्षा, पब्लिक स्कूल शिक्षा, बाधिता (श्रवण, अन्ध) की शिक्षा विशेष नारी शिक्षा चलती हैं। किन्तु इन अनुसंधानों की सीमा में वे सत्र नहीं सिमट पाई हैं। एक अध्ययन शिशु (नर्सरी) शिक्षा पर (शर्मा 1961) हुआ था जिसमें पाया गया कि अपने शिशुओं के सम्बन्ध में अभिभावकों की अपेक्षाएँ अध्यापकों से कहीं अधिक रहती हैं यह भी कि अल्पायु में शिक्षारम्भ करने से छात्र की सीखने की गति में विशेष वृद्धि नहीं होती, किन्तु हाथ का काम करने में, विविध वस्तुओं का परिचय प्राप्त करने में और नानारंगी पुस्तकें सामने आने से पठनोद्यतता जरूर बढ़ती है। इसी तरह एक अध्ययन (श्रीमती आभा 1970) स्त्री शिक्षा सम्बन्धी शिक्षाक्रम पर हुआ, जिसमें स्वामी विवेकानन्द तथा भगिनि निवेदिता के पत्रों/साहित्य आदि के अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला गया कि भारतीय परिवेश में स्त्री शिक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसमें (क) मातृभाषा (ख) एक विदेशी भाषा (ग) संस्कृत भाषा (घ) हस्तकला व चित्रकला तथा (ङ) सामान्य विज्ञान व सामान्य ज्ञान सिखाने की व्यवस्था रहे।

भाषागत पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें

बालक की शिक्षा में अथवा सम्पूर्ण शिक्षाक्रम में भाषा का पाठ्यक्रम रीढ़वत होता है इसलिए यदि इन अनुसंधान कार्यों में इस क्षेत्र में सर्वाधिक (13) अनुसंधान कार्य मिलते हैं तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। बालक की शिक्षा में प्रारम्भिक पाठ्य पुस्तकों का अत्यधिक महत्व माना जाता है और उनके लिए बच्चों की व्यवहार शब्दावली जानने-गुनने और उनकी पाठ्यपुस्तकों में उसे फलित देखने की प्रवृत्ति भी रहती है। इस दिशा में पहला अनुसंधान श्रीमती रुक्मिणी रामचन्द्रा ने 1958 में किया और पता लगाया कि आयु वर्ग 7–8 के बच्चों की व्यवहार शब्दावली 1232 थी जबकि पाठ्यपुस्तकों में 825 विभिन्न शब्द आए थे। बनी (1960) के अनुसार मोटे रूप से 36 प्रतिशत व्यवहार के शब्द पुस्तकों के शब्दों में सम्मिलित थे और 6 प्रतिशत शब्द ऐसे थे जो बच्चों के प्रत्यक्ष ज्ञान के स्तर से परे के थे। उसी दायरे में बच्चों के व्यवहार शब्दों में दो तिहाई संज्ञा शब्द हैं और शेष में से सर्वाधिक क्रिया शब्द होते हैं और वे सब खेलकूद खाद्य सामग्री घरेलू काम-काज के पशु-जगत और प्रकृति सम्बन्धी होते हैं। इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों का उपयोग प्रारम्भिक पठन पुस्तकों में किया जा सकता है और व्यवहार शब्द तथा पुस्तकीय शब्दों के लिए परस्पर परिपूरक सहायक सामग्री की सम्भावनाएँ खोजी जा सकती हैं।

भाषागत शिक्षाक्रम में बच्चों की पठन रुचियाँ और आवश्यकताएँ जानकर उनके लिए आवश्यक सामग्री प्रस्तुत करना एक अनिवार्य सिद्धान्त होता है। इस दिशा

म शर्मा (1954) ने मालूम किया कि आयु वग 8–12 के बच्चो म से 53 73 प्रति शत कहानियाँ, 12 23 प्रतिशत जीवनियां और 9 7 प्रतिशत कविताएँ पसन्द करते हैं, अभिभावक तथा शिक्षक दोनो बच्चो की मानसिक क्षमता और रुचि को उनके शिक्षा क्रम मे मुख्य निर्णायक मानते हैं। इधर मटाई (1959) क अध्ययन स पता लगता है कि छात्रा म आत्मकथा, संक्षिप्तीकरण सवादलेखन, विस्तार व अनुवाद जसे रचना-कार्यों के प्रति रुचि बिलकुल नही थी तकयुक्त लेख भी एकदम नापसन्द किए जात थे, प्रतिभाशाली छात्र वणन विवरण वाले लेख पसन्द करत थे किन्तु औसत दर्जे के छात्र उन्ह नापसन्द करते थ। उधर औसत छात्रो का काल्पनिक लखा म आनन्द आता है तो पिछडे हुए छात्र उन्ह अच्छा नही मानते। छात्राएँ वणनात्मक लेख पसन्द करती हैं और जीवनिया को नापसन्द। छात्राओ की इस पसन्द की पुष्टि सुश्री माथुर (1968) के अध्ययन स भी होता है। व एक आयाम और जोडती है कि किशोर छात्राएँ (कक्षा XI की) सामाजिक कहानिया और उपन्यास ज्यादा पसन्द करती है जबकि आयु वग 8–10 की कन्याएँ परियो की और राजा रानी की कहानिया म दिलचस्पी रखती हैं। हमारे लिए यह कथन का आधार बनता है कि अगर अलग अलग समय की खोजो से समान तथ्य उभरें तो उन्ह पाठ्य सामग्री का निरूप बनान म उपेक्षित नही माना जाना चाहिए।

समकालीन पाठ्यपुस्तको के जो विश्लेषणात्मक अध्ययन हुए है वे बताते हैं कि शिक्षार्थी की अपेक्षाओ वाले सिद्धान्त की शिक्षाक्रम और पाठ्यपुस्तको के नियामक अथवा व्यवहृति पक्ष म कितनी और कमी स्थिति है। पुरोहित (1970) न पाया कि कक्षा VIII की हिन्दी पुस्तक शिक्षणगत उद्देश्यो की परिपूर्ति नही करती छात्रो के लिए अनुभव आधारित या जीवनगत मूल्य नही प्रदान करती और उसके अधिकाश पाठो को छात्र रुचिपरक नही मानत। अब्दुल रहमान (1972) न भी कक्षा VI VII VIII तीनो की हिन्दी पुस्तको को छात्रो की जरूरता के अनुकूल नही पाया। उनके अनुसार ये समाज की समकालिक विकास की अवस्थाओ और आकाक्षाओ को प्रतिफलित करती प्रतीत नही हुइ इनम चित्रो का अनावश्यक समावेश और विषयगत एकता की दृष्टि से असन्तुलन था।

किन्तु माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर एक दूसरा ही तथ्य इन अनुसधानो म उभरता है। श्रीमती शर्मा (1970) न पाया कि ग्यारहवी कक्षा के विद्यार्थी भाषा पुस्तको के साम्कृतिक आशयो का समुचित श्लाघा करत हैं और अपन पारिवारिक और जातीय सास्कृतिक परिवेश क सन्दभ स पुस्तकीय आशयो की व्याख्या करत हैं। उधर तिवारी (1972) ने मालूम किया कि माध्यमिक स्तर की पाठ्यपुस्तको म भाषा का पक्ष अधिक मुखर हुआ था उद्देश्यनिष्ठता शत प्रतिशत आई थी, जबकि वह 1964 की पुस्तको म केवल 50 प्रतिशत ही थी मौखिक काय के प्रसग 14 प्रतिशत आए। लघूत्तर व वस्तुनिष्ठ प्रश्न व अभ्यास 90 प्रतिशत बढे जबकि लम्बे उत्तर वाले प्रश्न घट गए। यह प्रभाव सावजनिक परीक्षाओ का ढाचा बदल जान के कारण भी था और सामाजिक सास्कृतिक परिवेश की बदलती चेतना क कारण भी।

इन अध्ययनो के आशय से इतना तो कहा जा सकता है कि कक्षा VI, VII, VIII के स्तर को छोड कर, शेष स्तरा पर भाषागत पाठ्यक्रम और पाठयपुस्तको मे शिक्षार्थी की अपेक्षा से और युगबोध की अपेक्षा से सन्तोषजनक परिवतन की प्रवृत्ति मुखर है।

अग्रेजी हमारे शिक्षाक्रम में एक अनिवाय विषय रहा आया है, बावजूद इसके कि ग्रोड (1959) ने पाया था कि छात्र उसे पसन्द नही करत और ढिल्बर (1959) के अनुसार 68 9 प्रतिशत छात्र उसे इसलिए पढते थे कि वह उनके लिए अनिवाय कर दिया गया था। 50 प्रतिशत छात्र उच्चारण और वतनी की कठिनाइया के कारण दुखी थे, और अगर छात्रा का विश्वास हो जाए कि तकनीकी उद्योगा और विज्ञान मे उसके बिना काम चल सकेगा तो व उसे पढने को भी तयार नही थे। हूर (1961) के अनुसार मानवी कक्षा के छात्रा की अग्रेजी शब्दावली नितान्त रूप म उनकी पाठ्य-पुस्तक से बँधी रहती है और औसत छात्रा की अपेक्षा प्रतिभाशाली छात्र कुछ ही शब्द ज्यादा जानत हैं। सुश्री बागची (1973) के अनुसार उनकी गलतिया के दायरे वतनी, शब्दाथ कैपिटल वण और विराम क हैं जिनम प्रतिभाशाली छात्र कम गलतियाँ करते है और पिछडे छात्र सवाधिक। वतनीगत त्रुटिया की सीमा 6 99 से 14 74 प्रतिशत तक शब्दाथ की 7 29 स 16 69 प्रतिशत तक, कैपिटल वण की 5 7 से 10 96 प्रतिशत तक और विराम चिह्ना की 12 71 से 24 24 तक थी। सुश्री माथुर (1972) न मालूम किया कि अग्रेजी म केवल शब्द रूप म सिखाई गई बातें छात्रा को याद नही हो पाती प्रजेट इनडेफिनिट के वाक्य उनके लिए कठिन होते हैं और ee, ie, e और ei वाल वतनी व उच्चारण रूप बहुत कष्टदायक होते हैं।

अग्रेजी के शिक्षाक्रम म इन तथा एसे ही अन्य अनुसधान कार्यो स प्राप्त तथ्या का उपयाग करके, उस शिक्षाक्रम और शिक्षण सामग्री को भारतीय/प्रादशिक स्तर पर ढालने की अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत होती है।

भाषा क क्षत्र म सस्कृत आदि तृतीय भाषाएँ भी हमारे शिक्षाक्रम का एक आवश्यक अग है किन्तु उनक बार म एक भी अध्ययन हमारे सामने उपलब्ध नही है।

सामाजिक ज्ञान पाठयक्रम एव पाठयपुस्तकें

भाषा क साथ-साथ सामाजिक ज्ञान हमारे शिक्षाक्रम का दस वर्षीय अनिवाय अग है। या इस शिक्षा अवयव की सद्धान्तिक भूमिका बहुत व्यापक और आदश लक्ष्यी मानी जाती है किन्तु हमारा प्रचलित पाठयक्रम इसे सञ्जीव के किस धरातल पर उतारे हुए है, इसका पता हम राजसिंह (1962) के अध्ययन से लगता है। तदनुसार उसमे समसामयिक सामाजिक आर्थिक स्थितियो का समावेश नही है सामाजिक जीवन के शिक्षिक उद्देश्य को पूरा करन म पाठयक्रम सक्षम नहीं है और यह बात राजस्थान और पजाब दाना राज्या के लिए समान रूप से लागू है। यही तथ्य शुक्ल (1956) ने प्राप्त किया था जब उन्हान उस समय की कक्षा VI VII, VIII की सामाजिक ज्ञान की पाठयपुस्तका का सर्वेक्षण किया था। उसम उन्हान समसामयिक प्रसगा के अभाव के

साथ-साथ यह भी मालूम किया था कि पुस्तकों की सामग्री छात्रों की आयु, योग्यता व रुचि के अनुरूप नहीं थी। इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र के अलग अलग और विभिन्न प्रकरणों में सामाजिक ज्ञान नामक पुस्तकें बनाई गई थीं और उनमें सम्बन्ध समन्वय बिल्कुल नहीं था। किन्तु सामाजिक ज्ञान की पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें सन 1971 में इतनी विकसित बहुत ठीक पाई गई उनमें सामान्य और अच्छे छात्रों के लिए प्रायः समस्यात्मकता रही (सामान्य स्तर की अपेक्षा में 58 प्रतिशत तथा अच्छों की 55 प्रतिशत) और शिक्षक ... की प्रतिक्रिया अनुकूल पाई गई (गुप्ता 1971)। इस परिवर्तन का कारण यह था कि 1968 में कक्षा I से VIII तक के पाठ्यक्रम का नवीनीकरण हो चुका था और इस पर आधारित नई पाठ्यपुस्तकें सन 1970 में प्रचलित हो गई थीं। गुप्ता व शिवकर्मी का समस्त ... (1974) के अध्ययन में भी पाया है कि विभाग सामाजिक ज्ञान की कक्षा VI, VII, VIII की नई पाठ्यपुस्तकों की सामग्री की गहराई उनकी कसौटी पर भी अनुकूल पाई गई।

किन्तु माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्तर पर सामाजिक ज्ञान के शिक्षण अथवा पाठ्यपुस्तकों का अधिक प्रभाव इन अनुसंधानों में दिखाई नहीं देता। 1957 में गुप्ता ने मालूम किया था कि पुस्तकों की सामग्री तथ्य-सम्बन्धित कठिनाइयों से नितान्त विभिन्न थी। छात्रों के जीवन व अनुभवों से उसका दूर का भी नाता नहीं था। स्वयं 1973 में उन्होंने ने शिक्षा की सामाजिक ज्ञान शाखा का सर्वेक्षण किया तो पाया कि उसमें अधिकांश कमियाँ ज्यों की त्यों विद्यमान थीं। अध्यापकों का सामान्य व सामाजिक समस्याओं बनाना या अभाव 60 प्रतिशत तक विद्यमान था। दर्शनीय राष्ट्रीय पर्वों (स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस) का व जीवन के मूल्य गुणात्मक बोध और अन्तर्राष्ट्रीय आधार के लिए इन स्वतन्त्रता सेनानियों का भी ज्ञान नहीं था। इसी प्रकार भूगोल विषय के प्रति छात्रों में 90 प्रतिशत रुचि कम थी (1973) न इसका किन्तु उसका सामाजिक चेतनात्मक प्रभाव दूर पाया। इस समय पाठ्यक्रम में व्यावहारिक अनुभव, प्रयोगों की सुविधा और सहायक सामग्री की स्थिति दयनीय रही है। इस स्तर पर सामाजिक ज्ञान की प्रभावशीलता का एक कारण तो यह दिखाई देता है कि माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के प्रयास से इस का पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीयकरण की स्थिति राजस्थान में नहीं बना है। आज भी इस क्षेत्र में अति-उत्साह की व्यक्ति-गत कृतियों को अनियन्त्रित रूप से प्रयोग में लिया जाता है और मूल्य भी अधिक होना स्वाभाविक हो सकता है। समसामयिक और दैनिक जीवन के प्रकरण इस स्तर पर पाठ्यक्रम में न होना (गुप्ता 1957 तथा बाफना 1973) वस्तुतः एक चौंकाने वाला तथ्य है और इस पर बोर्ड तथा विभाग का ध्यान आकर्षित होना चाहिए।

विज्ञान पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें

विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान के प्रथम चरण 1962 में शुरू हो पाते हैं। इसके बाद 10 वर्षों का लम्बा अन्तराल। और फिर पुनः 1972 से इस क्षेत्र में अनुसंधान

वाय हाने दिखाइ देते है। 1972 सु सम्भवत इस कारण भी कि इसी वप से क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर न विशेषत विज्ञान म एम एड पाठयक्रम आरम्भ किया था।

1962 म त्रिपाठी न राजस्थान के सामान्य विज्ञान पाठयक्रम की इग्लण्ड के समवर्ती पाठयक्रम से तुलना करके पता लगाया कि वहा की तुलना म यहा का पाठय क्रम अनिर्दिष्ट और गोलमाल ढग स तयार हुआ था, उनम छात्रा की रुचिया और उनकी क्षमताओं का ध्यान नही रखा गया था, पुस्तकें केवल सूचनात्मक थी और उनम समझदारी या समालोचना जगाने की क्षमता नही थी, उनम प्रयोग के उपकरण, उत्प्रेरणा और उपयोजन के अवसर नही दिए गए थे। किन्तु सन 1970 म जिस नये पाठय क्रम का प्रचलन हुआ और उसमें जिन जिन प्रकरणो/विषया को सामान्य विज्ञान नाम से अनुग्रथित किया गया उनके वारे में सुश्री जसजीत कौर (1973) न मालूम किया कि ब्रह्माड 52 प्रतिशत रसायन विज्ञान 30 प्रतिशत भौतिक शास्त्र 40 प्रतिशत, जीव विज्ञान 30 प्रतिशत वनस्पति जगत 7 प्रतिशत, कृषि विज्ञान 10 प्रतिशत, शरीर विज्ञान 19 प्रतिशत पोषण 9 प्रतिशत और रोग विज्ञान 19 प्रतिशत छात्रो की रुचिया प्राप्त करते हैं। पुस्तक में उनका समानुपात क्या हो उसका निर्धारण करने में ये तथ्य उपयोगी मान जा सकत है। किन्तु पुस्तक के बारे में सुश्री जसजीत का कहना है कि व सैद्धान्तिक निरूपण ज्यादा करती है और छात्र उस पसन्द नही करते। विज्ञान की पुस्तका की इस कमी वाले तथ्य को मिश्रा (1972) के अध्ययन मे भी पुष्टि का प्रमाण मिलता है। वे कहते है कि इन पुस्तका में न तो अनुसधान पद्धति पर प्रस्तुतीकरण हुआ है न समस्या समाधान की शैली पर, न ही उनमें छात्रा की कल्पना को मुखरित करने के अवसर है। गुप्ता (1974) भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि पुस्तकें अनुसधान पद्धति पर तैयार की जाना चाहिएँ। 1974 में ही शर्मा न पाया कि माध्यमिक स्तर का सामान्य विज्ञान पाठयक्रम शैक्षिक उद्देश्या भौगोलिक आवश्यकताओ व भारतीय परिस्थितिया के लिए अनुपयुक्त है। पुस्तका में प्रयोग या तो आडम्बरपूर्ण या असम्भव स्थितिया वाले हैं। सबस बडी कमी यह है कि मानविकी व विज्ञान सकाया के लिए एक ही पाठयक्रम है।

इन सब अध्ययना स यह मत बनती है कि राजस्थान के सामान्य विज्ञान तथा विज्ञान पाठयक्रमा म अभी भी लोकोन्मुखता और जीवनोपयोगिता की भारी गुजाइश बनी हुई है। एक विचार यह भी है कि यदि पाठयक्रम और पाठयपुस्तकें सम्यक पूर्ण न हो तो शिक्षको के लिए विज्ञान सदर्शिकाएँ तयार कराई जानी चाहिए। इस दिशा म गुप्ता (1972) ने रसायन विज्ञान सदर्शिका की रूपरेखा विकसित की जिसके अनुसार उसम प्रकरण/इकाई की परिभाषा व्यवहारगत शिक्षण उद्देश्य मूल्याकन उद्देश्य सहायक सामग्री प्रयोग चित्र, उदाहरण उपयोजन के अवसर और पूर्वापर सम्बन्धो की जानकारी आनी चाहिए।

सहशैक्षिक कार्यक्रम

आज स्कूला म हम जिन प्रवृत्तियो/कार्यक्रमा को सहशैक्षिक प्रवृत्तिया क नाम से जानते मानते है वे वस्तुत हमारे घोषित और प्रकाशित पाठ्यक्रमा के

चलन वाले उनके प्रतिनिधि हैं। जब 1947 के पहले असंगठित, अनियमित पाठ्यक्रम थे तब भी सहगामी सांस्कृतिक आयोजन व समाज सेवा के कार्यक्रम स्कूलों में किसी न किसी रूप में विद्यमान थे। 1952 में जब विभाग और शिक्षा बोर्ड द्वारा पारित स्कूली शिक्षाक्रम प्रकाश में आया तो उनमें पठन-पाठन सम्बन्धी विषयानुसारिता ही प्रकाशित हुई किन्तु विकासमान समाज की आवश्यकता से, स्कूलों में इन अतिरिक्त कार्यक्रमों की संख्या और सघनता बढ़ती चली गई। हमारे सामने अभी तक ऐसे अध्ययन तो उपलब्ध नहीं हैं जो बता सकें कि कौन से कार्यक्रम कब-कब अस्तित्व में आए किन्तु आनुभविक तथ्य बताते हैं कि पत्र उत्सव विद्यालय सुधार सजावट, सहकारी प्रतियोगिताएँ छात्र सभाएँ साहित्यिक कार्यक्रम स्काउटिंग-गाइडिंग वगैरह कार्यक्रम स्कूलों में स्वच्छिक रूप से समाविष्ट और सघनतर होते चले गए। सन 1956 तक इन्हें पाठ्येतर माना जाता रहा था उसके बाद इन्हें पाठ्य सहगामी माना-कहा जाने लगा 1960 से आगे पहली गई। आज इन्हें सहगामी (कारिकुलर) कहना ज्यादा पसन्द करते हैं। 1967 में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने कक्षा IX से XI तक के लिए उन्हें विधान सम्मत बनाने के प्रयोजन से ग्यारह आनुक्रमिक मूल्यांकन योजना में उन्हें समन्वय का उपाय किया और विभाग ने विभिन्न संस्थाओं की प्रायोजना के माध्यम से और पचास से उनके समावेश के माध्यम से उन्हें स्कूली कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाने का विधान किया। सन् 1972 में विभाग ने इस निमित्त स्कूलों के पुराकालीन 6 घण्टे के स्थिर कार्यकाल को बढ़ाकर 7 घण्टे का किया।

इस आनुभविक विकास क्रम को प्रमाणभूत बनाने वाले कुछ गिनती के अध्ययन एवं अनुसंधान कार्यों में भी उपलब्ध हैं जो विद्यालयों में सहगामी प्रवृत्तियों की स्थिति उजागर करते हैं। सिराज अहमद मिर्जा ने 1956 में मालूम किया था कि विद्यालयों में पाठ्येतर कार्यक्रमों (एक्स्ट्रा करिकुलर) में छात्रों की प्रतिभागिता अनिवार्य नहीं थी उनके लिए स्कूलों में प्रावधान भी नहीं था विद्यालय और प्रशासन उनके आयोजन में प्रवर्तन कारक दृष्टिमति भी नहीं रखते थे, इसलिए स्थान साज-सामान और प्रशिक्षण की कोई स्पष्ट स्थिति नहीं थी। नामा (1962) ने मालूम किया कि विद्यालय के सभी शिक्षक इन प्रवृत्तियों में भाग नहीं लेते थे बल्कि कहते थे कि शिक्षण और परीक्षण मुख्य काम है इसलिए इनमें से लाभ नहीं होता उन्हें अपना शिक्षण कार्य भी बहुत भारी मालूम होता था स्कूल-समय के बाद प्रवृत्तियाँ चलाने हेतु रुकने में वे असुविधा अनुभव करते थे, उन्हें यह बात खटकती थी कि इस अतिरिक्त कार्य के लिए उन्हें कोई प्रोत्साहन नहीं है। विद्यालयों में से 36 प्रतिशत उन कार्यक्रमों को सफल आयोजन मानते थे 43 प्रतिशत निरर्थक अपव्यय मानते थे और 21 प्रतिशत इस मामले में तटस्थ भाव रखते थे। नामा ने पता लगाया कि सहगामी कार्यक्रमों में प्रार्थना-सभा सामूहिक ड्रिल राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन और वाद विवाद नियमित तथा मुख्य थे। विभिन्न विद्यालयों में से 80 प्रतिशत अभिनय 84 प्रतिशत सफाई बन्द कार्य 80 प्रतिशत संगीत, 66 60 प्रतिशत छात्र-संघ 53 3 प्रतिशत भ्रमण 5 प्रतिशत वानचर, 43 3 प्रतिशत विद्यालय पत्रिका, 40 प्रतिशत राष्ट्रीय संकट कार

25 प्रतिशत विद्यालय प्रदर्शनी और 20 प्रतिशत वाटिका निर्माण के कायक्रम चला रहे थे। विभिन्न घटकों का और खास करके 73 3 प्रतिशत छात्रों का मत था कि उनसे छात्रों की शक्षिक चेतना म वृद्धि होती है किन्तु 26 7 प्रतिशत छात्र या तो परीक्षा के भय से या आर्थिक-सामाजिक हीन भावना के कारण, या अभिभावकों के असहयोग के कारण उनम इच्छुक नही पाए गए। जब सिंघवी ने 1970 मे स्थिति का जायजा लिया तो छात्रों की सामाजिक गतिशीलता और इन कायक्रमों मे उनके प्रतिभागीत्व के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया, किन्तु विद्यालयों मे शक्षिक कार्यों और सह शक्षिक आयोजनों के बीच सम्बन्ध समन्वय की कोई स्थिति नही थी। योजनाबद्ध काय का अभाव, शिक्षकों की अरुचि और अभिभावकों की उपेक्षावृत्ति मुखर थी।

सम्भावनाएं एव सुझाव

विश्वविद्यालयीय उपाधियां प्राप्त करने हेतु किए गए इन अनुसधान कार्यों में भी वे न्यूनताएँ स्पष्ट झलकती हैं जो ऐसे अनुसधान कार्यों मे प्राय रह जाया करती है। ये भी सीमित न्यादर्श पर आधारित है जिनका विस्तार क्षेत्र प्राय एक कक्षा, एक विद्यालय अथवा एक नगर तक ही है। फिर न्यादर्श के चयन म अनुसधानकर्ता की सुविधा प्राय निर्णायक घटक रही है परिणाम स्वरूप न्यादर्श प्रतिनिधि नही बन पाए हैं। जसा कि पूव विश्लेषण से स्पष्ट है इन अनुसधान कार्यों म से अधिकांश (90 प्रतिशत से अधिक) म सर्वेक्षण विधि प्रयुक्त हुई है और प्रश्नावली प्रमुख उपकरण (70 प्रतिशत से अधिक म) रहा है। ये दोनों विश्वसनीयता की दृष्टि से सन्तोषप्रद नहीं माने जाते और इन पर आधारित निष्कर्षों की पुष्टि करने की आवश्यकता बना रहती है। क्रमिकता का अभाव होने के कारण इन अनुसधान कार्यों म अनेक रिक्तताएं रह गई हैं और कोई पूर्ण चित्र प्राय उभर नही पाए हैं।

परिव्याप्ति की दृष्टि स देखें तो 80 प्रतिशत से अधिक अनुसधान काय माध्यमिक स्तर के शिक्षाक्रम स सम्बन्धित है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अन्य स्तरों के शिक्षाक्रमों पर अनुसधानकर्त्ताओं का समुचित ध्यान नही गया है। प्राथमिक स्तरीय शिक्षा (जिसे सावजनीन बनाने के लिए हमारा देश विशेष रूप से प्रयत्नशील है) के विषय में अनुसधान काय का यह अभाव विशेष रूप से खटकने वाली बात है, क्योंकि इस क्षेत्र में व्याप्त अतिशय अपव्यय एव अवरोधन और धीमी प्रगति के प्रमुख कारणों में प्रचलित शिक्षाक्रम की अनुपयुक्तता भी सभवतया एक है।

किन्तु इन सीमाओं के बावजूद गत बीस वर्षों में किए गए इन अनुसधान कार्यों ने शिक्षाक्रम एव पाठ्यपुस्तकों सम्बन्धी एम अनेक तथ्य उजागर किए गए हैं जो न केवल भावी अनुसधानकर्त्ताओं को ही उपयोगी आधार प्रदान करते है वरन् शिक्षाक्रम आयोजकों एव पाठ्यपुस्तक निर्माताओं के लिए भी महत्वपूर्ण दिशा निर्देशन करते है। कक्षा शिक्षकों के लिए अपने अध्यापन काय को अधिक प्रभावी बनाने एव उपयोगी क्रियानुसधान काय आरम्भ करने में सहायक अनेक सम्भावनाएं एव सुझाव भी इन अनुसधान कार्यों में निहित हैं।

ऐसी सम्भावनाओं एवं सुझावों को जिन्हें अनुसंधान कार्यों का विश्लेषण करते समय यथा स्थान संकलित कर लिया गया है, एक साथ इस प्रकार रखा जा सकता है :

बुनियादी शिक्षा-योजना की विफलता से हम पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को शिक्षा की आकांक्षाओं से भिन्न दिशा में न जाने देने के लिए विशेष रूप से सतर्क रहना चाहिए।

- शिक्षाक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों में वांछित सुधार-कार्य को गतिशील बनाने के लिए राज्य में स्थायी समितियों का गठन करना अत्यावश्यक है।

शिक्षाक्रम में शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं, अभिक्षमताओं एवं अभिरुचियों को समुचित महत्व देने की वांछित अपेक्षा को पूर्ण करने के लिए व्यापक स्तर पर अनुसंधान कार्य प्रारम्भ किया जाना चाहिए।

व्यवहार में प्रायः बालकों एवं पुस्तकीय ज्ञान के मध्य पाया गया अन्तर जहाँ एक ओर कक्षा शिक्षण में इस तथ्य को ध्यान में रखने की वांछनीयता को प्रकट करता है, वहीं दूसरी ओर पाठ्यपुस्तक निर्माताओं के लिए महत्वपूर्ण दिशा निर्देशन भी करता है।

- विभिन्न कक्षा-स्तरों के छात्रों की रुचि-सूची का ज्ञान भी इस दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है।

इसी प्रकार हिन्दी, सामाजिक विषयों एवं विज्ञान विषयों की पाठ्यपुस्तकों के उद्देश्यों की सम्पूर्ति की दृष्टि से किए गए विश्लेषणों ने इन पुस्तकों के सुधार हेतु अनेक उपयोगी तथ्य उजागर किए हैं।

पाठ्यक्रम में अंग्रेजी को अनिवार्य विषय के रूप में बनाए रखने की वांछनीयता पर कुछ अनुसंधान कार्यों द्वारा प्रश्न चिह्न लगाए गए हैं और इस प्रकार इस प्रश्न के गहन एवं व्यापक स्तर पर अध्ययन की आवश्यकता को उजागर किया है।

सह-शैक्षिक प्रवृत्तियों के आयोजन से सम्बन्धित अनुसंधान कार्य संख्या में कम होते हुए भी विद्यालयों में इनके आयोजन की स्थिति को स्पष्ट करने में काफी हद तक सफल रहे हैं और शिक्षण कार्य के साथ इनके गुम्फन एवं समन्वय की सम्भावनाएँ खोजने की वांछनीयता को स्पष्ट करते हैं।

इन अनुसंधान कार्यों की सीमाओं और उपेक्षित रह गए पक्षों की दृष्टि से इस क्षेत्र पर भावी अनुसंधान कार्य के लिए जो सम्भावनाएँ उभरती हैं, उनमें से कतिपय इस प्रकार हैं :

—ब्लूम द्वारा प्रस्तावित उद्देश्यों के वर्गीकरण की भारतीय सन्दर्भ में परख,

—ज्ञान के विस्फोट और वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के सन्दर्भ में विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों एवं पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषण,

—शिक्षाक्रम आयोजन म शिक्षकों, अभिभावकों, छात्रा, राजनैतिक एव सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के सम्भागीत्व की सम्भावनाओं की खोज,

—वर्तमान परिस्थितिया एव आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षाक्रम प्रतिमान का निर्माण,

—पाठ्यक्रम म विभिन्न विषया एव प्रकरणा के समावेश के निष्कर्ष तयार करना,

—शिक्षा को उत्पादन से सम्बद्ध करन के लिए किए गए प्रयोगा का अध्ययन करके इस दिशा म उपयुक्त प्रतिमानों का निर्माण एव परीक्षण,

—प्राथमिक शिक्षा को सार्वजनीन बनाने के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षाक्रम म परिवर्तन क लिए किए गए प्रयासा का अध्ययन और सामयिक आवश्यकताओं के अनुरूप पुर्ननिर्माण एव वविध्याकरण,

—महिलाओं और पुरुषा के लिए समान अथवा भिन्न प्रकार क शिक्षाक्रम के औचित्य अनौचित्य का अध्ययन, तथा

—अनौपचारिक शिक्षा प्रौढ शिक्षा एव अशकालीन शिक्षाचर्याओं सम्बन्धी अनुसधान कार्य।

सदर्भाकित अनुसधान

अग्निहोत्री, रवीन्द्र	An Evaluation of the Arts Curriculum at the Higher Secondary Stage in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1974
अब्दुल रहमान	कक्षा VI, VII और VIII की हिन्दी पाठ्यपुस्तको का एक मूल्याकन, एम एड, उदयपुर वि वि 1972
ओभा, सीतादेवी	स्त्री शिक्षा मे भगिनि निवेदिता का योगदान, एम एड, राज वि वि, 1970
आड, लक्ष्मीलाल केसरीलाल	A Comparative Study of Curriculum Development at the Secondary Stage M Ed Raj Uni 1959
कपूर, बी के	An Experiment in Developing Appreciation for a Foreign Culture M Ed Raj Uni 1961
कुण्डू, चुन्नीलाल	Evaluation of History Text Books for High School Classes M Ed Raj Uni 1957
केशन, जी हरि	Basic Education in the Light of Montessory Principles M Ed Raj Uni 1960

गुरनानी गगनदास श्यामदास	A Study of Some Correlates in Work Experience of the Delta Class M Ed Raj Uni 1968
गिरधारीलाल	The Trends in Nationalization of School Text Books M Ed Raj Uni 1958
गुप्ता बनवारीलाल	An Evaluation of the Text book of Social Study of Class VII M Ed Raj Uni. 1971
गुप्ता मदनमोहन	Evaluation of Science Curricula in the State of Rajasthan M Ed Raj Uni 1974
गुप्ता सन्तकुमार	Developing Curriculum Guide in Chemistry for Secondary School Teachers in Rajasthan M Ed Raj Uni 1972
चम्पावत मानसिंह	उच्च प्राथमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित सामाजिक ज्ञान पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीय एकता में योगदान के सन्दर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1974
चारण, नन्दलाल	Problems of Conversion of Non-Basic Schools into Basic Schools in Udaipur City M Ed Raj. Uni 1957
छिब्बर बलदेवकृष्ण	Secondary School Pupils Attitude towards English M. Ed Raj Uni. 1959
जसवन्त कौर	छात्र जिज्ञासा के सन्दर्भ में माध्यमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित सामान्य विज्ञान पाठ्यसामग्री का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1973
जैन श्यामसुन्दर	माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों की धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्तियाँ, एम एड उदयपुर वि वि, 1974
तरुण तेजसिंह	उच्च माध्यमिक विद्यालय में पाठ्येतर प्रवृत्तियों के प्रति रुचि एक अध्ययन, एम एड, उदयपुर वि वि 1974
तिवारी पुरुषोत्तमदास	The Effects of Rajasthan Board's New Type Question Papers on the Teaching of Compulsory Hindi at Secondary Level M. Ed., Raj. Uni. 1972
पण्डित सुजाता	An Investigation into the Mental Abilities Developed in Higher Secondary School Girls Offering Optional Subjects in Humanities and Science Groups M. Ed., Raj. Uni. 1966

पुरोहित, जेड एन	A Critical Study of Nationalized Text Books in Hindi VIII Standard in relation to the Objectives Determined by the State Institute of Education Udaipur (Rajasthan) M Ed Jodhpur Uni 1970
फाटक, ए वी	Diagnostic and Remedial Work for Curriculum Development M Ed Raj Uni 1961
बागची, नमीता	Diagnosis of Language Errors in English for Class VIII and Exploration of Probable Causes M Ed Raj Uni 1973
बीदावत, शेरसिंह	राष्ट्रगान अर्थ एव उद्गम और माध्यमिक विद्यालय छात्र (एक अन्वेषण), एम एड राज वि वि 1970
बनी, निर्वाणसिंह	A Study of the Vocabulary of the Children of the Eight plus Age group M Ed Raj Uni 1960
भारतीय, सुधा	A Comparative Study of the Interests and Attitudes towards Family Life of the XIth Grade Girl Students Studying Domestic Science and Not Studying Domestic Science M Ed Raj Uni 1974
मटाई भगवानदास चन्दीराम	Likes and Dislikes of Pupils in Written Hindi Composition (Class IX) M Ed Raj Uni 1959
माथुर आभा	An Investigation into the Types of Stories Liked by Girls between the Age of 8 and 10 Years M Ed Raj Uni 1968
माथुर, सुशीलरानी	Diagnosis of Language Errors in English in Class VI M Ed Raj Uni 1972
मिश्रा, श्यामपाल	*A Comparative Study of Prescribed Chemi*stry Text Books for Schools in Rajasthan M Ed Raj Uni 1972
मुरडिया, सुन्दरसिंह	माध्यमिक विद्यालय के छात्रा और छात्राओ की वर्तमान पाठयक्रम के प्रति मनोवृत्तियाँ, एम एड, राज वि वि, 1970
रघावा, जीवासिंह	Influence of Home on the Efficiency in Craft in Basic Education M Ed Raj Uni 1955
राजदान, प्राणनाथ	*A Study of the Recent Efforts to Promote* International Understanding through School Programmes M Ed Raj Uni 1963

राधेसिंह	A Comparative Study of Social Studies Syllabus in Higher Secondary Schools of Rajasthan and Punjab M Ed Raj Uni 1962
रामचन्द्रा, रुक्मिणी	A Study in Children s Vocabulary M Ed Raj Uni 1958
रामचन्द्रा, रुक्मिणी	A Study of the Development of Vocabulary of Children of Age group 6 to 8 Ph D (Edu) Raj Uni 1967
राव, एन सगमश्वर	Environmental Studies in Indian Schools M Ed Raj Uni 1974
वर्मा, भागाग्यसिंह	A Study into the Understanding of National Integration at the Different Age Levels of the Adolescents in Secondary Schools of Rajasthan M Ed Raj Uni 1969
वाजपया, आनन्दविहारी	Innovative Practices in Schools An Investigation M Ed Udaipur Uni 1973
वष्णव, रतनलाम	Attitud- of Geography Students towards Geography M Ed Udaipur Uni 1973
शमा, कृष्णकुमार	किशोर छात्र-छात्राओं का राष्ट्रीय सम्बन्धी अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1973
शर्मा, गजेन्द्रपाल	An Investigation into the Provisions made for Co-curricular Activities in High and Higher Secondary Schools for Boys and Girls of Bikaner Division M Ed Raj Uni 1962
शमा, चन्द्रप्रकाश	A Study of Children s Literature in Hindi M Ed Raj Uni 1954
शर्मा, पुष्पलता	A Survey of XI Class Students Evaluation of the Cultural Content of Higher Secondary Text Books in Hindi M Ed Jodhpur Uni 1970
शमा, बाबूलाल	A Plan of Compulsory Basic Education M Ed Raj Uni 1953
शमा, रामकिशोर	Outcomes of Nursery Education M Ed Raj Uni 1961
शमा, सत्या के	A Study of New Trends in Secondary Schools M Ed Udaipur Uni 1967
शमा, सुशीलकुमार	राजस्थान म माध्यमिक स्तर पर सामान्य विज्ञान शिक्षण की वतमान प्रस्थिति का अध्ययन, एम एड, राज वि वि., 1974
शुक्ल, अम्बाप्रसाद	Critical Study of Social Studies Text Books for Class VI VII and VIII M Ed Raj. Uni 1956

सक्सेना, के के	Self Sufficiency in Basic Education, M Ed Raj Uni 1955
साघी, गुणवती	Scope of Creative Expression in Basic School M Ed Raj Uni 1955
सारस्वत, हरिशंकर	Understanding the Nature of Science A Comparison of Science Teachers and Science Students M Ed Raj Uni 1972
सिंघवी, बजरंगमल	A Survey of Co curricular Activities of the Students of Class IX of Some of the Higher Secondary Schools of Jodhpur and their Effect on their Sociability M Ed Jodhpur Uni, 1970
सिंघी सिराजग्रहमद	A Survey of Extra curricular Activities in Udaipur High Schools M Ed Raj Uni 1956
हूडा, सूरजमाल	The Needs of Secondary Class Boys and their Implications for Developing a Core Curriculum for them M Ed Udaipur Uni 1974
हेहर अमरजीतसिंह	A Study of English Vocabulary with reference to Pupils of VII Class M Ed, Raj Uni 1961
त्रिपाठी, जयतशिवदेवकुमार	General Science Curriculum A Comparative Study of Rajasthan with England M Ed Raj Uni 1962



अध्ययन-अध्यापन प्रक्रिया

□ डा. ओंकारसिंह देवल
□ कैलाशविहारी वाजपेयी

अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया का क्षेत्र अध्ययन विधियों की अपेक्षा अधिक व्यापक है। साथ ही अध्ययन व अध्यापन प्रक्रिया एक-दूसरी से इतनी अन्तःसम्बन्धित हैं कि किन्हें दो अलग-अलग प्रक्रियाएं मानकर उन पर हुए अनुसंधान कार्यों का विश्लेषण करना कठिन लगता है। राजस्थान में शिक्षानुसंधान के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया से सम्बन्धित जो अध्ययन अब तक हुए हैं, उन्हें क्षेत्र की दृष्टि से निम्नलिखित ढंग से वर्गीकृत किया जा सकता है : शिक्षण विधियाँ व उनके प्रति अभिवृत्ति, अभिक्रमित अध्ययन, अभिप्रेरण, छात्र व शिक्षक के अन्तःसम्बन्धों का स्वरूप, दृश्य-श्रव्य सामग्री का उपयोग, गृहकार्य एवं त्रुटियों का विश्लेषण, नानात्मक विकास सम्बन्धी अध्ययन तथा अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया से सम्बन्धित अन्य क्षेत्र।

अनुसंधानों को देखने से ज्ञात होता है कि शिक्षण विधियों में सर्वाधिक अध्ययन अभिक्रमित अध्ययन पर हुए हैं जो 1969 से 197[illegible] तक ग्यारह थे। बुनियादी शिक्षा पर कुल चार शोध-कार्य उपलब्ध हैं जो सभी 1959 से पूर्व के हैं। कार्यानुभव के रूप में बुनियादी शिक्षा के एक पक्ष को पुनः 1970 में छुआ गया है। विशिष्ट शिक्षण विधियों एवं उपागमों को लेकर कुल 14 अध्ययन हुए हैं जिनमें से सात सिर्फ हिन्दी शिक्षण विधि पर हैं।

शोध-कार्य में सर्वाधिक अध्ययन सर्वेक्षण विधि पर आधारित हैं। प्रयोगात्मक विधि पर आधारित 14 अध्ययन उपलब्ध हैं। ऐतिहासिक एवं प्रकरण विधि को लेकर एक भी अध्ययन नहीं किया गया लगता है।

शिक्षण विधियाँ एवं उनके प्रति अभिवृत्ति

इस वर्ग में 12 अध्ययन एम. एड. स्तर के तथा 5 अध्ययन राज्य शिक्षा संस्थान द्वारा किए गए हैं।

एक अध्ययन मिश्रा (1973) द्वारा समस्या समाधान में पूर्व कल्पना के योगदान पर किया गया। उन्होंने मालूम किया कि पन्द्रह साल के विद्यार्थियों में समस्या समाधान के लिए पूर्व कल्पना का उपयोग करने की क्षमता विकसित नहीं होती। उन्होंने यह भी ज्ञात किया कि इस अवस्था के विद्यार्थियों के प्रयोग का स्तर भी निम्न कोटि का था।

त्रिपाठी (1974) ने बडी कक्षाओं की समस्याओं का एव उनमे शिक्षण विधियो की उपयुक्तता पर अध्ययन किया। उनके अनुसार बडी कक्षाओं मे अनुशासन की समस्याएँ आती है छात्रो व शिक्षको के अन्त सम्बन्ध नही बन पाते व एक दूसरे से विचारों के आदान प्रदान मे बाधा आती है। बडी कक्षाओं मे बालको की अभिवृत्ति प्राय सनिकवादी बन जाती है व अध्यापक आधुनिक व उन्नत शिक्षण विधियो का प्रयोग नही करते।

एक महत्वपूर्ण तथ्य जो इन अध्ययनो से प्रकट होता है, वह यह कि विद्यालय के विभिन्न विषयो एव उनकी शिक्षण विधियो मे से केवल तीन विधियो को छुआ गया है। बुनियादी शिक्षा पर कोई भी अध्ययन 1960 व 1970 के बीच मे नही किया गया।

हिन्दी शिक्षण

रामावतार शर्मा (1973) ने यह सर्वेक्षण किया कि हिन्दी भाषा के प्रशिक्षित शिक्षक कहाँ तक आधुनिक शिक्षण विधियो का प्रयोग करते है। उन्होने पाया कि आधुनिक शिक्षण विधियो के प्रति प्रशिक्षित हिन्दी अध्यापको की सकारात्मक अभिवृत्ति थी। उन्होने यह भी ज्ञात किया कि अध्यापक कविता एव नाटको के अध्यापन मे आधुनिक शिक्षण तकनीकें काम मे नही लते थे। चौधरी (1969) का निष्कर्ष था कि मौनपठन से अर्थग्राह्यता मे वृद्धि होती है तथा अभ्यास से वाचन की गति मे। रघुनाथ सिंह गौड (1970) ने शिक्षको द्वारा अवधारणात्मक भाषा शिक्षण की विभिन्न तकनीको—(अ) शब्दकोष तकनीक, (आ) सश्लेषण तकनीक (इ) परिभाषा तकनीक व (ई) प्रत्यक्ष अनुभव की तुलना करके ज्ञात किया कि चारो तकनीको की प्रभावशीलता मे काफी अन्तर है, शब्दकोष तकनीक अन्य तकनीको की अपेक्षा कम प्रभावशाली है। पचाली (1968) ने अक्षर विधि एव वाक्य विधि का तुलनात्मक अध्ययन करके पाया कि हिन्दी भाषी प्रदेशो मे, जहाँ हिन्दी मातृभाषा के रूप में सिखाई जाती है वाक्य विधि विशेष प्रभावशाली सिद्ध नही हुई। अक्षर विधि भाषा तत्वो का ज्ञान देने में विशेष उपयोगी पाई गई। अक्षर विधि को अपनाने मे वाचन व लेखन गति में बाधा नही आती। वाजपयी एव पचाली (1970) ने हिन्दी में कलम, होल्डर, पेन व पेंसिल द्वारा सुलेख लिखने के परिणामो का तुलनात्मक अध्ययन किया। इसमे पाया गया कि हिन्दी के अच्छे लेखन में सभी प्रकार से प्रथम स्थान पेन का व तत्पश्चात क्रमश पेंसिल, होल्डर व कलम का रहता है। तिवारी (1967) ने त्रुटि सशोधन की दो विधियो—सीधा सशोधन व सांकेतिक सशोधन—का एक प्रयोगनिष्ठ तुलनात्मक अध्ययन राज्य शिक्षा सस्थान के तत्वावधान में किया। उन्होने पाया कि सीधे सशोधन की अपेक्षा सांकेतिक सशोधन समय की बचत व त्रुटि परिहार में अधिक प्रभावशाली था। सीधे सशोधन के परिणाम स्वरूप त्रुटियो का प्रतिशत 18 से गिरकर 13 जबकि सांकेतिक

शालाओं में सुसज्जित पुस्तकालय नहीं थे न ही उनमें ठीक से रखा जाता रखा जाता था। अतः उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में वाचन प्रवृत्ति का विकास नहीं हो पाता था। साल में छः पुस्तकें पढ़ने वाले छात्रों की संख्या 8 प्रतिशत था 18 प्रतिशत ऐसे विद्यार्थी पाए गए जिन्होंने एक भी पुस्तक नहीं पढ़ी। जिन्होंने कुछ पुस्तकें पढ़ीं उनमें से 43 प्रतिशत ने केवल उपन्यास व कहानी की पुस्तकें पढ़ीं।

पचौरी (1967) ने कक्षा 8 के बालकों की हिन्दी कविता में रुचि पर राज्य शिक्षा संस्थान के तत्वावधान में अनुसंधान किया जिसमें पाया कि बालक उन कविताओं में अधिक रुचि लेते हैं जो राष्ट्रीय ध्वज वीरता व प्रेरक घटनाओं के बारे में हों। बालक उन कविताओं में भी अधिक रुचि लेते हैं जो भक्ति की हों अथवा महान पुरुषों के बारे में हों। बालक राजस्थानी में लिखी कविताओं को अधिक पसन्द करते हैं।

व्यास (1968) ने हिन्दी विषय में शिक्षकों की अध्ययन प्रक्रिया का अध्ययन किया। उन्होंने यह पाया कि उच्च एवं मध्यम सामाजिक आर्थिक स्तर के विद्यार्थी हिन्दी में पठन-पाठन के प्रति ज्यादा जागरूक थे। शोधकर्त्ता ने यह भी पाया कि हिन्दी के कुछ अध्यापक पढ़ाने में काफी अक्षम थे। कुछ प्रधानाध्यापकों में हिन्दी शिक्षण प्रक्रिया के प्रति उदासीनता पाई गई। बजरंग शर्मा (1969) ने हिन्दी के प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित अध्यापकों की कक्षा अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित अध्यापकों की शिक्षण विधियों में कोई विशेष अन्तर नहीं था। शर्मा ने यह भी पाया कि हिन्दी शिक्षण के प्रति प्रशिक्षित हिन्दी अध्यापकों की सकारात्मक अभिवृत्ति थी तथा नाना प्रकार के अध्यापक अपने व्यवसाय में अच्छी तरह समायोजित थे।

संस्कृत शिक्षण

अग्रवाल (1971) ने संस्कृत शिक्षण की विधियों एवं संगठन पर किए गए अध्ययन में पाया कि सभी विद्यालयों में (शिक्षा संस्थाओं को छोड़ कर) संस्कृत को नाम मात्र के लिए जाना था वर्ना संस्कृत साहित्य की कमी पाई गई, दृश्य श्रव्य सामग्री भी उपलब्ध नहीं थी और केवल अनुवाद पद्धति अपनाई जाती थी। घाणेकर (1971) ने संस्कृत के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि उन छात्राओं की अपेक्षा जो संस्कृत को अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ रही थीं ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ने वाली छात्राओं में अधिक सकारात्मक अभिवृत्ति पाई गई। उन्होंने यह भी ज्ञात किया कि मराठी भाषी बालिकाएं राजस्थानी भाषी बालिकाओं की अपेक्षा संस्कृत के प्रति अधिक अनुकूल अभिवृत्ति रखती हैं।

अन्य विषय शिक्षण

माथुर (1974) ने उच्च माध्यमिक विद्यालयों में गणित शिक्षण का अध्ययन किया। छात्र व छात्राओं को पढ़ाने वाले अध्यापकों की गणित में विशेष रुचि नहीं थी।

पाठ्यक्रम भारी व असन्तोषजनक था, प्रभावहीन शिक्षण विधियां अपनाई जा रही थी तथा पढाने म कोई भी सहायक सामग्री काम म नही ली जा रही थी। नवीन गणित म अधिकाश विद्यार्थियो की विशेष रुचि नही थी।

बलवन्तसिंह (1958) ने पूव प्राथमिक कक्षाम्रो के बच्चो की खेल क्रियाम्रो का सर्वेक्षण किया। उन्होने पाया कि शिक्षण म खेल विधि बालक को अधिक रुचि पूवक न्यस्त रखती है परन्तु विद्यालयो म इस विधि को उचित महत्व नही दिया जा रहा था। त्रिलाटिया (1974) ने किंडर गाटन व प्राथमिक विद्यालयो म शिक्षण के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात किया कि जहा तक सामाजिक ज्ञान व गणित के अध्यापन का प्रश्न है, वहा दोनो की शिक्षण विधियो म विशेष अन्तर नही था। लेकिन उन्होने देखा कि हिन्दी शिक्षण म दोनो की विधियो म उल्लेखनीय अन्तर था।

दो अध्ययन बुनियादी विद्यालयो म प्रयुक्त विधियो पर मिलते है। शर्मा (1957) ने पाया कि जो कक्षाएँ बुनियादी शिक्षा के ढग स पढाई जाती थी, उनका स्तर पारम्परिक ढग से पढाई जाने वाली कक्षाम्रो की अपेक्षा अच्छा था। किन्तु उन्होने यह भी पाया कि जो अध्यापक बुनियादी विद्यालय म काय करत थ उन्ह बुनियादी शिक्षण विधियो का बहुत अपूण ज्ञान था। बुनियादी विद्यालय शिक्षण सामग्री के माने मे शोच नीय स्थिति म थे। जुल्का (1957) न पाया कि बहुत थोडे अध्यापक सहसम्बन्ध की तकनीक के सही अथ को समझत थ तथा कोई भी विद्यालय पूणरूपेण सहसम्बन्ध की तकनीक को नहीं अपनाता था।

सिन्नी (1957) ने बुनियादी शालाम्रो म अध्ययनरत बच्चो की अभिवृत्ति म हुए परिवतन का अध्ययन किया जिसम बुनियादी शालाम्रो के बच्चो न रचनात्मक एव सत्यता आदि गुणो के लिए अधिक अक प्राप्त किए। सामाजिक एव सहयोगपूण रहन सहन क सम्बन्ध म बुनियादी व गर बुनियादी शालाम्रो के बच्चो म सारियकी दृष्टि स कोई उल्लेखनीय अन्तर नही था, परन्तु बुनियादी शालाम्रो के बच्चो म श्रम के प्रति विशेष झुकाव पाया गया।

अन्य अध्ययनो में विजयवर्गीय (1970) न कायानुभव का सर्वेक्षण करते हुए ज्ञात किया कि 67-68 म केवल 56 विद्यालयो म और 68-69 म 190 विद्यालयो म कायानुभव का काय चल रहा था। इन विद्यालयो म 42 प्रकार के काय लिए गए थे। कार्यानुभव म लगे छात्रो की शक्षिक सप्राप्ति पढाई लिखाई, खेलकूद व अन्य प्रवृत्तियो म उन्नत पाया गया।

छिब्बर (1959) ने अंग्रेजी के प्रति विद्यार्थियो की अभिवृत्ति का अध्ययन किया। उन्होने पाया कि समग्र रूप से विद्यार्थियो की अभिवृत्ति अनुकूल थी। अभिवृत्ति एव सप्राप्ति म धनात्मक सहसम्बन्ध भी पाया गया। असारअहमद (1969) ने सरचनात्मक उपागम के प्रति अंग्रेजी के शिक्षको की अभिवत्ति का अध्ययन किया। निष्कर्षों स ज्ञात होता है कि उस उपागम के प्रति छात्राध्यापको म सेवारत शिक्षको की अपक्षा अधिक सकारात्मक अभिवृत्ति थी। उन्होने यह भी ज्ञात किया किया कि प्रशिक्षित

अध्यापकों की अभिवृत्ति भी सकारात्मक थी एवं पुरुष शिक्षकों की अभिवृत्ति महिला शिक्षकों की अपेक्षा अधिक अनुकूल थी। पन्त (1967) ने अंग्रेजी के अध्यापकों की समस्याएं ज्ञात कीं। इन्होंने पाया कि अंग्रेजी में छात्रों की न्यून सम्प्राप्ति के कारण थे अच्छे और प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी, उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकों का अभाव तथा नाथ ही कक्षाओं में गलत विधियों से शिक्षण कार्य करना। अध्यापकों की मूल समस्या यह पाई गई कि छात्रों का पूर्वज्ञान ठीक नहीं होता अतः उपयोगात्मक कार्य करने पर भी वे छात्र कक्षा के अपेक्षित स्तर तक आ ही नहीं पाते।

विजयरानी (1969) ने उन घटकों का अध्ययन किया जो नई शिक्षण विधियों के प्रति नव प्रशिक्षित शिक्षकों की रुचि में ह्रास लाते हैं। उन्होंने ज्ञात किया कि रुचि में अभिवृत्ति का एक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है तथा नई तकनीकों व विषयों के प्रति प्रशिक्षित शिक्षकों का सकारात्मक अभिवृत्ति रहता है।

अभिक्रमित अध्ययन

अभिक्रमित अध्ययन पर प्रयोगात्मक कार्य करते हुए माथुर (1969) ने नागरिक शास्त्र में स्वनिर्माण सामग्री तैयार की। इन्होंने स्वशिक्षण तथा पारम्परिक विधि से पढ़ाए जाने वाले विद्यार्थियों की निष्पत्ति का तुलनात्मक अध्ययन किया। इन्होंने पाया कि प्रायोगिक दल की व नियंत्रित दल की उपलब्धि में सार्थक अंतर रहा। ऐसा ही अन्तर शर्मा (1971) ने अर्थशास्त्र के संदर्भ में पाया। शर्मा के अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आया कि प्रायोगिक दल की सम्प्राप्ति नियंत्रित दल की अपेक्षा अच्छी रही। यह भी पाया गया कि विद्यार्थियों ने अभिक्रमित अध्ययन के प्रति अधिक अनुकूल अभिवृत्ति दिखाई। जैन (1971) ने अभिक्रमित अध्ययन सामग्री की व्याख्यान विधि से तुलना की। दोनों दलों का एक ही पूर्व-परीक्षण लिया गया, जिससे ज्ञात हुआ कि विद्यार्थियों की सम्प्राप्ति अभिक्रमित अध्ययन विधि से पढ़ाने पर उल्लेखनीय रूप से अधिक रही। भार्गव (1972) ने तीन विधियों—पारम्परिक विधि, अभिक्रमित अध्ययन व नियंत्रित अभिक्रमित अध्ययन का तुलनात्मक अध्ययन किया। इन्होंने पाया कि अभिक्रमित अध्ययन की तकनीक पारम्परिक शिक्षण की अपेक्षा अच्छी थी एवं नियंत्रित अभिक्रमित अध्ययन मात्र अभिक्रमित अध्ययन की अपेक्षा अच्छा था। नियन्त्रित अभिक्रमित अध्ययन वाले दल की सम्प्राप्ति उच्चतम रही। गुप्ता (1972) ने गणित में पारम्परिक शिक्षण तकनीक की अभिक्रमित अध्ययन तकनीक से तुलना की एवं दोनों तकनीकों के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति का अध्ययन करके पाया कि विद्यार्थी अभिक्रमित अध्ययन तकनीक से ज्यादा अच्छा सीखते हैं। किन्तु यह भी ज्ञात किया कि उस दल की जिसे अभिक्रमित अध्ययन की विधि से पढ़ाया गया बुद्धि एवं सम्प्राप्ति में सहसम्बन्ध गुणांक 05 के स्तर पर सार्थक नहीं था। विद्यार्थियों ने अभिक्रमित अध्ययन तकनीक के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति प्रकट की। शर्मा (1972) ने मालूम किया कि इतिहास में स्वनिर्माण सामग्री से अध्ययन करने पर उच्चतर बुद्धि वाले विद्यार्थी अधिक सम्प्राप्ति प्रदर्शित करते हैं। किन्तु उसी विषय में

छाजेड (1973) ने पाया कि अभिक्रमित अध्ययन विधि बुद्धिमान लडकियो के लिए बहुत सहायक नही थी। उन्होंने यह भी पाया कि उच्च एव निम्न सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि वाली लडकियाँ अभिक्रमित अध्ययन विधि से अधिक सम्प्राप्ति नहीं कर सकी।

मुद्गल (1973) न ज्ञात किया कि रेखीय अथवा शाखीय अभिक्रमा स पढ़ाए जाने पर विद्यार्थिया की सम्प्राप्ति म कोई सार्थक अन्तर नही होता। यादव (1974) ने पाया कि अभिक्रम वाले शिक्षक अनभिक्रम वाले शिक्षको की अपक्षा अधिक शाब्दिक पुनर्बलन का प्रयोग करत थ।

अभिप्रेरण

अभिप्रेरण स सम्बन्धित केवल एक अध्ययन शाक्ल्य (1971) का उपलब्ध है। शाक्ल्य न शिक्षका द्वारा प्रयुक्त प्रेरका एव प्रतिरोधका के प्रति किशोर छात्र व छात्राओ की अभिवृत्ति की जाँच की। अध्ययन स प्रकट हुआ कि विद्यार्थी जिन प्रेरका की ओर सर्वाधिक अनुकूल अभिवृत्ति रखते थे वे थ पारितोषिक, विशेष उत्तरदायित्व देना, सामाजिक प्रतिष्ठा देना (कक्षा नायक आदि चुनकर) तथा उत्साहवर्द्धक टिप्पणी देना (यथा सतोषजनक, अच्छा, उत्कृष्ट आदि)। जिन प्रतिरोधका के प्रति सर्वाधिक प्रतिकूल अभिवृत्ति पाई गइ व थे दूसर विद्यार्थिया के सामने किसी विद्यार्थी को शर्मिन्दा करना, दूसरा क सामने तिरस्कारपूर्वक अस्वीकार करना तथा कडे शब्दो म अपमानित करना। एसा प्रतीत होता है कि अनुसधान की दृष्टि म अभिप्रेरण का क्षेत्र लगभग उपेक्षित सा हो रहा है।

छात्रों व शिक्षको मे सम्बन्धो का प्रतिरूप

दो अध्ययन छात्रा व शिक्षका म सम्बन्धा क प्रतिरूप पर किए गए। खुल्लर (1959) द्वारा हुआ अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान से अधिक सम्बन्धित है, तथा उसम विद्यार्थियो द्वारा शिक्षका की भूमिका के बोध और शिक्षको द्वारा छात्रो की भूमिका के बोध का अध्ययन किया गया। श्रीवास्तव (1974) ने जीव विज्ञान के शिक्षको के शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन किया। उनके निष्कर्ष निम्न प्रकार से रहे अध्यापक एव अध्यापिकाए दोनो ही अपेक्षा स अधिक बाता करते हैं, भावनाओ, विचारो आदि को स्वीकार करते हुए, अध्यापक अध्यापिकाओ की अपेक्षा अधिक पुनर्बलन (Reinforcement) का प्रयोग करत हैं, अध्यापिकाएँ अध्यापको की अपक्षा निर्देश देने व आलोचना करने म अधिक समय बिताती हैं, प्रशिक्षित शिक्षको की अपेक्षा अप्रशिक्षित शिक्षको की कक्षा म छात्र वार्ता अधिक समय तक चलता है तथा प्रशिक्षित शिक्षक अप्रशिक्षित शिक्षको का अपेक्षा अधिक पुनर्बलन का प्रयोग करते हैं।

दृश्य श्रव्य सामग्री का उपयोग

विद्यालयो म दृश्य-श्रव्य साधनों के उपयोग से सम्बन्धित अध्ययनो म गोहल (1961) न राजस्थान व पजाब के विद्यालयो म दृश्य श्रव्य साधनो के उपयोग के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात किया कि पजाब क विद्यालय दृश्य श्रव्य सामग्री के माने मे

अधिक सुसज्जित थे। व्यास (1963) ने राजस्थान में सामाजिक शिक्षा में दृश्य श्रव्य साधनों के उपयोग पर अध्ययन किया। उनका निष्कर्ष था कि यद्यपि कुछ दृश्य श्रव्य साधन प्राप्त थे परन्तु उनका पूर्ण उपयोग नहीं हो पा रहा था।

गृहकार्य एवं त्रुटियों का विश्लेषण

गृहकार्य पर केवल एक अध्ययन उपलब्ध हुआ। सहगल (1970) ने पता लगाया कि विद्यार्थियों के पास गृहकार्य करने हेतु न तो कोई निश्चित समय होता था और न ही उनके लिए सुविधाएँ थीं। अनुसंधानकर्ता ने यह भी पता किया कि अंग्रेजी गणित व सामाजिक ज्ञान में गृहकार्य उपयोगी एवं आवश्यक है परन्तु सामान्य विज्ञान में प्रायोगिक कार्य के अभाव में यह प्रभावशाली नहीं हो पाता।

त्रुटियों की खोज करने के लिए छह अध्ययन मिलते हैं। रमेश (1961) ने पाया कि हिन्दी वर्तनी में मात्राओं की असंगति छात्र अधिक अशुद्धियाँ करते हैं तथा अशुद्ध उच्चारण ही मुख्य वर्तनी की अशुद्धि का कारण है। जोशी (1970) ने ज्ञात किया कि राजस्थानी विद्यार्थी अधिकतम अशुद्धियाँ (अ) रूप क्रम (आ) क्रिया का मत (इ) लिंग का रूप प्राप्ति में करते हैं। (अ) लिंग (आ) अधिकरण कारक (इ) विभक्ति व (ई) प्रत्यय के प्रयोग में अशुद्धियाँ न्यूनतम थीं। रामनिवास शर्मा (1969) ने भी अपने अध्ययन में हिन्दी की अशुद्धियों का विश्लेषण करते हुए ज्ञात किया कि विद्यार्थी मात्रा व अनुस्वार की अशुद्धियाँ अधिक करते हैं तथा व्याकरण उच्चारण व शब्दों के ज्ञान में भी वे कमजोर रहते हैं। माथुर (1969) ने भाषा सम्बन्धित (वर्तनी विषयक) त्रुटियों का अध्ययन किया।

एलवादि (1956) ने पाया कि विद्यार्थी स्थानीय भाषा में रचना एवं अक्षरों की गलत एवं असम्बद्ध लिखावट का कारण शिक्षण की अनियमितता, अस्वस्थ प्रकृति, अशुद्ध मानस आदि को उत्तरदायी ठहराते हैं।

अन्य अध्ययन

पियाजे (Piaget) के प्रभाव पर प्रायोगिक वर्ग बालकों के भाषात्मक विकास पर एक अध्ययन किया गया। पथरिया (1974) ने ज्ञात किया कि निम्न सामाजिक पृष्ठभूमि वाले बच्चे मात्रा भार व आयतन के संस्थान के अनुरूप भाषात्मक समता नहीं रखते।

राजा प्रतापसिंह (1968) ने सामान्य विज्ञान का अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया पर ज्ञात कार्य करके अध्यापकों की प्रतिक्रिया ज्ञात की। उन्होंने पाया कि अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया का उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के साथ सहसम्बन्ध 38 मध्यम स्तरीय सामाजिक आर्थिक स्तर के साथ 15 तथा निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के साथ 23 था।

कल्याण (1974) ने आठवीं कक्षा की बालिकाओं की बुद्धि व रुचि का सामान्य विज्ञान के प्रकरणों व अवधारणा में सम्बन्ध ज्ञात किया। उन्होंने पाया कि बुद्धि का

सप्रत्यय और अवबोध की वृद्धि के साथ सम्बन्ध है। रुचि का भी सप्रत्यय की वृद्धि के साथ सम्बन्ध देखा गया।

गज्जू (1965) ने शिक्षण-कौशल के तत्वों के निश्चायकों की जांच की। उन्होंने पता लगाया कि अध्यापक की बुद्धिलब्धि, अभिवृत्ति व शिक्षण अभ्यास मुख्य निश्चायक तत्व है। उन्होंने यह भी देखा कि दीर्घकालीन अध्यापन अनुभव और अच्छे शिक्षण में कोई सम्बन्ध नहीं है। उनके अनुसार अध्यापकों के व्यक्तित्व का समायोजन समक बहुत कम स्तर पर था। व्यास (1971) ने पाया कि अध्ययन गति बौद्धिक क्षमता व प्रत्यक्षज्ञानात्मक गति से सम्बन्धित है और वह आयु के साथ बढती है।

सम्भावनाएँ एव सुझाव

प्राथमिक एव पूर्व प्राथमिक स्तर के उद्देश्यों पर शोध कार्य उपेक्षित सा रहा लगता है। प्राथमिक शिक्षा के विस्तार एव महत्व को देखते हुए सर्वाधिक शोध इसी स्तर के उद्देश्यों पर किए जाने चाहिए थे। एक अध्यापकीय प्राथमिक विद्यालयों में प्रयुक्त तथा अपेक्षित शिक्षण विधियों के स्वरूप पर शोध कार्य का अभाव खटकने वाला है, जब कि आज राजस्थान में ऐसे प्राथमिक विद्यालय 55% है। इस पक्ष पर अब शोधकर्त्ताओं का ध्यान जाए, इसका भी औचित्य है। अब जबकि प्राथमिक शिक्षा सार्वजनीन होने जा रही है, तब शोधकर्त्ता एव अध्यापकों को यह जानने की आवश्यकता रहेगी कि वे वर्ग जो कि अब तक उपेक्षित रहे हैं, की रुचि के विषय व अभिप्रेरण के घटक आदि क्या है।

प्रयोगात्मक अध्ययनों में एक शिक्षण विधि की दूसरी शिक्षण विधि से तुलना करने की अपेक्षा एक ही विधि के विभिन्न परिवर्तकों पर अध्ययन अधिक उपादेय हो सकते है। साथ ही इस दृष्टि से भी प्रायोगिक शोध कार्य किए जाने चाहिए कि देश के वातावरण में ही किसी व्यावहारिक शिक्षा विधि का विकास किया जा सके।

प्रशिक्षित शिक्षकों ने आधुनिक शिक्षण विधियों के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति प्रदर्शित की है। परन्तु इस सकारात्मक प्रवृत्ति के उपरान्त भी विद्यालयों में आधुनिक शिक्षण विधियों के प्रभावशाली उपयोग का अभाव क्यों है यह शोध का विषय बन सकता है।

गृहकार्य से सम्बन्धित कई क्षेत्र ऐसे है जो अभी तक अछूते हैं यथा-विभिन्न कक्षाओं, विभिन्न विषयों व सत्र के विभिन्न महीनों में गृहकार्य की अपेक्षित मात्रा पर भी अनुसधान किया जा सकता है। त्रुटि विश्लेषण के क्षेत्र में गणित सामाजिक ज्ञान, सामान्य विज्ञान जैसे महत्वपूर्ण विषय शोध की परिसीमा से लगभग अछूते रहे है।

ज्ञानात्मक विकास अभिप्रेरण तथा छात्र शिक्षक अन्त सम्बन्धों का स्वरूप जैसे आधुनिक कहे जा सकने वाले वर्गों में केवल एक एक अध्ययन हुआ है। उन्हें अधिक महत्वपूर्ण माना जाकर आजकल अधिक बल दिया जाता है। इस ओर भी शोधकर्त्ताओं का ध्यान अपेक्षित है। ऐसा लगता है कि आधुनिक कहा जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण विधियों पर शोध बिल्कुल नहीं हुए हैं जिनमें दल शिक्षण परिसीमित शिक्षण (Micro Teaching) व जन सचार माध्यम (Mass Media) आदि प्रमुख हैं।

सन्दर्भाङ्कित अनुसंधान

अग्रवाल कमला	राजस्थान उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे संस्कृत शिक्षण का संगठन, कक्षाध्यापन विधि तथा छात्रोपलब्धि का सर्वेक्षण, एम एड उदयपुर वि वि 1971
अमार अम्मलयान	A Study of the Attitude of English Teachers towards the Structural Approach to the Teaching of English M Ed Udaipur Uni 1969
एगवाल रामचन्द्र	An Investigation into the Causes of Errors in Geometry for Class IX M Ed Raj Uni 1956
कल्यार प्रभावती	To Investigate into the Relationship of Concept and Understanding of General Science with Intelligence and Interests of Girls of VIII Class M Ed Raj Uni 1974
खुल्लर वागविश्रमजान	Pattern of Teacher Pupil Relationship M Ed Raj Uni 1959
गर्ग मदनलाल	An Investigation into the Determinants of Teaching Skill M Ed Raj Uni 1965
गहलान मानसिंह	A Study of the Homework given in Upper Primary Classes M Ed Jodhpur Uni 1970
गुप्ता हरेन्द्रनाथ	A Comparative Study of Conventional Teaching Technique with Programmed Instruction Technique as Applied to Teaching Set Theory in Mathematics and Study of Attitudes of Students towards Instructional Technique M Ed Raj Uni 1972
गौड़ अरुणा	बच्चों की भाषा शिक्षा में प्रत्यय निर्माण के लिए अध्यापकों द्वारा प्रयुक्त विधियों का तुलनात्मक अध्ययन एम एड राज वि वि 1970
गौड़ रघुनाथसिंह	A Comparative Study of Techniques used by Teachers in the Conceptual Teaching of Language to Childern M Ed Raj Uni 1970
गौतम जी एम	A Comparativ Study of the Use of Audio-Visual Aids in Schools (with special reference to the Teaching of Social Studies) M Ed Raj Uni 1961
घाणेकर विजया	किशोर छात्राओं की संस्कृत के प्रति अभिवृत्ति, एम एड, राज वि वि, 1971

चौधरी, बच्चनसिंह	अर्थ ग्राह्यता और वाचन गति पर मौन पठन के अभ्यास के प्रभाव का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1969
छाजेड, सरोज	इतिहास मे स्वाध्याय कार्यक्रम का निर्माण एव शैक्षिक परिस्थितियो मे प्रभावोत्पादकता, एम एड, राज वि वि, 1973
छि बर, केवलकृष्ण	Secondary School Pupils Attitude towards English M Ed Raj Uni 1959
छि बर, विजयलक्ष्मी	अभिक्रमित अध्ययन तथा परम्परागत प्रणाली की प्रभावोत्पादकता का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1973
जु त्रा, गुलशनलाल	A Study of Correlation in Basic Schools of Udaipur M Ed Raj Uni 1957
जोशी क हैयालाल	राजस्थानी भाषी छात्रो द्वारा हि दी लिखने मे की जाने वाली वाक्य सरचनात्मक त्रुटियों का विवेचनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1970
तिवारी, पुरुषोत्तमलाल	लिखित कार्य के सशोधन की दो विधियो का एक प्रयोग निष्ठ तुलनात्मक अध्ययन, राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर 1967
पचौरी अविनाशच द्र	Horizontal Decalage in Seven Nine Eleven and Twelve Year old Children of Contrasting Social Backgrounds M Ed Raj Uni 1974
पचोनी, घासीलाल	A Study of the Children s Interest in Hindi Poetry at the Stage of Class VIII S I E Udaipur 1967
पचोली, घासीलाल	A Comparative Study of Alphabet Method and Sentence Method in Hindi S I E Udaipur 1968
प त, हरिश्चन्द्र	An Enquiry into the Problems of English Teachers Teaching Class IX in the Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1967
पाडे आभा	A Comparative Study of Efficacy in Learning through Proprammed Learning Versus Traditional Learning M Ed Raj Uni 1974
बनव तसिंह	Play Activities of Nursery School Children M Ed Raj Uni 1958
बद न सत्यनसिंह	An Experimental Evaluation of the Technique of Programmed Instructions in Commerce at Secondary Stage M Ed Udaipur Uni, 1971

भाटी, मदनसिंह	परिनिष्ठित हिन्दी सीखने मे राजस्थानी छात्र छात्राओं की भाषा तात्विक (वर्तनी विषयक) त्रुटियों का विवेचनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1969
भार्गव, माया	A Comparative Study to show the Effectiveness in the Teaching of English to Primary Classes M Ed Raj Uni 1972
माथुर ओमप्रकाश	Preparation of Auto Instructional Programmes in Civics M Ed Raj Uni 1969
माथुर, महिमा	A Critical Study of Mathematics Teaching in Higher Secondary Schools of Ajmer City M Ed Raj Uni 1974
मिश्र, मोहन	Role of Hypotheses in Problem Solving M Ed Raj Uni 1973
मुद्गल विष्णुस्वरूप	A Comparative Study of Linear versus Branching Programmed Instructions to Teach Multiple Principles to Class IX M Ed Raj Uni 1973
यादव प्रतापसिंह	A Comparative Study of Achievement of Two Groups of Students Exposed to Two different Instructional Strategies M Ed Raj Uni 1974
राणा प्रतापसिंह	An Investigation into Teaching Learning Process in General Science for 12+ M Ed Raj Uni. 1968
वाजपेयी ब्रजविहारी एवं पचोली, घासीलाल	A Comparative Study of Handwriting with Kalam Holder Pen & Pencil S I E Udaipur 1970
व्यास बी सी एवं मेहता बी एल	A Study of the Utilisation of Library for Promoting Proper Reading Habits among the Students of Secondary and Higher Secondary Schools S I E Udaipur 1970
व्यास सुधा	Childern s Learning as related to their Intelligence and Perceptual Speed M Ed Raj Uni 1971
विजयवर्गीय डा पा	कार्यानुभव सर्वेक्षण राज्य शिक्षा संस्थान उदयपुर, 1970
विजयराना	A Study of Factors that Deteriorate the Interests of Newly Trained Teachers in the New Methods of Teaching M Ed Raj Uni 1969
शर्मा नाथूराम	An Auto Instructional Programme on Factors of Production Its Preparation and Evaluation M Ed, Raj Uni 1971

शर्मा, बजनाथ	A Comparative Study of Teaching Learning Process of Trained and Untrained Teachers of Hindi in Rajasthan M Ed, Raj Uni 1969
शर्मा, मांगीलाल	छात्रों के धर्म सम्बन्धी ज्ञान एव अभिवृत्ति मे परिवर्तन एक प्रयोगात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1969
शर्मा, रामनिवास	Diagnosis of Errors in Hindi, M Ed Raj Uni 1969
शर्मा, रामावतार	A Study into the Methods of Teaching Hindi in School Situations M Ed Raj Uni 1973
शर्मा, समर्थसिंह	इतिहास मे स्वाध्याय कार्यक्रम का निर्माण एव इसकी शैक्षिक परिस्थितियों मे प्रभावोत्पादकता एम एड, राज वि वि, 1972
शर्मा, सूरजमल	Relative Merits of Basic and Non Basic Methods of Teaching M Ed Raj Uni 1957
शर्मा, हरिश्चन्द्र	Auditory Discrimination of English Consonant Phonemes M Ed Udaipur Uni 1973
शाक्य उषा	शिक्षकों द्वारा प्रयुक्त प्रोत्साहकों व हतोत्साहकों के प्रति किशोर छात्र छात्राओं की मनोवृत्तियां एम एड उदयपुर वि वि 1971
श्रीवास्तव नगेन्द्रनाथ	Verbal Behaviour Pattern of Biology Teachers Variables Sex Training Experience and Students' Achievement M Ed Raj Uni 1974
शुक्ला, ओमप्रकाश	Developing a Strategy for Individualized Teaching in Chemistry at X Class Level M Ed Raj Uni 1972
सक्सेना, राधारानी	उच्चतर माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों के समायोजन तथा कक्षा में उत्पन्न संवेगात्मक समस्याओं का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1969
स्वामी, बंशीलाल	An Investigation into the Teaching Learning Process of Adolescents in Hindi along with the Optimum Use of the Existing Facilities in Rajathan M Ed Raj Uni 1968
सिंघी, धनराज	Change of Attitudes among Children in Basic Schools M Ed Raj Uni 1957
हरस्वरूप	A Study of the Use of Audio Visual Aids in Social Education in Rajasthan M Ed Raj Uni., 1963

हिमकर, चन्द्रमोहन	Spelling Errors in Hindi M Ed Raj Uni 1961
त्रिपाठी, बृजनन्दनलाल	Problems of Large Classes and Suitable Methods of Teaching M Ed Raj Uni 1974
त्रिपाटिया भगवानसिंह	A Comparative Study of the Effective Teaching in Kindergarten and Primary Schools, M Ed Raj Uni 1974



व्यक्तित्व

□ डा छैल बिहारी माथुर
□ डा चन्द्र प्रकाश माथुर

राजस्थान मे शिक्षा के क्षेत्र म पीएच डी तथा एम एड स्तर पर व्यक्तित्व को शोध का मुख्य विषय निश्चित करके जो शोध काय 1974 तक सम्पन्न हुए उन्हे कुल 12 अनुभागो म विभाजित किया जा सकता है। यथा व्यक्तित्व के कारक, व्यक्तित्व के विभेदकारी घटक, व्यक्तित्व के धार्मिक नतिक घटक व्यक्तित्व निवारण दुश्चिन्ता एव आत्मगत प्रवृत्ति, प्रत्यक्षन, आत्म प्रत्यय आवश्यकता एव समायोजन, सामाजिक सबध, सामाजिक व्यवहार, सृजनशीलता तथा शक्षिक निहिताथ।

व्यक्तित्व के कारक (Factors of Personality)

व्यक्तित्व के कारको से सम्बन्धित अनुसधानो म अध्ययनकर्त्ताओ की रुचि किशोर एव किशोरिया के बुद्धि स्तर एव किन्ही विशिष्ट व्यक्तित्व कारको के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने म ही रही है। द्विवेदी (1970) ने उच्च एव निम्न सम्प्राप्ति स्तर के किशोरो की बुद्धिलब्धि तथा व्यक्तित्व समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन करके निष्कष निकाले कि बुद्धि के स्तर का सम्प्राप्ति पर प्रभाव पडता ह निम्न सम्प्राप्ति वाले बालक प्राय कुसमायोजित एव लापरवाह व उच्च सम्प्राप्ति वाले बालक प्राय विचार, चिन्तन एव मनन करने वाले होते हैं। सक्सेना (1973) ने विद्यालयी किशोरियो के व्यक्तित्व के कतिपय घटको पर बुद्धिलब्धि एव मौलिक चिन्तन के प्रभाव का अध्ययन करके पता लगाया कि मौलिकता बुद्धि स्तर पर इतनी आश्रित नही है जितनी कि कल्पना पर, व्यक्तिगत सम्बन्धो पर वचारिक भिन्नताओ का कोई महत्वपूण प्रभाव नही पडता तथा किशोरिया की वयक्तिक मानसिक आवश्यकताओ (यथा, आक्रामकता स्वायत्तता, प्रभुत्व, परिपोषण सक्स इत्यादि) पर उनके बुद्धि स्तर एव मौलिक चिन्तन का काई विशेष प्रभाव नही पडता।

व्यक्तित्व के विभेदकारी घटक (Differential Traits of Personality)

विभेदकारी घटको के अध्ययन के क्षेत्र म कुण्डू (1966) ने पीएच डी स्तर पर अनुसूचित जनजाति एव अन्य जातियो के बाल अपराधियो के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन किया। अपराधी व्यक्तित्व के जो महत्वपूण विभेदकारी घटक प्रकाश म आए वे थे घर पर असुरक्षा की भावना, असन्तोषजनक बालक अभिभावक सम्बन्ध, माँ-बाप की ओर से कटुता, मनोरजन क साधनो का अभाव, गपीडन.

आर्थिक अभाव, माँ का घर से बाहर रहना, अभिरुचियों का अभाव एवं अस्वास्थ्यकर पर्यावरण।

नायर (1972) ने छात्रों में उत्तरदायित्व की भावना एवं अन्य घटकों में परस्पर सहसम्बन्ध के अध्ययन में उत्तरदायित्व की भावना और बुद्धिलब्धि स्तर के बीच तथा सम्प्राप्ति और उत्तरदायित्व में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया परन्तु सामाजिक आर्थिक स्तर विभेदक नहीं पाया गया। मिश्रा (1959) द्वारा किए व्यक्तित्व के विशेषता के अध्ययन में उच्च बुद्धिलब्धि वाले छात्रों में निम्न बुद्धि वालों की अधिक सकारात्मक शक्ति, वचारिक परिपक्वता, भावनात्मक नियन्त्रण एवं स्थिरता पाई गई। मानसिक साधना, जीवन के प्रति दृष्टिकोण, रुचियों एवं सृजनात्मक क्षमता के सम्बन्ध में दोनों प्रकार के छात्रों में अन्तर स्पष्ट नहीं हुआ। चौहान (1972) द्वारा किए गए अध्ययन में निम्न सम्प्राप्ति वाले छात्र प्रायः अधिक संवेगात्मक, नैतिक एवं सामाजिक आदर्शों वाले व बहिर्मुखी पाए गए जबकि उच्च सम्प्राप्ति वाले छात्र अन्तर्मुखी पाए गए।

नववाना (1972) ने विभिन्न विषय वर्गों के छात्राओं के व्यक्तित्व विशेषकों का अध्ययन किया। इनके द्वारा निर्मित व्यक्तित्व के चौदह घटकों के स्तर के आधार पर विज्ञान के छात्र अपेक्षाकृत अधिक बुद्धिलब्धि वाले शान्त, विनम्र स्वभाव के, आत्म विश्वासी एवं कुण्ठाविहीन, मानविकी वर्ग के (आर्ट्स) छात्र स्थिर सवेगात्मक स्थिति वाले परन्तु कमजोर अहम् वाले एवं वाणिज्य के छात्र कमजोर अहम् वाले वास्तविक दृष्टिकोण वाले कुण्ठा विहीन एवं आत्मविश्वासी पाए गए। प्रभाकर (1970) द्वारा किए गए अध्ययन में भी लगभग ऐसे ही निष्कर्ष निकले। गौड़ (1970) ने नन्दा विभागों की व्यक्तिगत विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया। व्यक्तित्व विशेषता परख (इनके द्वारा निर्मित) के आधार पर छात्रा वर्गों में कोई महत्त्वपूर्ण अन्तर प्रदर्शित नहीं हुआ, यद्यपि ग्रामीण किशोर अपेक्षाकृत अधिक चिन्ताग्रस्त मनवाले कुण्ठित लज्जाशील एवं कम सम्मानता में उलझे पाए गए।

बम्मा पाण्डे (1968) ने कुमार की आवश्यकता निर्धारिणी (नीड्स इन्वेन्टरी) के आधार पर 13 एवं 17 आयु के विभिन्न वर्गों के लड़के एवं लड़कियों की आवश्यकताओं का अध्ययन किया जिससे प्रदर्शित हुआ कि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में विभिन्न स्तरों में अवमानाकरण, सम्बन्ध स्थापन, सम्मान, प्रभुसत्ता का उपार्जन, सेवाभाव, स्वायत्तता, आत्म प्रदर्शन एवं आक्रामक प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। सत्य प्रकाश शर्मा (1968) ने नाटप्रिय एवं तिरस्कृत छात्रों के अध्ययन में पाया कि नाटप्रिय छात्र सामाजिक व्यक्तित्व में घर में, स्कूल में, स्वास्थ्य में व मन स्थिति में अधिक समायोजित होते हैं, जहाँ तक घर में समायोजन की स्थिति है दोनों प्रकार के छात्रों में कोई महत्त्वपूर्ण भेद नहीं होता, मगर नाटप्रिय छात्र आत्मविश्वास के साथ उत्तरदायित्व वहन करने में तत्पर रहते हैं समय पर एवं लगातार विद्यालय में उपस्थित रहने वाले, झगड़ों से दूर रहने वाले व सहयोगी होते हैं। लक्ष्मीनारायण शर्मा (1971) ने चुने हुए छात्र नेताओं के व्यक्तित्व के आधारभूत घटकों का अध्ययन करने पर मालूम किया कि

उनम सामान्य से उच्च स्तर की बुद्धिलब्धि मिलती है वे स्वय को औरा से अधिक उच्च समझते हैं, व आत्म विश्वासी, समाज म घुलन मिलन वाले, बातूनी, महत्वाकांक्षी एव समायोजित होते हैं। व अच्छी योजना बनान वाले उच्च आदश वाले, आशावादी व अध्यवसायी उच्च आदश वाले होते हैं तथा वे प्राय उच्च कुलीन परन्तु अधिकारिया के विरुद्ध विद्राह करन वाले होते हैं।

रमाकुमारी शर्मा (1969) न पब्लिक स्कूल व विद्यार्थियो का अध्ययन करके ज्ञात किया कि व भावनात्मक दृष्टि स अपक्षाकृत अधिक परिपक्व स्थिर, जीवन के प्रति वास्तविक दृष्टिकोण वाल व एकाग्रचित थे। साधारण स्कूलो के विद्यार्थियो म शर्मीले, आत्मोन्मुख, विपरीत सक्स वाला से आख चुरान वाल दूसरा की भावनाओ के के प्रति जागरूक छात्र मिले परन्तु पब्लिक स्कूल के छात्र अपेक्षाकृत अधिक सहृदयी, आत्माभिव्यक्ति वाल सहयाग के लिए तत्पर औपचारिक समूह बनान वाले आलाचना स न डरन वाल एव स्वतन्त्र दृष्टिकोण वाले थे।

इनके अतिरिक्त दो अध्ययन ऐसे भी हैं जिनम शिक्षको पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। धरनीधर शमा (1969) न अध्यापको एव अध्यापिकाओ के अध्ययन म पाया कि महिलाओ की अपक्षा पुरुष अधिक सामाजिक, स्थिर (सवगात्मक) मन स्थिति वाले, उत्साही, दृढ परमग्रहम वाले साहसिक काय पसन्द करने वाल नियन्त्रित एव अनुशासित होते हैं जबकि महिलाओ म अपक्षाकृत अधिक आत्राभक्ता शक्कीपन, रुढियो स चिपक रहन की प्रवृत्ति एव अपन सगठन पर निभर रहने की प्रवृत्ति पाई गइ। गुप्ता (1972) न पाया कि अन्य विषया के छात्राध्यापको की अपक्षा विज्ञान के छात्राध्यापक अधिक बुद्धिलब्धि वाले शर्मीले परन्तु आत्मनिभर थ। व वाणिज्य क छात्राध्यापको स अधिक सकाची कला अध्यापको से कम अहमपूर्ण वाल परन्तु सकोची एव व्यावहारिक, कृषि के छात्राध्यापको से अधिक उच्च बुद्धि स्तर वाले, कल्पनात्मक एव आत्मनिभर पाए गए।

व्यक्तित्व के धार्मिक नतिक घटक (Religious & Moral Traits)

मूल्यो एव अभिवृत्तिया का अध्ययन इस क्षेत्र म किया गया है। दामादर य पाठक (1964) का अध्ययन ऐस किशोरा को पहिचानने के लिए किया गया जिनमे आस्तिकता, अनास्तिकता अथवा अर्द्ध आस्तिकता की स्थिति हो। पता चला कि ईश्वर म विश्वास रखन वाले अपक्षाकृत अधिक थे, अनास्तिको का बुद्धिलब्धि स्तर आस्तिकों की अपक्षा ऊँचा पाया गया किशोरा क व्यक्तित्व निमाण म उनक घरेलू वातावरण का महत्वपूण प्रभाव पाया गया। आतमसिंह (1959) न किशोरा की नतिक मान्यताओ का अध्ययन करके पाया कि धार्मिक शिक्षा एव प्राथना का किशोरों की नतिक मान्यताओ स कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है नतिक मान्यता के परीक्षण म छात्राओ के अक छात्रों से कम रहे और यह अन्तर ईमानदारी क सदभ म अधिक साथक था। बुद्धि परीक्षण म उच्च अक प्राप्त करन वाल सामान्यत नतिक मान्यताओ म भी उच्च ही रहे। जन (1962) ने जब ग्रामीण एव शहरी किशोरा की नतिक मान्यताओ का अध्ययन किया तो पाया कि धोखा दन क सदभ म 11–12 वष क समुदाय एव 14–15

वर्षीय समुदाय म अधिक भेद नही था एव नागरियों बालकों के मूल्यों में लडको म तथा ग्रामीण बालक शहरी बालको म ऊँच निम्न । चिरजीलाल भट्ट (1966) क अनुसार दोनों के नैतिक मूल्यों में ना अन्तर था और बुद्धिलब्धि स्तर एव नैतिक मूल्यों में सीधा सम्बन्ध था । कपूर (1962) ने मालूम किया कि नैतिक निर्णयों पर ग्रामीण एवं शहरी छात्रों में कोई भेद नहीं था, परन्तु अभिभावकों के आर्थिक सामाजिक स्तर स्वय का बुद्धिलब्धि स्तर एव सम्प्राप्ति स्तर नैतिक निर्णयों के स्तर को सीधा प्रभावित करते हैं । इधर चिरजीलाल भट्ट (1966) ने मालूम किया कि आयु वृद्धि के साथ साथ नैतिक मूल्य गहनता प्राप्त करते हैं ।

व्यक्तित्व निर्धारण (Prediction of Personality)

व्यक्तित्व निर्धारण सम्बन्धी अनुसन्धानों में पीएच डी तथा एम एड दोनों स्तरों पर सम्पादित शोधियों का कार्य अपने क्षेत्र में नवीन प्रयोग था, परन्तु वह विभिन्न बालकों के आधार पर किया गया था। छत्रसिंह मायुर का पीएच डी शोधकार्य इस दिशा में अपना अलग स्थान रखता है क्योंकि वह शोधकार्य सामान्य बालक-बालिकाओं के आधार पर सम्पादित किया गया था।

डाण्डियाल (1959) के एम एड अनुसन्धान में निष्कर्ष निकलता है कि किसी भी व्यक्ति की कलाकृतियों के अध्ययन से उसके व्यक्तित्व को पहिचानना सभव है। कुछ विशिष्ट मकान इस प्रकार से निकले कि सामान्य बालक घर को चित्रित करते हैं जबकि असामान्य बालक नहीं करते बालक प्राय अपने समविगत व्यक्तियों को भी चित्रित करते हैं । चित्र का स्तर चित्रकार के बुद्धिलब्धि स्तर से मात्र सहसम्बद्ध था उच्च बुद्धि वाले बालकों ने विभिन्न रंगों का उचित प्रयोग किया मगर रंगों की पसद का बुद्धि के स्तर से कोई भाग सबध नहीं मिला । डाण्डियाल (1964) द्वारा हो सपन्न समविषयक पीएच डी शोधकार्य में बालकों द्वारा निर्मित चित्रों के विश्लेषण से कल्पना सामाजिकता वास्तविक अकन अहम् अपराध बोध इत्यादि का मापन सभव पाया गया मानसिक आवश्यकताओं भावनाओं अन्तर्द्वन्द्व दुश्चिन्ताओं इत्यादि की जानकारी भी सम्भव पाई गई । छत्रसिंह मायुर (1972) ने पीएच डी स्तर के अनुसन्धान में बालकों के मौलिक चिन्तन को उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग पाया । गौरी भार्गव (1972) ने स्वत चित्रण में किशोरी छात्राओं के परिचित व आधारों को उनके मुखरा का व्यक्तक सिद्ध किया । दिवाकर व्यास (1972) ने व्यक्तित्व मापन के पूर्वसूचक के रूप में नियन्त्रित कल्पना (Controlled Fantacy) के लिए प्रक्षेपण उपकरण तैयार किया जो शामिल है ।

दुश्चिन्ता एव आक्रामक प्रवृत्ति (Anxiety & Aggression)

इस क्षेत्र में एम एड स्तर पर शोधकार्य 1962 में प्रारम्भ हुए तथा तीन वर्ष के अन्तराल के पश्चात् 1970 एव 1974 के बीच की डेढ वर्ष इस क्षेत्र में 1966 में एक-दो शोधकार्य प्रतिवर्ष होते रहे । पीएच डी स्तर पर भी एक शोधकार्य 1963 में गुरुशरणलाल गुप्ता द्वारा सपन्न किया गया था । अनुसन्धान के लिए प्रिय विषय

दुश्चिन्ता का रहा जिसमें अब तक पाँच शोध कार्य सम्पादित हुए हैं, उसके बाद कुण्ठा प्रिय विषय रहा है।

पीएच डी स्तर पर शुक्ला (1963) ने बच्चा में आक्रामक प्रवृत्ति, भय एवं दुश्चिन्ताएँ विषय पर शोधकार्य किया। न्यादर्श था—भील व दूसरे बालक जो बीहड़ में रहते थे। निष्कर्षों में पाया गया कि—जंगली जानवरों तथा साँप से अध्यापक द्वारा दण्ड, भूत प्रेत, चोर इत्यादि से, घर पर दण्ड, जंगल, अंधेरे से, बाढ़ तथा ऐसे ही मनोवैज्ञानिक भय के रूप क्रमशः सभी में विद्यमान थे। भील बालकों की अपेक्षा अन्य बालकों में अधिक आक्रामक प्रवृत्ति पाई गई। इसमें विशेष रूप से—हमला, गाली गलौज, खून करने संबंधी बातचीत व आक्रामक विचार विशेष थे। दूसरों में अस्वीकृति के कारण तथा हीनता की भावना के कारण भी दुश्चिन्ता पाई गई। शोधकर्त्ता ने पाया कि दोनों प्रकार के बालकों में भय व दुश्चिन्ताओं का सार्थक अन्तर नहीं था, परन्तु दूसरे बालक भील बालकों की तुलना में अधिक आक्रामक प्रकृति के पाए गए। जोशी (1966) ने पाया कि दुश्चिन्ता की अधिकता का सीधा प्रभाव शैक्षिक सम्प्राप्ति पर पड़ता है। दुश्चिन्ता के बढ़ने पर सम्प्राप्ति कम तथा उसके घटने पर अधिक होती है। अंग्रेजी गणित व सामान्य विज्ञान के प्रति दुश्चिन्ता अधिक पाई गई। यह भी पाया गया कि लड़कियों में लड़कों की अपेक्षा अधिक दुश्चिन्ताएँ होती है। मगर वंद (1972) ने दुश्चिन्ताओं तथा उनकी बुद्धिलब्धि के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं पाया। जोशी के अनुसार दुश्चिन्ता का आर्थिक सामाजिक स्तर में कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं दिया। वीरमानी (1968) ने नवयुवतियों के न्यादर्श को लेकर किए गए अध्ययन में पाया कि कोई भी छात्रा दुश्चिन्ता से मुक्त नहीं थी तथा उनकी दुश्चिन्ताएँ उनके जीवन में समायोजन से सीधी सम्बन्धित थी। दुश्चिन्ताओं एवं द्वन्द्व के प्रति प्रतिक्रिया संवेगात्मक थी। यह भी पाया गया कि दुश्चिन्ताएँ अधिकांशतः अभिभावकों द्वारा लगाए गए प्रतिबन्धों के कारण थी। असमायोजित नवयुवतियों में दुश्चिन्ता की अधिकता थी। धींगरा (1971) ने पाया कि खेलने वाले छात्रों में न खेलने वाले छात्रों की अपेक्षा कम दुश्चिन्ताएँ होती है। हाडा (1973) ने पाया कि स्कूली शिक्षा से शिक्षार्थियों में दुश्चिन्ताओं का प्रादुर्भाव नहीं होता। मगर कुण्ठित व अकुण्ठित विद्यार्थियों के नेतृत्व के गुणों एवं उनके आर्थिक सामाजिक स्तर में सार्थक अन्तर होता है।

कुण्ठा के क्षेत्र में छत्रमोहन शर्मा (1962) का शोधकार्य अपने ढंग का सर्वप्रथम था। न्यादर्श वर्गीकरण का आधार था मानसिक योग्यता। उन्होंने पाया कि उच्च स्तरीय व सामान्य स्तरीय बालकों में निम्न स्तरीय बालकों की तुलना में कुण्ठा की परिस्थितियों का सामना करने की क्षमता अधिक होती है। निम्न स्तरीय बालकों में अहम् प्रतिरक्षा की कमी परमअहम् सामान्य से कम तथा दंडित होने का आशंका की भावना अधिक होती है। 1973 में अपने पीएच डी अध्ययन में उन्होंने कुण्ठा प्रतिक्रिया मापनी का निर्माण तथा मानकीकरण किया जिसका विश्वसनीयता गुणांक (परीक्षण–पुनः परीक्षण विधि के आधार पर) 21 से 71 तक था। शर्मा ने निष्कर्ष निकाले कि किशोर युवक युवतियों में 12 से 16 वर्ष की आयु

म प्रतिनिन्ध आत्मसत्ता पाई जाती है तथा स्पष्ट भाव था। उनमें अनुकरण व अन्य प्रकार की प्रवृत्ति भी पाई जाती है। किशोर युवक युवतियों में सहज प्रतिक्रिया के साथ साथ भावप्रवणता का अभाव तथा भवराय प्रधानता भी पाई जाती है। किशोर युवतियों में 14 वर्ष की आयु तक आयुवृद्धि के साथ-साथ प्रतिनिन्ध आत्मसत्ता भी बढ़ती है परन्तु 15 वर्ष की आयु तक अनुकरण भावना आयु के बढ़ने के साथ साथ कम होती है, किशोर युवकों में अन्य प्रकार वृत्ति पर आयु के बढ़ने का कोई प्रभाव नहीं होता। व सामान्यतया स्थिर रहते हैं परन्तु भावप्रवणता के अभाव के सम्बन्ध में उनमें स्पष्ट बढ़ाव पाया गया। आयु के बढ़ने के साथ-साथ युवकों में सहज प्रतिक्रिया कम होती पाई गई। चौपड़ा (1967) के अनुसार भिन्न उच्च समूह की तुलना में निम्न आर्थिक सामाजिक स्तर के समूह बच्चों में अन्य भाव कम तथा आर्थिक-सामाजिक स्तर और बच्चों प्रतिक्रिया के मध्य सार्थक सम्बन्ध पाया गया। समता शास्त्री (1967) ने निष्कर्ष निकाला कि तरुणाई के आरम्भ के समय समस्याओं में आवश्यकताओं के दृढ़ता कम होती लगती है उस समय समस्याओं का परिवार व स्वास्थ्य में समायोजन प्रभावित रहता है परन्तु उनके सामाजिक व शैक्षिक समायोजन पर प्रभाव दिखता है इसी अध्ययन पर इस समय कोई प्रभाव न। ... समय इस समय उनमें प्रतिनिन्ध आत्मसत्ता उभरता है और सहज प्रतिक्रिया बढ़ती है।

छात्र गत प्रवृत्ति के क्षेत्र में वर्मा के अध्ययन 1969 में बताया गया हुआ मिलता है। ... पाया कि आत्मगत प्रवृत्ति के छात्रों में स्वयं सन्तोष करना, दूसरों की आलोचना करना, अन्य के आदर्शों का बहिष्कार करना तथा कक्षा में बाधा डालना आदि प्रवृत्तियाँ पाई गई। इस प्रवृत्ति के कारण थे—अध्ययन के समय खराब स्वास्थ्य, अकेलापन, सामान्य सामाजिक के लिए बुद्धिमता न आदि। नगरीय व ग्रामीण किशोरों की आवश्यकताओं के अध्ययन में गौर (1969) ने पाया कि नगर के समस्याओं वालों में स्वतन्त्रता सबधी समानता तथा सम्मान की आवश्यकता की आवश्यकता समान रूप में पाई है। परिवारों की आवश्यकता सबसे स्वीकार की। ग्रामीण छात्राओं में नियमबद्धिक रुचि की भावना कम पाई गई परन्तु छात्रों की भावना उनमें अधिक पाई गई। शहरी बालकों में गृह, आत्मसम्मान आदि के सबंधित मान्यिन्द के प्रति रुचि पाई गई तथा शहरी बालिकाओं जिनमें विचार न मिलें उनके सन्त की भावना भी उनमें पाई गई।

तनाव के क्षेत्र में 1972 में रामशरण प्रसाद त्याग ने व्यावसायिक शिक्षाधीन विद्यार्थियों का समाज मनोमितिक अध्ययन किया जिसके अनुसार विधि तथा शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में दुश्चिन्ता का समान स्तर था। भविष्य व्यवसाय के उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में ग्रामीण विद्यार्थियों की अपेक्षा कम तनाव पाया गया। ग्रामीण व शहरी शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के तनाव, आर्थिक सामाजिक स्तर तथा समायोजन में अन्तर नहीं था।

प्रत्यक्षण (Perception)

इस क्षेत्र में चौहान (1958) द्वारा राजस्थान में दृष्टि प्रत्यक्षण सम्बन्धी प्रथम ... किए गए एक मात्र अनुसंधान के बाद इस क्षेत्र में कोई काम नहीं हुआ

मिलता। इस अध्ययन म पाया गया कि हस्तलिपिका मे होने वाली गति मे प्रतिबोधन पदा होता है, गति के उपरान्त विभेदीकरण की प्रक्रिया स्वरूप आकृतियाँ जनमती हैं। प्रतिबोधन म नसगी रफ्ता के छात्र समान आयु के भील बालको स अधिक सक्षम थे। प्रतिबोधन क्षमता एमे व्यक्तियो म अपेक्षाकृत कम पाई गई जो मानसिक रूप मे अस्वस्थ थे।

आत्म प्रत्यय (Self concept)

व्यक्तित्व एव आत्म प्रत्यय के क्षेत्र म कुल चार शोधकाय उपलब्ध हुए हैं। सवप्रथम 1968 म तथा उसके पश्चात् 1972 स 1974 के मध्य प्रति वष एक एक। सवप्रथम पाण्डे न 1968 मे निष्कष निकाला कि किशार बालक स्वय अपने म दोष अनुभव करत हैं दायित्व स दूर भागत है नवीन परिस्थितियो म समायोजित नहीं हो पाते तथा अपन म हीनता की भावना अनुभव करते हैं उनम उपरविगत ग्रथि हाती है तथा कुछ लाभप्रद व मूल्यात्मक काम करन की भावना होती है। किशारियाँ अपेक्षाकृत भाग्यवादी होती हैं उनम आक्रामक भावना हाती है परन्तु वे परीक्षा क समय म सामान्यतया अधीर भी रहती ह और आलाचना से दूर रहना चाहती हैं। आशाकुमारी शमा (1973) न विभिन्न मनोवज्ञानिक परीक्षणा के परिणामो के मध्य सह सम्बन्ध गुणाक एव क्रातिक अनुपात (क्रिटिकल रेशो) की गणना करन पर पाया कि किशार छात्र छात्राओ का व्याख्यात्मक एव उपार्जित स्व बुद्धिलब्धि से सम्बन्धित है तथा आर्थिक सामाजिक स्तर का इसके विकास पर कोइ प्रभाव नही होता। कक्षा स्तर के अनुसार इसके विकार म कोइ अन्तर नही पाया गया, परन्तु 15 आयु के छात्र छात्राओ क मध्य अन्तर पाया गया। सरलाकुमारी शमा (1974) ने पाया कि लोकप्रिय एव साधारण छात्राओ के व्याख्यात्मक एव उपार्जित स्व के मध्य कोइ साथक अन्तर नही था मगर दोनो के नेतृत्व विशषक म साथक अन्तर था। लोकप्रिय छात्राएँ साधारण छात्राओ की अपेक्षा अधिक दृढ निश्चयी, सवगात्मक रूप मे स्थिर तथा मेहनती थी। चन्दोक (1972) न पाया कि आत्म प्रत्यय एव मानसिक योग्यता स्तर तथा असमायोजन के बीच उच्च तथा धनात्मक सहसम्बन्ध था। छात्रो की तुलना म छात्राओ म हीनता की भावना तथा सवेगात्मक अस्थिरता अधिक थी।

आवश्यकता एव समायोजन (Needs & Adjustment)

व्यक्तित्व समायोजन के क्षेत्र म शकरलाल शर्मा (1966) न मालूम किया कि शहरी एव ग्रामीण क्षेत्र के छात्रो तथा छात्राओ मे उत्तरदायित्व की भावना के मध्य कोई साथक अन्तर नही हाता। उत्तरदायित्व की भावना का धनात्मक एव साथक सम्बन्ध शक्ति सम्प्राप्ति एव सामाजिक स्वीकृति के बीच प्राप्त हुआ परन्तु व्यक्तित्व समायोजन के साथ यह सम्बन्ध ऋणात्मक रूप म रहा। सत्यनारायणसिंह (1968) तथा जन (1969) न छात्रो के समाजमिति स्तर को आधार बनाकर उनके व्यक्तित्व समायोजन का अध्ययन किया। उन्होने लोकप्रिय एकान्तप्रिय, उपेक्षित एव अस्वीकृत छात्रो का चयन करके निष्कष निकाला कि लोकप्रिय छात्रो का घर म समाज म तथा विद्यालय म सवेगात्मक समायोजन एकान्तप्रिय, उपेक्षित एव अस्वीकृत छात्रो से

निम्नस्तर रूप से अच्छा था। एकान्तप्रिय छात्रों का विद्यालय समायोजन उनके सामाजिक तथा संवेगात्मक समायोजन से अच्छा पाया गया। अस्वीकृत छात्रों का कुल समायोजन तारकिय, एकान्तप्रिय एवं उपेक्षित छात्रों की तुलना में निम्न स्तरीय पाया गया तथा अस्वीकृत एवं उपेक्षित छात्रों का गृह समायोजन तारकिय एवं एकान्तप्रिय छात्रों की तुलना में निम्न स्तरीय प्राप्त हुआ। उनके अनुसार तारकिय एवं अस्वीकृत छात्रों के गृह, स्वास्थ्य, संवेगात्मक तथा सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं था, परन्तु अध्यापकों और कक्षा के साथियों से उनके सम्बन्धों में, समूह भ्रमण व खेल तथा नैतिक कार्यों में सार्थक अन्तर था। अस्वीकृत छात्रों को उनके अभिभावकों द्वारा मंत्रणा दी जाती थी। उनमें आक्रामकता के चिह्न पाए गए तथा वे अजनबी लोगों से बात-चीत करने में हिचकिचाते थे। उनमें संवेगात्मक अस्थिरता पाई गई।

गुप्ता, पारस (1969) ने किशोर छात्राओं में मित्रता तथा व्यक्तित्व विशेषताओं के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करके पाया कि मित्रता निर्माण में आयु का महत्व होता है तथा आपसी रुचियों और घर से बाहर के मनोरंजन के साधनों में रुचिगत समानता मित्रता निर्माण के घटक होते हैं। नागपाल (1972) ने विद्यार्थियों के व्यक्तित्व कारकों का अध्ययन करके मालूम किया कि प्रतिभाशाली (Talented) विद्यार्थी उच्च आर्थिक सामाजिक स्तर के होते हैं, उनका अध्ययन कार्यक्रमानुसार होता है तथा उनका स्वास्थ्य अच्छा होता है, उनका सामाजिक समायोजन सामान्य रूप से अच्छा होता है तथा उनकी अभिरुचियों में परस्पर भिन्नता नहीं होती है परन्तु वे उच्च स्तरीय अभिवृत्ति वाले होते हैं। साहू (1974) ने मालूम किया कि प्रतिकूल स्थितियों में परिवारों के प्रवास का प्रभाव बालक-बालिकाओं के समायोजन पर पड़ता है। प्रवासी परिवारों के बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में मुख्य निर्धारक थे—माता पिता व अध्यापकों का उनके प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार, दुश्चिन्ताएँ, संवेगात्मकता, सामाजिक असमायोजन, मित्रों की कमी आदि। कुछ परिस्थितियों में प्रवासी बच्चों में परस्पर समायोजन, जीवन के प्रति वास्तविक अभिवृत्ति, दृढ़ निश्चय, कार्य में तत्परता व व्यवस्थित आदतें भी पाई गईं।

गुप्ता, रमा (1974) ने आवश्यकता व समायोजन का क्षेत्र मानकर छात्रावास वासी व अन्य किशोर विद्यार्थियों की आवश्यकता एवं समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन करने पर मालूम किया कि छात्रावास में रहने वाली छात्राओं में घर पर रहने वाली छात्राओं से काम, स्वास्थ्य, उपलब्धि एवं सम्मान अधिक होता है। छात्रावासी किशोरियों का गृह, सामाजिक तथा संवेगात्मक समायोजन भी घर में रहने वाली छात्राओं से अच्छा पाया गया। सागर (1971) ने अनुशासन के क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तिगत एवं आपसी मतों पर किए गए अध्ययन से मालूम किया कि स्वतन्त्रता तथा प्राकृतिक, सामाजिक और व्यक्तिगत अनुशासन के बीच कोई सह-सम्बन्ध नहीं था। नेतृत्व व प्राधिकारिक अनुशासन में कोई सम्बन्ध नहीं था। नेतृत्व व प्राकृतिक अनुशासन में तो सम्बन्ध पाया गया परन्तु व्यक्तिगत अनुशासन व नेतृत्व असम्बन्धित पाए गए।

सामाजिक सम्बन्ध (Social Relationship)

व्यक्तित्व और सामाजिक सम्बन्धो के क्षेत्र म अटवाल (1960) ने पाया कि 60 प्रतिशत विद्यार्थियो को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है। परन्तु स्वीकृत एव अस्वीकृत विद्यार्थियो के मानसिक योग्यता के स्तर व व्यक्तिरव की समस्याओ में साथक अन्तर नही होता। मगर गुप्ता (1973) ने मालूम किया कि बुद्धि व आर्थिक सामाजिक स्तर सामाजिक स्वीकृति अथवा अस्वीकृति को प्रभावित करते है। इनके उच्च होने पर स्वीकृति तथा निम्न होने पर अस्वीकृति प्राप्त होती है। माथुर (1966) न ज्ञात किया कि लडके व लडकिया की ईमानदारी व परहितवाची नतिक गुणा म अन्तर होता है। परन्तु समाज मितिक उच्च व निम्न समूहा के मूल्यो म अन्तर नहीं था। गौतम (1970) के अनुसार विभिन प्रकार के विद्यालया म कक्षाओ की सामाजिक सरचना लगभग समान सी होती है तथा लोकप्रिय लडकियो का आर्थिक सामाजिक स्तर लोकप्रिय लडका की अपेक्षा उच्चतर होता है। चौधरी (1974) ने अस्वीकृति के कारणा का अध्ययन करने पर घमण्ड अधिक बोलना, लडाई की आदत अनुशासन तोडना बीमारी गदी आदतें, सुस्तीपन आदि को प्रमुख घटक बताया। चरित्र विकास के क्षेत्र म हुखर (1965) ने मालूम किया कि आयु के वढन के साथ साथ चरित्र का विकास भी होता है। माहेश्वरी (1970) न कक्षा व्यवहार की सरचना विषय पर शोधकाय करने पर पाया कि तीव्र रूप से प्रतिगामी विचार रखन वाले छात्र दूसरो के ध्यानाकपण हेतु असामाजिक व्यवहार अपनाते हैं तथा उच्च स्तर पर स्वोपक्रमित विद्यार्थी लजीले स्वभाव के होते हैं। *दोनो ही प्रकार के विद्यार्थियो ने विद्यालय कायक्रमा म रुचि* प्रदर्शित की।

सामाजिक व्यवहार (Social Behaviour)

सामाजिक व्यवहार के क्षेत्र में किए गए अनुसधाना में सामाजिक व्यवहार के साथ ही लिंग व काम (सेक्स) सम्बन्धी अध्ययन भी सम्मिलित है। नसरी विद्यार्थियो *की व्यवहारगत समस्याओ के अध्ययना में अग्रवाल (1960), गौतम (1967) तथा* नरूला (1972) न मालूम किया कि नसरी विद्यार्थिया की समस्याएँ पयावरण पर अधिक आधारित होती हैं तथा उनम व्यक्तिगत कारक कम होत हैं। इन शोधकर्त्ताओ ने *यह भी पाया कि छात्राओ की अपेक्षा छात्रो की व्यवहारगत समस्याएँ अधिक होती हैं।* छात्राओ की समस्याओ म प्रमुख समस्याए थी—ईर्ष्या, दब्बूपन, सकोच, अधीरता तथा विद्यालय क सामान की तोड फोड। छात्रा की समस्याओ में प्रमुख थी—भागना, पत्थर *फकना, अवहेलना,* चोरी आदि। *गौतम (1967)* न अपने अध्ययन में यह भी पाया कि उच्च आर्थिक-सामाजिक स्तर के छात्र छात्राओ म व्यवहारगत समस्याएँ अधिक होती हैं।

जन (1970) ने ग्रामीण एव शहरी किशोर बालको के काम व्यवहार का अध्ययन करके पाया कि शहरी बालका मे ग्रामीण बालकों की अपेक्षा काम सम्बन्धी ज्ञान अधिक होता है। शहरी बालक लडकिया से बातचीत करने म कोई सकोच नही

करते। शहरी बालक छोटी उम्र में विवाह के विरुद्ध पाए गए, जबकि ग्रामीण बालक उसके पक्ष में रहे। शहरी बालक शराब प्रचलन में ग्रामीण बालकों से अधिक विश्वास रखते हैं। ग्रामीण बालक संयुक्त परिवार प्रणाली में विश्वास रखते पाए गए जबकि अधिकांश शहरी बालक एकल परिवार में विश्वास रखते पाए गए। ग्रामीण बालकों में समलैंगिक काम-व्यवहार पाया गया जबकि शहरी बालकों में बढ़ती प्रदर्शनवृत्ति और काम-साहित्य के प्रति रुचि पाई गई।

सृजनशीलता (Creativity)

इस क्षेत्र में शोधकार्य काफी देर से ही आरम्भ हुआ। व्यास (1973) ने अपने शोधकार्य में पाया कि सृजनशील विद्यार्थियों पर माता की ममता का प्रभाव अधिक होता है। सृजनशील विद्यार्थी सहनशील होते हैं व अपने से बड़ों के प्रति आदर रखते हैं तथा स्वयं के प्रति जागरूक होते हैं। सृजनशील विद्यार्थियों का व्यक्तित्व समायोजन सामान्य रूप से अच्छा होता है। उच्च स्तर के सृजनशील विद्यार्थियों का दृष्टिकोण अधिक आलोचनात्मक होता है। माथुर (1974) ने भी पाया कि उच्च स्तर के सृजनशील विद्यार्थियों का व्यक्तित्व समायोजन सामान्य रूप से अच्छा होता है मगर उच्च व निम्न स्तर के सृजनशील विद्यार्थियों के मध्य रचनात्मक युक्ति के परिप्रेक्ष्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता। जैन (1971) ने पाया कि पुरुष व महिला प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक प्रभाव, सृजनशीलता एवं रचनात्मक चिन्तन में सार्थक अन्तर होता है। महिला प्रशिक्षणार्थी पुरुष प्रशिक्षणार्थियों की अपेक्षा उच्च स्तरीय सृजनशील एवं रचनात्मक चिन्तन का कार्य करती हैं।

शैक्षिक विवक्षा (Educational Implications)

व्यक्तित्व एवं चारित्रिक विकास के क्षेत्र में नवर ग्रासर (1970) ने ज्ञात किया कि अन्तर्मुखी छात्राओं पर माताओं के स्नेहपूर्ण अथवा अनुशासनात्मक स्वभाव का अधिक प्रभाव पड़ता है। स्नेहपूर्ण व्यवहार का बहिर्मुखी छात्राओं पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। अन्तर्मुखी छात्राओं के साथ अधिक स्नेहपूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए परन्तु बहिर्मुखी छात्राओं की अवहेलना नहीं करना चाहिए। प्रभाकर (1970) ने ज्ञात किया कि विज्ञान व कला वर्ग के बालकों की शैक्षिक सम्प्राप्ति तथा उनके व्यक्तित्व के घटकों में धनात्मक सम्बन्ध होता है।

संभावनाएँ एवं सुझाव

इस क्षेत्र में सम्पन्न शोधकार्यों का अवलोकन करने पर ऐसा लगता है कि 1956 से 1974 के मध्य जितने शोधकर्ताओं ने इस क्षेत्र विशेष को चुना, उनको व्यक्तित्व के कुछ घटकों ने विशेष रूप से आकृष्ट किया तथा उनमें सामान्यतः निरन्तर कार्य होता रहा। इन घटकों में विशेष रूप से व्यक्तित्व के विभिन्नकारी घटक, आवश्यकता एवं समायोजन, दुश्चिन्ता एवं आक्रामक प्रकृति, सामाजिक सम्बन्ध तथा धार्मिक नैतिक घटक थे। इसके विपरीत प्रत्यक्षण, नैतिक विकास, व्यक्तित्व कारक, आत्म प्रत्यय तथा व्यक्तित्व निर्माण के घटक ऐसे थे जिनमें बहुत ही कम शोधकर्ताओं ने रुचि ली।

सम्पन्न शोधकार्यों म एक कमी विशेप रूप से सामने ग्राई कि इक्के-दुक्के शाधकत्ताग्रा को छाडकर शेप न विदशी मनोवनानिक उपकरणा तथा मानका का प्रयोग भारतीय न्यादश पर किया जो शोध विधि के नियमा के ग्रनुकूल नही ह। ग्रच्छा तो यह रहता कि शाधकत्ता उन उपकरणा का भारतीयकरण करके, ग्रपन यादश क ग्राधार पर मानक तयार करक, उनका उपयाग करत। कुछेक शोधकार्यों का छाडकर जिनम प्रायोगिक ग्राधार पर शोधकाय किए गए ग्रन्य शोधकाय मुख्य रूप से सर्वेक्षण विधि पर ही ग्राधारित रहे।

शाधकत्ताग्रा का न्यादश भी मुख्यत शहरी क्षेत्र ग्रौर उसमें भी विशेप रूप से किशोरावस्था के बालक-बालिकाग्रा तक सीमित रहा। बहुत कम ग्रनुसधाता ग्रामीण क्षेत्र की ग्रोर ग्राकृष्ट हुए तथा दुरह क्षेत्र के जनजाति के बालक बालिकाग्रा के व्यक्तित्व का ग्रध्ययन तो कवल एक ही शोधकत्ता न किया।

वतमान समय में साख्यिकी का महत्त्व शाधकार्यों म निरन्तर बढता जा रहा है। साख्यिकी भी विश्वसनीय तथा वध निष्कप निकालन म शोधकत्ताग्रा की पूणत सहायता करती है। परन्तु इन शोधकार्यों मे उच्च साख्यिकी के प्रयोग का ग्रभाव विशेप रूप से खटकता है।

शोधकाय किशोरावस्था के ग्रतिरिक्त ग्रन्य ग्रायु के बालक बालिकाग्रा का न्यादश लेकर भी सम्पन्न किए जाएँ तथा न्यादश मे शहरी क साथ ही ग्रामीण तथा विशप रूप से जनजाति क्षेत्र क बालक-बालिकाग्रा का भी चुना जाए। व्यक्तित्व क ग्रन्य घटका के साथ साथ प्रक्षेपण, व्यक्तित्व निर्धारण ग्रात्म प्रत्यय ग्रादि घटका पर भी शोध काय हाना जरूरी है। प्रायोगिक ग्राधार पर शोधकाय नही हाग तब तक मनोवनानिक शक्षिक उपपत्ति नही हागी। विदशो म निर्मित जाँच उपकरणा का भारतीय परिप्रेक्ष्य म सत्यापन तथा मानकीकरण भी जरूरी है। बल्कि तयार भारतीय उपकरणा के सत्यापन का काय भी किया जाए तथा नय उपकरण विकसित करने की चेप्टा भी रहे।

सदर्भाकित ग्रनुसधान

ग्रग्रवाल, शान्ताकुमारी	Survey of Behaviour Difficulties of Nursery School Children M Ed Raj Uni 1960
ग्रटवाल मोहिन्दरसिंह	An Investigation into the Relationship of Social Acceptance with Intelligence and Personal Problems of the High School Students of Sardarshahar M Ed Raj Uni 1960
ग्रातमसिंह	A Study of Moral Beliefs of Adolescents M Ed Raj Uni 1959
कानरा, शमशरचन्द्र	The Religious Beliefs of Adolescents, M Ed Raj Uni 1962

कुण्डू, सागर	Differential Personality Traits in Juvenile Offenders belonging to Scheduled Tribes and Others Ph D (Edu) Raj Uni 1966
कंवर रामसिंह	A Study of the Moral Judgment of the Students at Different Age levels and the Relationship between Moral Judgment and Other Related Factors M Ed Raj Uni 1963
कौल सूरज	A Study of the Needs of Adolescents M Ed Raj Uni 1969
खा ज्याहार मान्मन	An Investigation into Social Attitudes M Ed Raj Uni 1956
गग निमता	कक्षा दस के छात्र एवं छात्राओं की चिंता, मनोकामनाएँ एवं शैक्षिक अभिप्रेरणा का अध्ययन एम एड राज वि वि, 1972
गुप्ता रामनिवास	A Study of the Personality Characteristics of Science and Non Science Student Teachers M Ed Raj Uni 1972
गुप्ता, शशिप्रभा	कक्षा आठ के सामाजिक स्वीकृत एवं उपेक्षित विद्यार्थियों की बुद्धि सामाजिक आर्थिक स्तर रुचि एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणों का अध्ययन एम एड राज वि वि 1973
ग्रोवर पुष्पलता	A Study of Loving and Punishing Maternal Behaviour as related to Extrovert and Introvert Tendencies among School going Girls of Class IX of Jodhpur M Ed Jodhpur Uni 1970
गौड़ रघुनाथसिंह	A Comparative Study of Personality Characteristics of Urban and Rural Adolescents M Ed Raj Uni 1970
गौतम बुद्धिप्रकाश	Behaviour Problems of the Delta Class Students M. Ed., Raj. Uni 1967
गौतम राजेन्द्रकुमार	लोकप्रिय उपेक्षित एवं एकाकी बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1970
चलाक उषा	A Study of Self concept in relation with their Intelligence Socio Economic Status and Adjustment of X Class Students M Ed Raj Uni 1972
चौधरी चन्द्रसिंह	Reactions to Frustration Among the Children of Various Socio Economic Status Levels M Ed Raj Uni 1967
चौधरी मानाकुमारी	छात्राओं में सामाजिक अस्वीकृति के कारण एवं सामाजिक अस्वीकृति का अन्य चरों से संबंध एक शोध कार्य, एम एड, राज वि वि 1974

चौहान, श्यामसिंह	A Study of Perceptual Maturation Process, M Ed Raj Uni 1958
चौहान, हरिश्चन्द्र	उच्च तथा निम्न उपलब्धि वाले छात्रों के व्यक्तित्व विशेषक, एम एड, राज वि वि, 1972
जुल्का, गुलशनलाल	Aggression Fear and Anxieties in Children Their Educational Implications, Ph D (Edu) Raj Uni 1963
जन, आशा	An Investigation into the Relationship between Personality Characteristics and Creative and Intellectual Teaching of Student Teachers M Ed Raj Uni 1971
जन, दुलीचन्द	The Adjustment Problems of Stars and Rejectees M Ed Udaipur Uni 1969
जन, प्रकाशचन्द्र	ग्रामीण और शहरी किशोर बालकों के काम व्यवहार का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1970
जन स्वरूपचन्द्र	A Study of Moral Behaviour of Adolescents M Ed Raj Uni 1962
जोशी, नवलकिशोर	Neurotic Tendencies among Teachers M Ed Raj Uni 1970
जोशी विद्याधर	Anxiety and its Effect on Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 1966
ढिल्लो, जागेन्द्रसिंह	Group Rorschach Test as a Tool for investigating Personality Differences between the Intellectually Above Average and Below Average Students M Ed Raj Uni 1959
ढिल्ला, हरभजनसिंह	A Study of Students Leadership Patterns and Personality Traits of Student Leaders of High and Higher Secondary Schools for Boys of Amritsar City (Punjab) in relation with their Intelligence Achievement Vocational Performances and Participation in Co curricular Activities M Ed Raj Uni 1963
डाडियाल, सच्चिदानन्द	Art as a Projective Technique for Deviant Children M Ed Raj Uni 1959
डाडियाल, सच्चिदानन्द	Art as a Projective Techique for Children Ph D (Edu) Raj Uni 1964
तवर उदयचन्द	नवीं कक्षा के विद्यार्थियों की जिम्मेवारी की भावनाओं का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1972

तारासिह	व्यायाम प्रेमी तथा खिलाडी छात्रो का व्यक्तित्व सबधी अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1974
दाहिया नयमल	अच्छे खिलाडी तथा न खेलने वाले किशोर छात्रों के व्यक्तित्व का अध्ययन, एम एड राज वि वि, 1970
द्विवेदी प्रकाशचन्द्र	उच्च एव निम्न सप्राप्ति स्तर के किशोरों की बुद्धिलब्धि, व्यक्तित्व कारक एव व्यक्तित्व समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1970
धागट श्रीचन्द	अच्छे खिलाडी तथा न खेलने वाले छात्रो का दुश्चिन्तता परीक्षण एम एड, राज वि वि 1971
नरुला प्रतापकौर	Intelligence and Social Behaviour as observed among Nursery School Children M Ed Raj Uni 1972
नागपाल अरविन्द	Study of Personality Factors of the Talented Students M Ed Raj Uni 1972
नाटाना प्रकाशनारायण	Reading Readiness and Some Personality Correlates among Children M Ed Raj Uni 1968
पचारी, बद्रीलाल	Factors Leading to Aggressiveness M Ed Udaipur Uni 1969
प्रभाकर मराज	A Comparative Study of the Personality Factors of Boys and Girls Specialising in Various Fields of Study in relation to their Academic Achievements M Ed Raj Uni 1970
पाठक दामोदर प्र०	Comparative Study of Atheists and Theists among Adolescents M Ed Raj Uni 1964
पाण्डे, लक्ष्मी	विभिन्न कक्षाओं के स्तर पर लडके एव लडकियों की आवश्यकताओं का अध्ययन एम एड, राज वि वि 1968
पाण्डे रमाकान्त	A Study of the Self Concept of the Students of Class X M Ed Raj Uni 1968
पारीक मजु	छात्राध्यापकों के व्यक्तिगत पारस्परिक मूल्यों के सन्दर्भ मे अनुशासन के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन एम एड राज वि वि, 1971
पाल्म सुगना	Friendship Formation among Adolescent Girls and its Relation to Personality Traits M Ed Udaipur Uni 1969

बहुगुणा, शक्तिधर — A Study into the Moral Judgment of School going Children
M Ed Raj Uni., 1974

बागची, कृष्णा — Personality Adjustment among High and Low Anxious Children
M Ed Raj Uni 1972

बान्दा, कुलवन्त — A Comparative Study of Popular and Isolated Children
M Ed Raj Uni 1960

बद, बसन्तकुमारी — छात्र एव छात्राम्रो मे रुचिन्ताएँ,
एम एड, राज वि वि, 1972

बनीवाल ग्रोमप्रकाश — राजस्थान मे शिक्षा के क्षत्र मे कायरत विशिष्ठ ग्रभिकरणो के कार्यों का ग्रन्ययन
एम एड राज वि वि, 1973

बीराय, एच एच ए — A Comparative Study of Some Trends of Personality Development and other Relevant Variables as revealed by Non Harijan and Harijan Children of 11 to 14 Years of Sardarshahr (Rajasthan)
M Ed Raj Uni 1961

भट्ट चिरजीलाल — An Investigation into the Values of Students at Different Age levels and the Relationship between Values and other Related Factors
M Ed Raj Uni 1966

भागव, शशि — Projection of Personality in Spontaneous Drawings
M Ed Raj Uni 1972

माथुर इश्वरचन्द्र — An Investigation into Some Religious Traits of Adolescents and their Relationship with other Relevant Factors at Different Age levels
M Ed Raj Uni 1970

माथुर, राधेश्याम — Sociometric Status and Moral Attitude of Adolescents
M Ed Raj Uni 1966

माथुर, श्यामशरण — उच्च सृजनशील तया निम्न सृजनशील छात्रो के कुछ तत्त्वो का रोर्जेज्वाइग तक्नीक क ग्राधार पर ग्रन्ययन,
एम एड, राज वि वि, 1974

माथुर, छलविहारी — An Analytical Study of Children s Paintings as Indicators of their Personality Patterns
Ph D (Edu) Udaipur Uni 1972

माहेश्वरी, कृष्णा — A Study into the Structures of Classroom Behaviour of Divergent and Convergent Thinkers of Class VII
M Ed Raj Uni 1970

मीना, सुशीला — Adjustment of Children from Migrated Families
M Ed Raj Uni 1974

राठौर, घीसूसिंह	A Comparative Study of Values of High School Boys and Girls, M Ed Raj Uni 1972
राय राज	An Investigation into the Personality Values of High and Low Achievers among X Class Girls M Ed Jodhpur Uni 1968
रेखी गुरशरण	To Study the Needs and Adjustment of Residential and Non residential School-going Adolescent Girls M Ed Raj Uni 1974
ललवानी, गान्धवरी	To Study the Personality Characteristics of Students Choosing Various Streams of Courses M Ed Raj Uni 1972
वर्मा, जयवार	अध्यापकों के व्यक्तित्व सम्बन्धी शीलगुण एम एड, राज वि वि 1970
व्यास, भगवतीलाल	Personality Patterns of Creative Students M Ed Udaipur Uni 1973
व्यास, रामेश्वरप्रसाद	Psycho Socio Study of Tension among Professional Students M Ed Raj Uni 1972
व्यास, शिवशंकर	Controlled Fantasy as Predictor of Personality M Ed Raj Uni 1972
वीरमानी स्नेह	A Study of Anxiety in Indian Adolescent Girls M Ed Udaipur Uni 1968
शर्मा, आशाकुमारी	A Study of the Development of the Self Concept of the Boys and Girls of Higher Secondary Classes M Ed Raj Uni 1973
शर्मा छत्रमोहन	Reaction to Frustration among Adolescents in the School Situations Ph D (Ed) Raj Uni 1973
शर्मा छत्रमोहन	A Study of Reaction to Frustration among the Super Normals Normals and Sub Normals M Ed Raj Uni 1962
शर्मा, धरनीधर	A Study of the Personality Traits of Higher Secondary School Teachers M Ed Raj Uni 1969
शर्मा मांगीलाल	छात्रों के धर्म सम्बन्धी ज्ञान एवं अभिवृत्ति में परिवर्तन एक प्रयोगात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1969
शर्मा, रमाकुमारी	A Study of the Personality Characteristics of Public School Boys M Ed Raj Uni 1969

शर्मा, लक्ष्मीलाल	An Investigation into the Personality Traits of Elected Student Leaders M Ed Raj Uni 1971
शर्मा, शंकरलाल	An Investigation into the Responsibility Feelings of X Class Students, M Ed Raj Uni 1966
शर्मा, सत्यप्रकाश	Personality Patterns of Stars and Isolates M Ed Raj Uni 1968
शर्मा, सत्यपाल	खिलाडियों एव न खेलने वाले छात्रो का व्यक्तित्व समायोजन सम्बन्धी अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1974
शर्मा सरलाकुमारी	A Comparative Study of Self Concept and Leadership Traits among Popular and Un popular Adolescent Subjects M Ed Raj Uni 1974
शर्मा हरदयाल	A Comparative Study of Responsibility Feelings of VIII Class Students belonging to Rural and Urban Areas, M Ed Raj Uni 1968
शास्त्री, कमला	A Study of Reactions to Frustration Adjustment and Attitudes towards Studies of the Girls during Pubertal and Prepubertal Periods M Ed Raj Uni 1967
सक्सेना, चन्द्रलेखाकुमारी	An Investigation into the Personality Traits and Adjustment of Adolescent Girls in relation to their Intelligence M Ed Raj Uni 1966
सक्सेना मिथिलेशकुमारी	A Study of the Impact of Intelligence and Thinking upon Certain Personality Dime nsions of School going Adolescent Girls M Ed Raj Uni 1973
सिंधु रणजीतसिंह	Social Maturity of Children M Ed Raj Uni, 1962
सिंह सत्येन्द्रपाल	A Comparative Study of Neurotic Trends among Sportsmen and Non sportsmen M Ed Raj Uni 1972
सिंह यज्ञनारायण	A Study of the Personality Adjustment of the Populars Rejectees Neglectees and Isolates of Class IX of Ajmer M Ed Raj Uni 1968
हुरकट, बंशीलाल	An Investigation into the Character Deve lopment of the Students of Rajasthan at different Age Levels and the Relationship between Character Development and other Related Factors M Ed Raj Uni., 1965
हाडा, राजेन्द्र	A Comparative Study of Leadership Traits of Anxious and Non Anxious Adolescents in Relation to Parents S E S and their Academic Achievement, M Ed Raj Uni 1973

□

शैक्षिक सम्प्राप्ति के सह-सम्बन्धक

□ जगदीशनारायण पुरोहित
□ कृष्णगोपाल बाजावत

विद्यालयी शिक्षा से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह विद्यार्थी हो या अध्यापक चाहे वह अभिभावक हो या प्रधानाध्यापक, चाहे वह शैक्षिक प्रशासक हो या शिक्षक प्रशिक्षक, यह चाहता है कि शैक्षिक सम्प्राप्ति उच्च स्तर की हो। परन्तु यह तथ्य किसी से छिपा हुआ नहीं है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक सम्प्राप्ति का स्तर अपेक्षित स्तर से निम्नतर है। वस्तुतः शैक्षिक सम्प्राप्ति अनेक घटकों (factors) के परस्पर अन्तर्सम्बन्धों का प्रतिफल है। इसमें एक ओर विद्यार्थी की बुद्धि तथा उसके व्यक्तित्व से सम्बन्धित घटक कार्य करते हैं तो दूसरी ओर उसके पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश से सम्बन्धित घटक होते हैं तथा तीसरी ओर विद्यालय के सम्पूर्ण वातावरण जिसमें मुख्यतः प्रधानाध्यापक, अध्यापक, अध्ययन अध्यापन की परिस्थितियाँ तथा साधन-सुविधाओं सम्बन्धी घटक होते हैं। इन तीनों स्रोतों में विद्यमान विभिन्न घटकों के परस्पर अन्तर्सम्बन्धों का प्रतिफल हमें विद्यार्थी की शैक्षिक सम्प्राप्ति के स्तर में देखने को मिलता है।

राजस्थान में शिक्षा के क्षेत्र में शोध-कार्य प्रारम्भ होने से लेकर सन् 1974 तक शैक्षिक सम्प्राप्ति के सह-सम्बन्धकों के क्षेत्र में जो शोधकार्य हुआ है (जिसमें 4 पीएच. डी. स्तर तथा शेष एम. एड. स्तर के हैं) उसे अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से शैक्षिक सम्प्राप्ति तथा बुद्धि/आत्मप्रत्यय/अभिवृत्ति/चिन्ता/समायोजन/समाजमिति/अध्ययन आदतें/व्यक्तित्व के अन्य पक्ष/सामाजिक आर्थिक स्तर/ग्रामीण-नगरीय परिवेश/सहशैक्षिक प्रवृत्तियाँ/अध्ययन अध्यापन की स्थितियाँ आदि वर्गों में बाँटा जा सकता है।

बुद्धि एवं शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस वर्ग में 15 शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययनों में बुद्धि का शैक्षिक सम्प्राप्ति के साथ सह-सम्बन्ध ज्ञात किया है। बलस्वामि (1957) [illegible] (1961) [illegible] (1964) [illegible] (1964) स्वामी (1964) गुप्ता (1965) [illegible] (1965), मुधार (1967) जैन (1967) [illegible] (1967) [illegible] (1968), माहेश्वरी (1969) और पंवार (1973) ने बुद्धि तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध देखा है। परन्तु [illegible] (1970) के अनुसार शैक्षिक सम्प्राप्ति का बुद्धि से महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध नहीं है। कुछ शोधकार्य ऐसे भी हुए हैं जिनमें विषय विशेष में

सप्राप्ति के सहसम्बन्धता की जानकारी मिलती है। शर्मा (1966) न विज्ञान विषय म योग्यता के पाच महत्वपूर्ण सहसम्बन्धक ज्ञात किए हैं जिनम बुद्धि प्रमुख है। माथुर (1971) न ग्रपने पीएच डी ग्रध्ययन म यह ज्ञात किया है कि जलोटा सामान्य मानसिक-योग्यता मापनी विज्ञान तथा मानवीय विषयो की उपलब्धि का ग्रच्छा प्राक्सूचक (Predictor) है। फाटक (1972) की पीएच डी गवेषणा के ग्रनुसार उच्च स्तर की सप्राप्ति वाले विद्यार्थियो की मध्यमान बुद्धिलब्धि 131 2 ग्रौर निम्न स्तर की सप्राप्ति वाले विद्यार्थियो की मध्यमान बुद्धिलब्धि 93 7 पाई गई। यह तथ्य सिद्ध करता है कि बुद्धिलब्धि शक्षिक सप्राप्ति का प्रमुख सह सम्बन्धक है। शुक्ला (1972) के ग्रनुसार रसायन विज्ञान म विद्यार्थियो की सप्राप्ति का बुद्धि से सहसम्बन्ध 609 पाया गया। मलिक (1973) का भी रसायन विज्ञान के क्षेत्र म ऐसा ही निष्कर्ष है। गुरुदयालसिंह (1972) के ग्रनुसार भौतिक विज्ञान म विद्यार्थियो की सप्राप्ति तथा बुद्धि के मध्य सार्थक (Significant) तथा धनात्मक सहसम्बन्ध है। साधी (1973) ने ग्रपनी गवेषणा के ग्राधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि बुद्धि के साथ सामान्य विज्ञान विषय की सप्राप्ति का सहसम्बन्ध 61 है।

भाषा के क्षेत्र म पूनिया (1970) की गवेषणा के ग्रनुसार हिन्दी पठन योग्यता ग्रौर बुद्धि का गहरा सहसम्बन्ध है। व्यास (1971) के ग्रनुसार बुद्धि का बालको क सहज शब्द भडार पर प्रभाव पडता है।

उक्त गवेषणाग्रो मे शोधकर्त्ताग्रो न बुद्धिमापन के लिए ग्रधिकाशत जलोटा सामान्य मानसिक योग्यता मापनी काम म ली है। शेष न ग्रन्य शाब्दिक बुद्धि-परीक्षणो का उपयोग किया है। शक्षिक सप्राप्ति क लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा ग्रायोजित परीक्षा क प्राप्ताक, जामिया मिलिया सप्राप्ति परख तथा स्वनिर्मित सप्राप्ति परख को ग्राधार बनाया गया ह।

बुद्धि तथा शक्षिक सप्राप्ति क क्षेत्र म हुए उक्त ग्रनुसधानो के ग्राधार पर यह तथ्य स्पष्ट रूप स उभर कर सामने ग्राता है कि बुद्धि शक्षिक सप्राप्ति का एक प्रमुख सहसम्बन्धक ह।

ग्रात्म प्रत्यय तथा शक्षिक सप्राप्ति

इस वर्ग में केवल दो ही शोध कार्य उपलब्ध हैं ग्रौर व भी एम एड स्तर के। देवल (1966) न स्वनिर्मित ग्रात्म प्रत्यय मापनी (Self Concept Scale) के द्वारा ग्रात्म प्रत्यय तथा शक्षिक सप्राप्ति का सहसम्बन्ध ज्ञात किया, जो 39 ग्राया। यह सह-सम्बन्ध 01 स्तर (Level of Significance) पर सार्थक पाया गया। रोहतगी (1970) ने विद्यार्थियो तथा ग्रध्यापको के ग्रात्म प्रत्यय का शक्षिक सप्राप्ति पर प्रभाव का ग्रध्ययन किया। इस शोध के ग्रनुसार विद्यार्थियो तथा ग्रध्यापको क ग्रात्म प्रत्यय तथा उनकी सप्राप्ति म समरूपता थी। यदि ग्रादर्श ग्रात्म (Ideal self) तथा वास्तविक ग्रात्म (Real self) म धनात्मक ग्रसगति (Positive discrepancy) थी तो शक्षिक सप्राप्ति उच्च पाई गई ग्रौर यदि ग्रादर्श ग्रात्म तथा वास्तविक ग्रात्म म ऋणात्मक ग्रसगति थी तो शक्षिक सप्राप्ति निम्न स्तर की पाई गई।

इन गवेषणाओं में शोधकर्ताओं ने आत्म प्रत्यय मापनी तथा सिमैंटिक विभेदीकरण मापनी (Semantic Differential Scale) को आत्म प्रत्यय मापन के लिए तथा सम्प्राप्ति परीक्षा को सम्प्राप्ति मापन के लिए उपयोग किया।

यद्यपि इस क्षेत्र में हुई गवेषणाओं से आत्म प्रत्यय तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का धनात्मक सम्बन्ध सिद्ध हुआ है फिर भी यह सम्बन्ध कितना घनिष्ठ है यह जानने के लिए और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता स्पष्ट परिलक्षित होती है।

अभिवृत्ति तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस वर्ग में रायर (1960) ने अंग्रेजी विषय के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति तथा विषयगत सम्प्राप्ति के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात किया। इस अध्ययन के अनुसार सकारात्मक तथा नकारात्मक अभिवृत्ति का सीधा सम्बन्ध क्रमशः उच्च एवं निम्नस्तर की सम्प्राप्ति से है। साहू (1960) ने अपने अध्ययन में हिन्दी, गणित, सामाजिक ज्ञान तथा सामान्य विज्ञान विषयों के प्रति विद्यार्थियों की सकारात्मक अभिवृत्ति का उच्च सम्प्राप्ति से घनिष्ठ सहसम्बन्ध ज्ञात किया। माथुर (1961) ने विद्यार्थियों का गृहकार्य के प्रति अभिवृत्ति तथा उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध पाया। यह सह सम्बन्ध अधिकांश विषयों में 61 से 87 के मध्य था। दवे (1966) ने अध्ययन के प्रति अभिवृत्ति तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति के मध्य 29 सहसम्बन्ध ज्ञात किया जो कि 01 स्तर पर सार्थक बताया गया है।

इन शोधकर्ताओं ने स्वनिर्मित प्रश्नावलियों को अभिवृत्ति मापन के लिए तथा जामिया मिलिया वस्तुनिष्ठ-परीक्षा को सम्प्राप्ति मापन के लिए उपयोग किया है।

अभिवृत्ति तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति के क्षेत्र में हुई उक्त गवेषणाओं से यह स्पष्ट है कि अभिवृत्ति तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का सार्थक सह-सम्बन्ध है परन्तु शोध का क्षेत्र इतना सीमित है तथा शोधों की संख्या भी इतनी कम है कि इनके आधार पर शैक्षिक सम्प्राप्ति में अभिवृत्ति का सार्थक महत्व निश्चित कर पाना कठिन है।

चिन्ता तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस क्षेत्र में एम. एड. स्तर के जो शोध कार्य हुए हैं उनमें से एक अध्ययन में शर्मा (1967) ने चिन्ता तथा भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और गणित में क्रमशः 12 – 11 – 15 का सहसम्बन्ध पाया है। महावीरप्रसाद शर्मा (1968) ने चिन्ता तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति के मध्य ऋणात्मक सहसम्बन्ध ज्ञात किया तथा अपने अनुसंधान से यह निष्कर्ष निकाला कि चिन्ता का शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन से यह भी निष्कर्ष निकाला गया है कि चिन्ताग्रस्त विद्यार्थी अध्ययन में पिछड़ जाते हैं। गुप्ता (1971) ने भी अत्यधिक चिन्ताग्रस्त किशोर विद्यार्थियों तथा चिन्तामुक्त किशोर विद्यार्थियों की शैक्षिक सम्प्राप्ति के मध्य सार्थक अन्तर पाया। इन अनुसंधानकर्ताओं ने चिन्ता का मापन करने के लिए क्रमशः जेनेट टेलर, आर. पी. भटनागर तथा सिन्हा द्वारा निर्मित चिन्ता मापनियों को काम में लिया।

इस क्षेत्र में हुए उक्त गवेषणाओं से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अत्यधिक चिन्ता का शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। परन्तु इससे समस्या का समाधान नहीं होता। क्या अत्यन्त कम चिन्ता का शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा? क्या चिन्ता अधिगम के प्रति ग्रहणशील नहीं बनाती? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर ज्ञात करना आवश्यक है।

समायोजन तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस वर्ग में जो अनुसंधान हुए हैं उनमें से एक पीएच. डी. स्तर का तथा शेष एम. एड. स्तर के हैं। पारीक (1968) ने किशोरावस्था के समय विभिन्न विषयों में सम्प्राप्ति पर समायोजन के प्रभाव का अध्ययन करने पर पाया कि समायोजन का विभिन्न विषयों की सम्प्राप्ति पर तद्वत प्रभाव पड़ता है। रना (1964) ने उच्च सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों का मध्यमान समायोजनांक 79.11 तथा निम्न सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों का 56.34 ज्ञात किया। शर्मा (1966) ने व्यक्तित्व समायोजन का विज्ञान विषय में उच्च सम्प्राप्ति के पाँच प्राक्सूचकों में से एक ज्ञात किया। शर्मा (1967) ने व्यक्तित्व समायोजन तथा भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और गणित की सम्प्राप्ति के मध्य क्रमशः 25, 05, तथा 29 का सहसम्बन्ध ज्ञात किया। शिखरचन्द जैन (1969) ने विद्यालय एवं परिवार में कुसमायोजन का विद्यार्थियों की निम्न सम्प्राप्ति के साथ साधारण सम्बन्ध पाया। शर्मा (1971) ने निष्कर्ष निकाला कि विभिन्न क्षेत्रों में कुसमायोजन का कुप्रभाव उच्च सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों पर पड़ता है। साथ ही यह भी ज्ञात किया कि निम्न स्तर की सम्प्राप्ति का कारण घर, विद्यालय तथा समाज में कुसमायोजन भी है। फाटक (1972) ने अपने पीएच. डी. अनुसंधान में यह पाया कि विज्ञान विषय में उच्च सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों का समायोजन निम्न सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों से अपेक्षाकृत अच्छा है। पँवार (1973) ने भी बालिकाओं के संदर्भ में ऐसे ही निष्कर्ष निकाले।

उक्त शोधकर्ताओं ने समायोजन मापने के लिए बैल की व्यक्तित्व सूची (Bale s Personal Inventory), डा. एम. एस. एस. सक्सेना की व्यक्तित्व सूची तथा अन्य निर्धारण मापनियों (Rating Scales) का उपयोग किया।

इन अनुसंधानों से यह तथ्य स्पष्ट रूप से उभरता है कि समायोजन का शैक्षिक सम्प्राप्ति से सहसम्बन्ध तो है मगर समायोजन किस सीमा तक शैक्षिक सम्प्राप्ति को प्रभावित करता है, पारिवारिक समायोजन, सहपाठियों के साथ समायोजन, स्वास्थ्य समायोजन, संवेगात्मक समायोजन आदि में से किसका शैक्षिक सम्प्राप्ति पर अधिक प्रभाव पड़ता है तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति के विभिन्न घटकों में समायोजन का सापेक्षिक महत्व क्या है, ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनकी ओर शोधकर्ताओं का ध्यान आकर्षित नहीं हो पाया है।

समाजमिति स्तर तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस क्षेत्र में एम. एड. स्तर के केवल दो शोधकार्य उपलब्ध हैं। उपमन्यु (1968) ने समाजमितिक स्तरांक (Sociometric Status Score) तथा शैक्षिक

सम्प्राप्ति के मध्य निम्न स्तर का धनात्मक सहसम्बन्ध पाया। अलग अलग विषयों की दृष्टि से अध्ययन करने पर यह सहसम्बन्ध अंग्रेजी, गणित तथा सामान्य विज्ञान में सार्थक पाया गया जबकि हिन्दी सामाजिक ज्ञान, चित्रकला संस्कृत तथा उद्योग में यह सहसम्बन्ध सार्थक नहीं था। नीलमणता (1972) ने सामाजिक स्वीकृति का हिन्दी, सामाजिक ज्ञान, सामान्य विज्ञान तथा सम्पूर्ण शैक्षिक सम्प्राप्ति पर धनात्मक प्रभाव पाया। इस शोध के अनुसार सन्दूक में सामाजिक स्वीकृति भी सम्प्राप्ति पर अनुकूल प्रभाव डालती है।

इन शोधकर्त्ताओं ने समाजमिति स्तर तथा सामाजिक स्वीकृति ज्ञात करने के लिए समाजमिति तकनीक अपनाई है।

अध्ययन आदतें तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस वर्ग में उपरोक्त एम एड स्तरीय अध्ययनों में तिवारी (1965) चारन्दिया (1969), पारीक (1970) तथा पँवार (1973) ने अध्ययन आदतों का शैक्षिक सम्प्राप्ति से घनिष्ठ सम्बन्ध देखा। फाटक (1972) ने अपने पाँच के अनुसंधान में विज्ञान विषयों में उच्च सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतें निम्न सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों से उच्च स्तर की पाई। इसके विपरीत पुरोहित (1971) ने अध्ययन आदतों तथा सम्प्राप्ति का सहसम्बन्ध केवल 09 बताया।

कुछ शोधकर्ताओं ने बुद्धि तथा अध्ययन आदतों का सबंध भी ज्ञात किया। चोरडिया (1969) ने अध्ययन आदतों का बुद्धि से घनिष्ठ सहसम्बन्ध ज्ञात किया जबकि पुरोहित (1971) ने इनके मध्य सहसम्बन्ध केवल 17 पाया। शर्मा (1967) ने अध्ययन आदतों को शैक्षिक सम्प्राप्ति के प्राक्सूचक में से एक ज्ञात किया है। शर्मा (1966) ने भी विज्ञान विषयों में अच्छी उपलब्धि के प्राक्सूचकों में से अध्ययन आदतों को एक पाया। दत्त (1959) के अनुसार सामान्य से उच्च स्तर वाले विद्यार्थी योजनाबद्ध ढंग से अध्ययन करते पाए गए। प्यारसिंह (1972) ने राजकीय एवं सहायता प्राप्त विद्यालयों के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया।

इस वर्ग में शोधकर्त्ताओं ने अध्ययन आदतों का सर्वेक्षण करने के लिए स्वनिर्मित प्रश्नावलियों का तथा एम एन राव की अध्ययन आदत तालिका (Study Habit Inventory) का उपयोग किया।

उक्त गवेषणाओं से यह निष्कर्ष स्वाभाविक रूप से निकाला जा सकता है कि अध्ययन आदतें शैक्षिक सम्प्राप्ति का एक सहसम्बन्धक है। साथ ही अध्ययन आदत शैक्षिक सम्प्राप्ति का एक प्राक्सूचक भी है।

व्यक्तित्व के अन्य पक्ष तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करने की दृष्टि से चार एम एड स्तर के तथा दो पीएच डी स्तर के अध्ययन उपलब्ध हैं।

अपन पीएच डी अध्ययन म रस्तोगी (1964) ने रुचि तथा शक्षिक सप्राप्ति के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात किया। किन्तु निष्कर्ष निकाला कि यह सहसम्बन्ध इतना उच्च नही है कि रुचि को शक्षिक सप्राप्ति का प्राक्सूचक माना जा सके।

शमा (1965) ने वयक्तिक मूल्य तथा शक्षिक सप्राप्ति सम्बन्धी गवेषणा म यह ज्ञात किया कि जो विद्यार्थी ऊँची आकाक्षा रखत हैं उनकी सप्राप्ति का स्तर भी ऊँचा होगा। रना (1968) न अपन पीएच डी अनुसधान म उच्च स्तरीय सृजनशील बालको की शक्षिक सप्राप्ति तथा निम्न स्तरीय सृजनशील बालका की शक्षिक सप्राप्ति मे सार्थक अन्तर देखा। माहेश्वरी (1969) ने अन्तमुखी तथा बहिमुखी व्यक्तित्व का शक्षिक सप्राप्ति से सम्बन्ध ज्ञात करते हुए पाया कि इनका शक्षिक सप्राप्ति पर प्रभाव नही पडता। गहलौत (1969) न आकाक्षा स्तर तथा शक्षिक सप्राप्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध पाया। उपासिह (1972) न शक्षिक उत्प्रेरणा का शक्षिक सप्राप्ति पर धनात्मक प्रभाव देखा।

इन शोधकर्त्ताओ न स्वनिर्मित प्रश्नावलिया का, रना (1968) न मिनसोटा सृजनात्मक चिन्तन मापनी, माहश्वरी (1969) न अन्तमुखी बहिमुखी परख तथा गहलौत (1969) न आकाक्षा-स्तर परख का उपयोग किया। इस क्षेत्र मे व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षा पर एक एक अनुसधान हुआ है। अत आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्यक पक्ष पर अधिक गहराइ एव विस्तार से अध्ययन आयोजित किए जाएँ, ताकि बाद स्पष्ट स्थिति उभर कर सामन आ सक।

सामाजिक आर्थिक स्तर तथा शक्षिक सप्राप्ति

शक्षिक सप्राप्ति का सामाजिक आर्थिक स्तर से सहसम्बन्ध ज्ञात करन के लिए जो अनुसधान हुए हैं, उनम से बलदेवसिंह (1957) भटनागर (1958), शमा (1961), शिवचरण (1965), तिवारी (1965), महावीरप्रसाद शमा (1968), माहेश्वरी (1969), पूनिया (1970), उपासिह (1972) फाटक (1972) नीलमलता (1972) तथा पँवार (1973) क अनुसार सामाजिक आर्थिक स्तर का शक्षिक सप्राप्ति स घनिष्ठ सहसबध है। परन्तु चोरडिया (1969) पारीक (1970) शमा (1971) एव शर्मा (1972) के अनुसार सामाजिक आर्थिक स्तर का शक्षिक सप्राप्ति पर महत्व पूण प्रभाव नही पडता।

रना (1964) न उच्च सप्राप्ति वाले विद्यार्थियो के अभिभावका के सामा जिक आर्थिक स्तराक (Mean Socio Economic Score) का मध्यमान 15 95 तथा निम्न सप्राप्ति वाले अभिभावको क सामाजिक आर्थिक स्तराक का मध्यमान 12 86 ज्ञात किया। तिवारी (1965) के अनुसार अभिभावको की शक्षिक योग्यता का बालको की शक्षिक सप्राप्ति पर तद्वत् प्रभाव पडता है। शर्मा (1972) ने समान सामाजिक आर्थिक स्तर वाले अभिभावका म डाक्टर, वकील तथा अभियन्ताओ के बालक-बालिकाओ का सप्राप्ति स्तर अन्य व्यवसाय वाला से उच्चतर पाया। गुरुदयाल सिंह (1972) के अनुसार निम्न शक्षिक योग्यता वाले अभिभावका के बच्चो को घर

पर आकर एवं शारीरिक बोध करने पड़ते हैं जिनका उनकी विज्ञान विषय की कुशलताओं पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। महावीरप्रसाद शर्मा (1968) ने सामाजिक आर्थिक स्तर तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का सहसम्बन्ध 6 पाया। पूनिया (1970) ने सामाजिक-आर्थिक स्तर को शिक्षा पठन-योग्यता का मुख्य घटक माना तथा फाटक (1972) ने विज्ञान विषयों में उच्च सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों का सामाजिक आर्थिक स्तर निम्न सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्चतर पाया।

इस क्षेत्र में शोधकर्ताओं ने सामाजिक आर्थिक स्तर का मापन करने के लिए मुख्य रूप से कुप्पुस्वामी की सामाजिक आर्थिक-स्तर-मापनी का उपयोग किया।

अधिकांश गवेषणाओं से यह तथ्य उभरता है कि सामाजिक आर्थिक स्तर का शैक्षिक सम्प्राप्ति से घनिष्ठ सम्बन्ध है। कुछ गवेषणाओं से यह भी स्पष्ट होता है कि अभिभावकों की शैक्षिक योग्यता का उनके बच्चों की शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रभाव पड़ता है।

ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस क्षेत्र में रेना (1964) ने अपने अध्ययन में जामिया मिलिया वस्तुनिष्ठ सम्प्राप्ति परख का उपयोग करते हुए पाया कि निम्न सम्प्राप्ति वाले विद्यार्थियों में से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र के थे। परन्तु दरियानाना (1970) ने स्वनिर्मित परख का उपयोग करते हुए भूगोल विषय की सम्प्राप्ति पर ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश का कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पाया। इतिहास विषय में श्रीवास्तव (1971) के निष्कर्ष दरियानाना (1970) के समान ही रहे।

सहशैक्षिक प्रवृत्तियाँ तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति

इस क्षेत्र में गुप्ता (1965) के अनुसार सहशैक्षिक प्रवृत्तियों में प्रतिभागीत्व और शैक्षिक सम्प्राप्ति के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध है। अग्रवाल (1971) ने नागरिक प्रवृत्तियों में प्रतिभागीत्व और शैक्षिक सम्प्राप्ति के बीच ऋणात्मक सहसम्बन्ध पाया। जागोट (1969) ने शारीरिक कुशलता तथा बौद्धिक उपलब्धि के मध्य 02 सहसम्बन्ध ज्ञात किया जो कि नगण्य है। इस अध्ययन में यह भी निष्कर्ष निकाला गया कि शैक्षिक सम्प्राप्ति तथा शारीरिक कुशलता दो स्वतन्त्र घटक हैं तथा उनका परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है।

इनके अतिरिक्त शर्मा (1959) ने विद्यार्थियों के अवकाश के समय की प्रवृत्तियों का शैक्षिक सम्प्राप्ति से सम्बन्ध ज्ञात करने पर मालूम किया कि विद्यार्थियों की अवकाशकालीन प्रमुख प्रवृत्तियाँ पुस्तकें पढ़ना, गाना सुनना, अभिभावकों का उनके व्यावसायिक कार्यों में सहयोग देना, पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ना तथा खेल खेलना आदि हैं और इनमें लगाए गए समय का शैक्षिक सम्प्राप्ति से सहसम्बन्ध 40 है। मिनोचा (1969) ने नर्सरी स्कूल के बालक-बालिकाओं की खेल क्रियाओं की रुचियों में अन्तर पाया। साथ ही बालिकाओं की चित्रकलात्मक और कथात्मक प्रवृत्तियों की, तथा बालकों की चित्रावलोकन की प्रवृत्ति की तुलना में बुद्धि से अधिक सहसम्बन्ध पाया गया।

इस क्षेत्र म प्रवृत्तियो का सर्वेक्षण करन के लिए प्रश्नावलिया, साक्षात्कार तथा विद्यालय रेकाड का उपयोग किया गया, तथा शक्षिक सप्राप्ति क लिए विद्यालय एव बोड द्वारा आयोजित परीक्षाओ क अको को आधार बनाया गया था ।

अध्ययन अध्यापन सस्थितियाँ तथा शैक्षिक सप्राप्ति

इस वग म हुए एम एड स्तर के शाध कार्यो म हुक्कू (1970) न चार विद्यालयों क प्रकरण अध्ययन (Case Study) के आधार पर यह ज्ञात किया कि अधिक स्टाफ तथा अधिक साधना का सप्राप्ति पर कोइ प्रभाव नही पडता । बलवीर कौर (1972) के अनुसार कक्षा म अध्यापिकाएँ अध्यापको की अपक्षा अधिक अनुकूल सामाजिक सवगात्मक पर्यावरण बनान म सफल हाती हैं । अग्रवाल (1973) न अध्यापक के मौखिक व्यवहार और विद्यार्थियो की शक्षिक सप्राप्ति का सम्बन्ध ज्ञात किया । उसमे यह तथ्य उजागर हुआ कि अध्यापक की अनवरत भाषण विधि का विद्यार्थियो की सप्राप्ति के साथ ऋणात्मक सहसम्बन्ध है । जा अध्यापक विद्यार्थियो के वाछित कार्यों को सराहते हैं तथा जो क्रमबद्ध ढग स प्रश्न पूछते हैं, उनके विद्यार्थियो की सप्राप्ति का स्तर उच्च पाया गया ।

हुक्कू (1970) न प्रकरण अध्ययन विधि, बलवीरकौर (1972) ने सामाजिक सवेगात्मक स्थिति ज्ञात करन के लिए आर पी सिंह की सामाजिक सवेगात्मक पर्यावरण मापनी तथा अग्रवाल (1973) ने 28 पाठो को टेप करके राइट एव नट हाल विधि से उनका वर्गीकरण किया था ।

सभावनाएँ एव सुझाव

जसा कि प्रारम्भ म स्पष्ट किया गया है शक्षिक सप्राप्ति के सहसम्बन्ध का क्षत्र उन सब की रुचि का है जिनकी विद्यालयी शिक्षा म रुचि हैं फिर भी सन् 1974 तक इस क्षेत्र म केवल 61 शाध काय हुए हैं जो इस क्षेत्र की व्यापकता तथा महत्ता को ध्यान म रखत हुए अपर्याप्त हैं । अत भविष्य म इस क्षेत्र म अधिक नियोजित, व्यापक एव गहराई से अनुसधान काम करने की नितान्त आवश्यकता है ।

अनुसधान विधि की दृष्टि स दखा जाए ता लगभग सभी गवपणाओ म नार्मेटिव सर्वे विधि का उपयोग किया गया है, जबकि क्षेत्र की आवश्यकताओ को ध्यान म रखते हुए प्रयोगात्मक विधि अपनाने की आवश्यकता स्पष्ट परिलक्षित हाती है । उदाहरण क लिए, इस क्षेत्र मे हुए अनुसधानो स आत्म प्रत्यय की पुनरचना करके शक्षिक सप्राप्ति का सम्बन्ध तो ज्ञात हाता है परन्तु इस बात का कोइ प्रयोगात्मक साक्ष्य (Experimental Evidence) उपलब्ध नही है कि किस प्रकार आत्म प्रत्यय की पुनरचना करके शक्षिक सप्राप्ति के स्तर को उन्नत किया जा सकता है । अभिवृत्ति तथा शक्षिक सप्राप्ति का सहसम्बन्ध तो ज्ञात किया गया है परन्तु इसका कोई प्रयोगात्मक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि किस प्रकार विद्यार्थियो म अध्ययन के प्रति सकारात्मक अभिवृत्तियो का विकास करक सम्प्राप्ति को उन्नत किया जा सकता है । अत प्रयोगात्मक अनुसधान विधि अपनाने की आवश्यकता है ।

इस क्षेत्र में हुए अनुसंधानों में अध्ययन तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति वाला उपक्षेत्र बहुत ही दुर्बल रह गया है। यह ठीक है कि बुद्धि और शैक्षिक सम्प्राप्ति का घनिष्ठ सहसम्बन्ध सिद्ध किया गया है तथा यह भी ठीक है कि सामाजिक आर्थिक स्तर का शैक्षिक सम्प्राप्ति पर प्रभाव पड़ता है, परन्तु इनसे अध्यापक को अपने कर्त्तव्य कार्य में विशेष सहायता नहीं मिलती। अध्यापक को सहायता तब मिल सकती है जब अनुसंधान इन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करें कि कौन सी अध्यापन विधियाँ छात्र की सम्प्राप्ति को अपेक्षाकृत अधिक उन्नत कर सकती है? वे कौन सी तकनीकें हैं जिनसे कक्षा के सामाजिक संवेगात्मक पर्यावरण में वांछित परिवर्तन लाया जा सकता है? वे कौन सी प्रणालियाँ हैं जिनसे बालक-बालिकाओं की रुचियों में अनुकूल परिवर्तन लाया जा सकता है? विद्यार्थियों के समायोजन को कैसे उन्नत किया जा सकता है? पिछड़े हुए विद्यार्थियों की कमी कैसे की जा सकती है? आदि आदि।

अनुसंधान हेतु चुने गए न्यादर्शों का अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि अधिकांश शोधकर्त्ताओं ने नगरीय परिवेश में से ही अपने न्यादर्श का चुनाव किया है। शोध की दृष्टि से प्रतिनिधि न्यादर्श चुनने का प्रयास बहुत ही कम अनुसंधानों में परिलक्षित होता है। सम्भव है अनुसंधानकर्त्ताओं ने न्यादर्श का चुनाव करते समय अपनी सुविधा का अधिक ध्यान रखा हो, परन्तु नगरीय परिवेश के आधार पर निष्कर्ष निकाल कर पूरे राज्य के लिए उनका सामान्यीकरण करना भी तो उचित नहीं होगा। अतः आवश्यकता है अनुसंधान के लिए समुचित न्यादर्श चुनने की। इसके साथ ही जन जातियों, पिछड़ी जातियों तथा परिगणित जातियों को केन्द्र बिन्दु (Focus) बनाकर भी अनुसंधान आयोजित किए जाने चाहिए।

यदि स्तर की दृष्टि से देखा जाय तो अधिकांश शोध-कार्य माध्यमिक स्तर से सम्बन्धित हैं। पूर्व प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, नॉन फॉर्मल शिक्षा तथा उच्च प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र लगभग अछूते ही रह गए हैं। अतः इन क्षेत्रों की ओर भी शोधकर्त्ताओं का ध्यान आकर्षित होना चाहिए।

विभिन्न विषयों की दृष्टि से देखें तो अनुसंधान-कार्य सिमट कर कुछ विषयों तक सीमित हो गया है। वाणिज्य, उद्योग, उद्यान कला तथा चित्रकला आदि विषय तो लगभग अछूते ही रह गए हैं। अंग्रेजी तथा गणित विषयों में, जिनमें कि माध्यमिक शिक्षा स्तर पर सम्प्राप्ति का स्तर बहुत नीचा है, अधिक व्यवस्थित अनुसंधान की अपेक्षा बनी हुई है। इससे यह शंका भी होती है कि शायद अनुसंधान कार्य प्रायः डिग्री प्राप्त करने का साधन मात्र बन गया है, इसका लक्ष्य को ज्वलन्त समस्याओं से सम्बन्ध नहीं दिखाई देता।

सहशैक्षिक प्रवृत्तियाँ तथा शैक्षिक सम्प्राप्ति का क्षेत्र भी अधिक नियोजित अनुसंधान की अपेक्षा रखता है। एक ओर तो यह कहा जाता है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन निवास करता है अतः शारीरिक प्रवृत्तियों को भी व्यक्ति के चौमुखी विकास में पर्याप्त स्थान दिया जाना चाहिए परन्तु दूसरी ओर अनुसंधान यह कहते हैं कि शारी

रिक प्रवृत्तिया म प्रतिभागीत्व का शक्षिक सम्प्राप्ति से ऋणात्मक या नगण्य सहसम्बन्ध है। [ग्रोवेराय (1971) तथा जागीड (1959)।] ऐसी स्थिति म यह भलीभाति ज्ञात किया जाना चाहिए कि वास्तविक स्थिति क्या है।

रुचियाँ, आकाक्षा स्तर, सृजनशीलता, समायोजन समाजमिति स्तर आदि सभी क्षेत्रा म गिने चुन शोध काय हुए हैं। अत इन क्षेत्रा म अधिक अनुसधान करने की आवश्यकता स्पष्ट दिखाई दती है।

फिलहाल तो यही कहा जा सकता है कि राजस्थान मे अनुसधान का यह क्षेत्र आरम्भिक अवस्था म ही है। परन्तु राज्य शिक्षा सस्थान की सक्रियता के साथ ही राज्य शिक्षक प्रशिक्षण मण्डल की स्थापना तथा शिक्षा निदेशालय म शोध प्रकोष्ठ स्थापित होना तथा शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालया का योजनाबद्ध व समन्वित सामूहिक प्रयत्न शोधकर्त्ताओ को पर्याप्त प्रोत्साहन देकर स्थिति म काफी सुधार ला सकता है।

सन्दर्भांकित अनुसधान

अग्रवाल, विष्णुप्रकाश	A Study of the Relationship between Teachers Verbal Behaviour and Pupils Achievement M Ed Raj Uni 1973
उपमन्यु विश्वविजय	Sociometric Status and Scholastic achievement M Ed Udaipur Uni 1968
उपासिंह	A Comparative Study of the Academic Motivation and Personality Characteristics of Male and Female Students in Relation with Academic Achievement of Class X M Ed Raj Uni 1972
ओबेराय, अमरजातसिंह	A Critical Study of the Academic Achievement of Students Participating in Co-curricular Activities M Ed Raj Uni 1971
कलर, रामसिंह	A Study of the Moral Judgment of the Students at Different Age Levels and the Relationship between Moral Judgment and Other Related Factors M Ed Raj Uni. 1963
गहलोत, जुगलसिंह	Level of Aspiration of the Scheduled and Non Scheduled Caste Boys M Ed Udaipur Uni 1969
गुप्ता प्रभा	An Investigation into Adolescents Responses and Achievement (On the basis of Text Book in Domestic Science) and their Relationship with other Relevant Factors M Ed Raj Uni 1970

गुप्ता राधेश्याम	An Investigation into Relationship between Scholastic Achievement and Personality Variables M Ed Raj Uni 1969
गुप्ता शान्ति	चिन्ताग्रस्त किशोरजनों का शक्षिक उपलब्धियों का एक अध्ययन एम एड, राज वि वि 1971
गुप्ता मनपाल	Scholastic Accomplishments as Affected by *Intelligence and Participation in Co-curri* cular Activities M Ed Raj Uni 1965
गुरुदयालसिंह	An Investigation into the Scientific Skills Acquired by the Students of Science M Ed Raj Uni 1972
चोरडिया सोभाग्यमल	An Investigation into Factors Responsible for Low Achievement by the Students having Above Average Study Habits M Ed Raj Uni 1969
जागेट रामकुमार	शारीरिक क्षमता और बुद्धि निष्पत्ति का सम्बन्ध, एम एड राज वि वि 1969
जैन निर्मलचन्द	सामाजिक अस्वीकृति के कारण और उसके कुछ सहसम्बन्धक एम एड राज वि वि 1969
जैन सुमनकुमारी	A Study of the Non-Scholastic Factors Responsible for High and Low Scholastic Achievement of Girls Studying in Higher Secondary Schools at Banasthali and Jaipur M Ed Udaipur Uni 1967
झाला विद्याधर	Anxiety and its Effects on Scholastic Achieve ments M Ed Raj Uni 1966
तिवारी प्रेमनारायण	An Inve tigation into the Factors Responsi ble for Low Achievement (Scholastic) of Above Average Intelligent Students *M Ed Raj Uni 1965*
दरियानानी मनोहर	अजमेर की दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों की भूगोल विषय में सम्प्राप्ति का एक अध्ययन, एम एड राज वि वि, 1970
देव पी एम	An Investigation into the Relationship bet ween Study Habits and School Achieve ments of High School Boys of Sardarshahr M Ed Raj Uni 19 9
दवन, ओंकारसिंह	Self-Concept Attitude and Achievement of Secondary School Pupils in English, M Ed Udaipur Uni 1966

नीलमलता	Effects of Social Acceptance and Socio-Economic Status on the Academic Achievement of School Children M Ed Raj Uni 1972
पँवार जयचन्दलाल	ग्राठवीं कक्षा की उच्च व निम्न उपलब्धि वाली छात्राओं का एक तुलनात्मक ग्रध्ययन, एम एड , राज वि वि , 1973
पारीक कलावती	A Study of the Effect of Intelligence Study Habit and Socio-Economic Status on X Class Students Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 1970
पारीक, शीलकुमारी	किशोरावस्था के समय विभिन्न विषयो की शैक्षिक निष्पति ग्रौर ग्रनुकूलन के प्रभाव का ग्रध्ययन, एम एड , राज वि वि , 1968
प्यारेसिंह	मान्यता प्राप्त निजी एव राजकीय विद्यालयो के ग्यारहवीं कक्षा के छात्रो की शक्षिक उपलब्धि एव उसे प्रभावित करने वाले मुख्य तत्वो का तुलनात्मक ग्रध्ययन, एम एड राज वि वि , 1972
पुरोहित, ग्रानन्दराज एस	An Investigation into the Relationship between Study Habits of Higher Secondary School Students and their Academic Achievement M Ed Raj Uni 1971
पूनिया देवकरण	An Investigation into the Adolescents Language Reading and its Relationship with other Variables M Ed Raj Uni 1970
फाटक ग्ररविन्द वी	Factors Differentiating High and Low Achievers in Science Ph D (Edu) Udaipur Uni 1972
वलदेवसिंह	Correlation between Intelligence and Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 1957
वलबीरकौर	कक्षा के सामाजिक एव सवेगात्मक वातावरण तथा छात्र निष्पत्ति के मध्य सहसम्बन्ध का ग्रध्ययन, एम एड राज वि वि, 1972
भटनागर भगवतप्रसाद	Correlation between Socio Economic Status anc Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 1958
मलिक जयपालसिंह	A Study of the Relationship of Intelligence and Personality Factors with Achievement in Chemistry at Tenth Class Level M Ed Raj Uni 1973
माथुर, गोविन्दनारायण	Predictive Validity of Some Psychological Factors for Success in Science Courses Ph D (Edu) Udaipur Uni 1971

माहेश्वरी, शान्त — A Study of Students Attitude towards Home work and its Relationship with Educational Achievement
M Ed Raj Uni 1961

माहेश्वरी शकुन्तला — कक्षा नौ के छात्र एवं छात्राओं की बौद्धिक क्षमता, अन्तर्मुखी बहिर्मुखी व्यक्तित्व तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति के साथ सहसम्बन्धों का अध्ययन
एम एड राज वि वि, 1969

मिनोचा दमनश — नमरा स्कूल के छात्र तथा छात्राओं की खेल क्रियाओं का अध्ययन व उनका बुद्धि से सम्बन्ध,
एम एड राज वि वि 1969

मिश्रा, रवीन्द्रनाथ — A Study of Pre Adolescents Creative Expression in Art and Hindi at Different Age levels and their Relationship with other Relevant Factors
M Ed Raj Uni. 1969

युगलकिशोर — शरीर भार, ऊँचाई वक्षमाप तथा स्वास्थ्य स्तर का सर्वेक्षण,
एम एड राज वि वि 1969

रगन, एम के — Intelligence Personality Traits and Previous School Marks as the Predictors of School Performance
M Ed Raj Uni 1964

रस्तोगी कृष्णगोपाल — A Study of the Relation between Intelligence Interest and Achievement of High School Students
M Ed Raj Uni 1964

रामदान — An Investigation into the Factors Responsible for the Failure of Pre University Students and the Study of Relationship between University Marks and the Factors that Contribute to Failure
M Ed Raj Uni. 1962

रावत वीरसिंह — An Investigation into the Relationship between Attitude towards and Achievement in English of High School Students of Sardarshahr
M Ed Raj Uni 1960

रैना, मनोराजकृष्ण — A Comparative Study of Some Personality Characteristics and other Related Variables of High and Low Achievers with a view to Determine Some Correlates of Academic Achievement
M Ed Raj Uni 1964

रैना मनोराजकृष्ण — A Study of Some Correlates of Creativity in Indian Students
Ph D (Ed) Raj. Uni 1968

रोहतगी, वृजकिशोर	A Study of the Self Concept of Students and that of Teachers as a Factor Affecting Achievement in Science M Ed Jodhpur Uni 1970
व्यास आभा	Children s Spontaneous Vocabulary as Related to their Intelligence and Memory Span M Ed Raj Uni 1971
शर्मा, घासीलाल	A Study of Some Non Intellectual Correlates of Academic Achievement M Ed Raj Uni 1967
शर्मा, नेमचन्द	तीव्रबुद्धि बालिकाओं द्वारा निम्न स्तर की शैक्षिक उपलब्धि के कारणों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
शर्मा दिनेशप्रकाश	Some Correlates of Science Ability M Ed Raj Uni 1966
शर्मा, बनवारीलाल	An Investigation into the Causes of Failure at the Secondary Stage in the Board s Examination M Ed Raj Uni 1968
शर्मा बैजनाथ	Personal Values and Achievement of Higher Secondary Students M Ed Udaipur Uni 1965
शर्मा, मदनलाल	A Comparative Study of Academic Achievement of Boys and Girls from Equal Socio Economic Background M Ed Raj Uni 1972
शर्मा, महावीरप्रसाद	अजमेर की ग्यारहवीं कक्षा के विद्यार्थियों की शैक्षिक विषयगत सप्राप्ति तथा मानसिक चिंता के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन, एम एड राज वि वि, 1968
शर्मा, एम सी	An Investigation into Some Related Factors of Educational Backwardness in Tool Subjects of 83 VII Class Students of Sardarshahr, M Ed Raj Uni 1961
शर्मा, यादव	An Investigation into the Relationship between the Leisure time Activities of High School Students in Sardarshahr with their School Achievement M Ed Raj Uni 1959
शास्त्री, शकुन्तला	Intelligence Memory Expression Power Study Habit and Internal Assessment as the Predictors of School Performance in General Science Mathematics Hindi and Social Studies M Ed Raj Uni 1967

शिवचरण	An Investigation into the Why of the Students at Different Age-levels and the Relationship between the Why and Other Related Factors M Ed Raj Uni 1965
सक्सेना, ओमप्रकाश	A Study of Achievement in Chemistry in Five Urban Schools M Ed Raj Uni 1972
श्रीवास्तव, जगदीशनारायण	अजमेर नगरीय व ग्रामीण क्षेत्र के दसवीं कक्षाओं के विद्यार्थियों की इतिहास विषय में सम्प्राप्ति का एक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1971
सिंधु, चरणपालसिंह	An Analysis of the Attitude of IX Class Students of Sardarshahr towards Certain School Subjects and the Measure of Correlation between Attitude and Achievement M Ed Raj Uni 1960
साधा, रामकृष्ण	Relationship between Cognitive style and Achievement in General Science An Exploratory Study *M Ed Raj Uni 1973*
सुथार, घनाराम	Some Intellectual Correlates of Academic Achievement M Ed Raj Uni 1967
सूरजभानसिंह	A Study of the Relationship of Mental Abilities with Achievement in Physics at Tenth Class Level M Ed Raj Uni 1972
हुक्कू, बी एन	The Case Study of Four Higher Secondary Schools to Recognize Patterns of Schooling in Relation to Academic Achievement M Ed Raj Uni 1970



मापन एवं मूल्याकन

□ प्रो० बजरगलाल भोजक

शिक्षा की प्रखरता तभी बनी रह सकती है जबकि समय व समाज की मागो के सन्दभ मे सम्पूण प्रक्रिया का यथावश्यक मूल्याकन किया जाता रहे व प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर उसम परिवतन किए जात रह । अत अनुसधाताओ का इस पक्ष पर ध्यान जाना स्वाभाविक ही है ।

राजस्थान म हुए मापन एव मूल्याकन सबधी शोध-कार्यों को 9 प्रमुख वर्गो म बाँटा जा सकता है । यथा – अभिवृत्ति मापन बुद्धि मापन, अभिक्षमता, अभिरुचि एव योग्यता मापन, सम्प्राप्ति परख, परीक्षा व असफलताएँ, व्यक्तित्व का मापन विद्यालय सगठन का मूल्याकन तथा विविध ।

अभिवृत्ति मापन

इस क्षेत्र म हुए अनुसधाना मे अभिवृत्ति मापनी का निर्माण व अभिवृत्ति सर्वेक्षण सबधी काय किया गया । कपूर (1967) न विद्यालय काय के प्रति तथा रामानन्द शर्मा (1969) ने सस्कृत विषय के प्रति छात्रा की अभिवत्ति मापनी का निमाण किया । सूद (1970) न इतिहास विषय के प्रति 11 स 18 वष के छात्रा की अभिवत्तिया जानन हेतु एक मापनी का निर्माण किया । प्रयोग स ज्ञात हुआ कि इस विषय के प्रति सभी छात्रा की प्रवत्ति अनुकूल ही थी । छात्राओ म से नवी कक्षा की छात्राओ का झुकाव आठवी कक्षा की छात्राओ की अपेक्षा अधिक पाया गया । ग्रामीण व शहरी क्षेत्रो की दृष्टि से विद्यार्थिया म समानता ही पाइ गई । खत्री ने 1971 म प्रशिक्षण महाविद्यालयो म आयोजित शक्षिक व सह शक्षिक प्रवत्तिया के प्रति छात्राध्यापको की अभिवत्तिया का मापन करने पर पाया कि शक्षिक प्रवत्तिया के प्रति 48% छात्र रजामद, 11% उदासीन व 41% असहमत थ । वे उद्योग व कला शिक्षण के पक्ष म नही थे । सुधा भारतीय (1974) ने विज्ञान तथा गृह विज्ञान पढन वाली छात्राओ की घरेलू जीवन के प्रति अभिवत्ति जाँचकर मालूम किया कि घरेलू जावन के प्रति विज्ञान समूह की छात्राओ की अभिवत्तिया म अनकरूपता था, जबकि गह विज्ञान की छात्राओ म समान व स्वस्थ अभिवत्तियाँ थी ।

सेमुएल (1967) न बोड द्वारा लागू की गई वस्तुनिष्ठ प्रश्न प्रणाली क प्रति अध्यापको की अभिवत्तिया का मापन करक पाया कि 52% अध्यापक व 38%

शिवचरण	An Investigation into the 'Why of the Students at Different Age-levels and the Relationship between the 'Why and Other Related Factors M Ed Raj Uni 1965
सक्सेना, ओमप्रकाश	A Study of Achievement in Chemistry in Five Urban Schools M Ed Raj Uni 1972
श्रीवास्तव, जगदीशनारायण	अजमेर नगरीय व ग्रामीण क्षेत्र के दसवीं कक्षाओं के विद्यार्थियों की इतिहास विषय में संप्राप्ति का एक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
सधु चरणपालसिंह	An Analysis of the Attitude of IX Class Students of *Sardarshahr towards Certain* School Subjects and the Measure of Correlation between Attitude and Achievement M Ed Raj Uni 1960
सांघी, रामगोपाल	Relationship between Cognitive style and Achievement in General Science An Exploratory Study M Ed Raj Uni 1973
सुथार, धनाराम	Some Intellectual Correlates of Academic Achievement M Ed Raj Uni 1967
सूरजभानसिंह	A Study of the Relationship of Mental Abilities with Achievement in Physics at Tenth Class Level M Ed Raj Uni 1972
सुक्कू, बी एन	The Case Study of Four Higher Secondary Schools to Recognize Patterns of Schooling in Relation to Academic Achievement M Ed Raj Uni 1970



मापन एवं मूल्यांकन

□ प्रो० बजरंगलाल भोजक

शिक्षा की प्रखरता तभी बनी रह सकती है जबकि समय व समाज की मांगों के सन्दर्भ में सम्पूर्ण प्रक्रिया का यथावश्यक मूल्यांकन किया जाता रहे व प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर उसमें परिवर्तन किए जाते रहें। अतः अनुसंधाताओं का इस पक्ष पर ध्यान जाना स्वाभाविक ही है।

राजस्थान में हुए मापन एवं मूल्यांकन संबंधी शोध-कार्यों को 9 प्रमुख वर्गों में बांटा जा सकता है। यथा—अभिवृत्ति मापन, बुद्धि मापन, अभिक्षमता, अभिरुचि एवं योग्यता मापन, सम्प्राप्ति परख, परीक्षा व असफलताएँ, व्यक्तित्व का मापन, विद्यालय संगठन का मूल्यांकन तथा विविध।

अभिवृत्ति मापन

इस क्षेत्र में हुए अनुसंधानों में अभिवृत्ति मापनी का निर्माण व अभिवृत्ति सर्वेक्षण संबंधी कार्य किया गया। कपूर (1967) ने विद्यालय कार्य के प्रति तथा रामानन्द शर्मा (1969) ने संस्कृत विषय के प्रति छात्रों की अभिवृत्ति मापनी का निर्माण किया। सूद (1970) ने इतिहास विषय के प्रति 11 से 18 वर्ष के छात्रों की अभिवृत्तियां जानने हेतु एक मापनी का निर्माण किया। प्रयोग में ज्ञात हुआ कि इस विषय के प्रति सभी छात्रों की प्रवृत्ति अनुकूल ही थी। छात्राओं में से नवीं कक्षा की छात्राओं का झुकाव आठवीं कक्षा की छात्राओं की अपेक्षा अधिक पाया गया। ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों की दृष्टि से विद्यार्थियों में समानता ही पाई गई। खत्री ने 1971 में प्रशिक्षण महाविद्यालयों में आयोजित शैक्षिक व सह शैक्षिक प्रवृत्तियों के प्रति छात्राध्यापकों की अभिवृत्तियों का मापन करने पर पाया कि शैक्षिक प्रवृत्तियों के प्रति 48% छात्र रजामन्द 11% उदासीन व 41% असहमत थे। वे उद्योग व कला शिक्षण के पक्ष में नहीं थे। सुधा भारतीय (1974) ने विज्ञान तथा गृह विज्ञान पढने वाली छात्राओं की घरेलू जीवन के प्रति अभिवृत्ति जाँचकर मालूम किया कि घरेलू जीवन के प्रति विज्ञान समूह की छात्राओं की अभिवृत्तियों में अनेकरूपता थी जबकि गृह विज्ञान की छात्राओं में समान व स्वस्थ अभिवृत्तियाँ थी।

सेमुएल (1967) ने बोर्ड द्वारा लागू की गई वस्तुनिष्ठ प्रश्न प्रणाली के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्तियों का मापन करके पाया कि 52% अध्यापक व 38%

का धनात्मक सम्बन्ध था। मानविकी समूह के छात्रों की अधिकतम रुचि साहित्यिक व कृषि क्षेत्रों में तथा न्यूनतम रुचि विज्ञान क्षेत्र में थी। अभिरुचियों की दृष्टि से वाणिज्य संकाय के विद्यार्थी विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों की अपेक्षा कला संकाय के विद्यार्थियों के ज्यादा निकट पाए गए। उनकी रुचि के क्षेत्र थे – ललित कला व घरेलू कार्य। न्यूनतम रुचि के क्षेत्र थे – विज्ञान व चिकित्सा। विज्ञान संकाय के छात्रों की सर्वोत्कृष्ट रुचि के क्षेत्र विज्ञान व चिकित्सा पाए गए। सबसे कम चाहे जाने वाले क्षेत्र थे – ललित कला तथा घर से बाहर की क्रियाएँ। गणित व विज्ञान के विद्यार्थियों ने सबसे अधिक रुचि विज्ञान क्षेत्र में प्रदर्शित की। उनकी सबसे कम रुचि कृषि व घरेलू कार्यक्षेत्रों में पाई गई।

सम्प्राप्ति परख

त्रिपाठी (1953), बलराज (1954), लेघा (1955) लखरू (1956), कचरू (1956), भार्गव (1956), सरदारसिंह (1957), रघुनाथप्रसाद (1957), कृपालसिंह (1961), मक्खनलाल (1961) वैश्य (1962), सिंघल (1964), उपाध्याय (1965), नारंगदेवी (1966) व रामप्रसाद शर्मा (1972) ने कक्षा 5 से कक्षा 10 तक के छात्रों के लिए अपनी अपनी रुचि के विषयों में सम्प्राप्ति परख-पत्र तैयार किए। प्रायः सभी की विश्वसनीयता व वैधता प्रमाणित की गई। प्राप्त निष्कर्ष थे कि भूगोल विषय में सम्प्राप्ति की दृष्टि से *आठवीं कक्षा के छात्र और छात्राओं में समानता पाई गई।* जबकि नरदेव शर्मा (1962) के अनुसार छात्राओं का अवबोधन छात्रों की अपेक्षा अधिक था। प्राइवेट विद्यालयों के विद्यार्थियों की सम्प्राप्ति राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों से अपेक्षाकृत उत्तम पाई गई। सामाजिक ज्ञान में छात्रों ने छात्राओं की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त किए। सामान्य विज्ञान (कक्षा VIII) में अधिकांश विद्यार्थी 'ध्वनि' व 'प्रकाश' प्रकरणों से अनभिज्ञ पाए गए। रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान व वनस्पति विज्ञान में उनका ज्ञान बहुत ही निम्न स्तर का पाया गया। लगभग ये ही तथ्य 1965 में राजस्थान राज्य शिक्षा संस्थान, उदयपुर ने कक्षा 5 के छात्रों की सामान्य विज्ञान व सामाजिक ज्ञान विषयों में सम्प्राप्ति का मूल्यांकन करके निकाले। 1966 में सुदर्शनकुमारी जैन ने अपने अनुसंधान में मालूम किया कि सम्प्राप्ति में बुद्धि व अध्ययन आदतें प्रभावक घटक थे।

परीक्षाएँ

बाकलीवाल (1968) ने माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा लागू आंतरिक मूल्यांकन-योजना के बारे में बताया कि आंतरिक मूल्यांकन कार्य सम्पूर्ण अध्यापन प्रक्रिया का अभिन्न अंग नहीं बन पाया था। एक सी आन्तरिक मूल्यांकन पद्धति सभी विद्यालयों के लिए अनुकूल नहीं रहती। शतान सिंह (1974) ने बताया कि आंतरिक मूल्यांकन के अन्तर्गत साहित्यिक, सांस्कृतिक व वैज्ञानिक क्रियाओं का वस्तुनिष्ठ तरीके से आयोजित नहीं किया गया था। तुलनात्मक दृष्टि से बालिका उच्च माध्यमिक

विद्यालयों में अध्ययन प्रारम्भ आयोजित किया गया। यद्यापि नियमों के आधार बाहर एवं आन्तरिक विद्यालयों में जगह है था। अन्य क्रियाएँ (उपगत का छात्र) नाना प्रकार के विद्यालयों में उपस्थित रहा। आन्तरिक मूल्यांकन कार्यक्रम के प्रभारी अध्यापक अधिकांश अप्रशिक्षित पाए गए। उन्हें कोई प्रावधान भी नहीं किया जा रहा था।

कंवर व गुप्ता (1963) ने ग्यारहवीं कक्षा के विद्यार्थियों के आन्तरिक मूल्यांकन व बाह्य परीक्षा के अंकों का समन्वय ज्ञात करके पाया कि आन्तरिक मूल्यांकन के अंकों का मध्यमान 32.04% व 63.73% था जबकि बाह्य परीक्षा के अंकों का मध्यमान 37.93% व 44.84%। यह अन्तर सामान्य विज्ञान में 23.31% व गणित में 50% तक पहुँच गया था। बाह्य परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने वाले छात्रों को भी आन्तरिक मूल्यांकन में बहुत अच्छे अंक मिले थे। हिम्मतसिंह (1972) ने बाह्य परीक्षाओं में अनिवार्य हिन्दी व नागरिक शास्त्र विषयों में 'अ' खण्ड 'ब' खण्ड में सम्प्राप्ति का तुलनात्मक अध्ययन करके पाया कि छात्रों को 'अ' खण्ड में 'ब' खण्ड की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त हुए। इन अंकों से पास होने या श्रेणी सुधारने में छात्रों को बड़ी मदद मिली। हिन्दी की अपेक्षा नागरिक शास्त्र में अ खण्ड एवं ब खण्ड के अंकों में अधिक अन्तर था। अ एवं ब खण्डों के अंकों का सहसम्बन्ध गुणांक हिन्दी में 57 व नागरिक शास्त्र में 78 था।

परीक्षा में दिए जाने वाले प्रश्नों व पाठ्यपुस्तकों में दिए हुए प्रश्नों की तुलना का परीक्षा क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण विषय है। इस सम्बन्ध में यादव (1974) ने राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की माध्यमिक कक्षाओं के लिए प्रस्तावित पुरानी व नई भौतिक विज्ञान की पुस्तकों के अभ्यास प्रश्नों तथा परीक्षा में दिए गए प्रश्नों का उद्देश्यनिष्ठ विश्लेषण किया और पाया कि पुरानी पाठ्यपुस्तकों में अभ्यास के प्रश्न अधिकांशतः पुनरास्मरण प्रकार के थे जबकि नई पुस्तकों के खण्ड अ में ज्ञान व अवबोधन के प्रश्न 92% और ब खण्ड में अवबोधन और उपयोजन के प्रश्न 87.3% पाए गए। नई पुस्तकों में ज्ञान की अपेक्षा अवबोधन व कुशलताओं पर अधिक बल दिया गया था। प्रश्न पत्रों की तुलना से पाया गया कि यद्यपि दोनों ही प्रकार के प्रश्न पत्रों में पुनरास्मरण प्रकार के प्रश्नों की अधिकता थी फिर भी नये प्रश्न पत्र में ज्ञान की अपेक्षा अवबोधन के प्रश्न अधिक रहे।

असफलताएं एवं अशुद्धियाँ

कई शोधकर्त्ताओं ने असफलता को एक बड़ी मानकर उसके लिए जिम्मेदार कारणों का मूल्यांकन किया। मेहता (1955) तथा गंगाराम (1961) ने माध्यमिक स्तर पर छात्रों के अनुत्तीर्ण रहने के कारणों का अध्ययन किया। दोनों के निष्कर्ष बताते हैं कि विद्यार्थियों का विभिन्न विषयों में अरुचि व उदासीनता निम्न बौद्धिक स्तर व अस्वस्थ अध्ययन आदतें, अभिभावकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति, मन लगाकर पढ़ाई नहीं करना, पाठ्येतर क्रियाओं में अधिक समय लगाना—ये अनुत्तीर्ण होने के प्रमुख

कारण थे। कक्षा में छात्रों की संख्या का बहुत अधिक होना, कमजोर अध्यापन पाठ्यक्रम में विषमता, विकलांगता विद्यालय भवन का उचित जगह पर न बना होना, स्थानीय परीक्षाओं में कक्षोन्नति में उदारता, अभिभावकों के सहयोग में कमी आदि अन्य कारण पाए गए। गुप्ता (1972) ने गणित विषय में असफलता के कारणों का मूल्यांकन करके बताया कि बुद्धि का निम्न स्तर, व्यक्तित्व कुसमायोजन दुश्चिन्ता व प्रेरणा की कमी असफलता के मुख्य कारण थे। प्रधानाध्यापकों व अध्यापकों के मतानुसार असफलता के कारण ये घर की हीनतर आर्थिक स्थिति घर के वातावरण का अनुकूल न होना माँ-बाप द्वारा सहयोग की कमी, व्यक्तिगत ध्यान कम दिया जाना गृह-कार्य की असंतुलित मात्रा, सहायक सामग्री की कमी, मनोरंजन की सुविधाओं का अभाव, नीचे की कक्षाओं में निम्न स्तर का अध्यापन, व्यवसाय मिलने की अनिश्चितता लक्ष्य निर्धारण की कमी, कमजोर स्वास्थ्य, कक्षा में कम उपस्थित रहना पाठ्यचर्या में जल्दी जल्दी परिवर्तन और पढ़ने में कम रुचि होना।

परीक्षा और सम्प्राप्ति अध्ययन के साथ-साथ छात्रों की विभिन्न विषयों में अशुद्धियों की भी खोज की गई। राठौड़ (1966) ने कक्षा 6 7 व 8 के छात्रों की अशुद्धियों की जाँच की व पाया कि छात्रों ने कुल 40206 शब्दों में से 5690 अर्थात 14% शब्दों की वर्तनी गलत लिखी। अशुद्धियाँ करने में छात्र व छात्राएँ एक जैसे ही पाए गए। हर आयु समूह के विद्यार्थियों ने समान रूप से ही अशुद्धियाँ की। ये अशुद्धियाँ मात्रा, अनुस्वार और गलत अक्षर के प्रयोग की थी। वर्तनी की अशुद्धियों का मुख्य कारण अशुद्ध उच्चारण बताया गया। रामनिवास शर्मा (1969) ने नवीं कक्षा के छात्रों के लिए एक निदानात्मक परख पत्र तैयार किया तथा पाया कि छात्रों ने मात्राओं व अनुस्वार की सबसे अधिक गलतियाँ की। अशुद्धियों के मुख्य कारण व्याकरण का कम ज्ञान, अशुद्ध उच्चारण खराब लिखावट और शीघ्रता से लिखने की आदतें थीं। उपदेशकुमारी (1973) ने प्रथम द्वितीय व तृतीय कक्षा के विद्यार्थियों की हिंदी में अशुद्धियों की जाँच हेतु एक परख पत्र तैयार किया। इस परख-पत्र का विश्वसनीयता गुणांक 96 व वैधता गुणांक 51 से 57 तक था। भाटू (1965) ने भी इसी तरह का एक निदानात्मक परख पत्र तैयार किया। जयप्रकाश शर्मा (1954) ने नवीं व दसवीं कक्षा के छात्रों द्वारा अंग्रेजी में की जाने वाली अशुद्धियों की जाँच की। आपने पाया कि सबसे अधिक अशुद्धियाँ क्रिया के उपयोग हिन्दी वाक्यों का अंग्रेजी में अक्षरशः अनुवाद वर्तनी, शब्दों का अशुद्ध प्रयोग और मुहावरों के प्रयोग से सम्बन्धित रहीं।

सुश्री माथुर (1972) ने कक्षा 6 के विद्यार्थियों के लिए एक निदानात्मक परख पत्र बनाया व छात्रों द्वारा अंग्रेजी में की जाने वाली अशुद्धियों का मूल्यांकन किया। आपने पाया कि उन्हें /i/ /ee/ /ie/ /e/ और /ei/ से युक्त शब्दों की वर्तनी लिखने में कठिनाई महसूस हुई। एकाकी रूप में सिखाई गई संज्ञाएँ सही रूप में आरम्भ सान नहा हो पाई। विद्यार्थियों को सामान्य वर्तमान काल के वाक्य बनाने में बड़ी कठिनाई महसूस हुई। बागचा (1973) ने आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों की अंग्रेजी की अशुद्धियों का वर्तनी, शब्द भण्डार बड़े अक्षरों का उपयोग और विराम चिह्न के सन्दर्भ

में मूल्यांकन करने पाया कि सबसे कम सम्प्राप्ति वाले छात्रों ने चारों प्रकार की अशुद्धियाँ औसत या उच्च सम्प्राप्ति प्राप्त छात्रों की तुलना में अधिकतम संख्या में कीं। आपने बुद्धिलब्धि व अशुद्धियों में भी सार्थक सम्बन्ध पाया। कम बुद्धिवाले विद्यार्थियों ने अधिकतम अशुद्धियाँ कीं।

यह तो हुई व्यक्तिगत अध्ययनों में अशुद्धियाँ ज्ञात करने की बात। संस्थाओं ने भी विभिन्न विषयों में छात्रों की गलतियाँ ज्ञात करने का प्रयास किया। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर ने सन् 1974 में उद्देश्य आधारित परीक्षा प्रणाली के संदर्भ में सन् 1972 की उच्च माध्यमिक व माध्यमिक परीक्षा के अंग्रेजी अनिवार्य विषय के प्रश्न-पत्रों के स्तर व विद्यार्थियों द्वारा उनमें की गई गलतियों का मूल्यांकन किया। उच्च माध्यमिक परीक्षा अंग्रेजी (अनिवार्य) विषय सम्बन्धी ज्ञात कार्य से निष्कर्ष यह निकला कि छात्रों ने शब्द प्रयोग वाक्य रचना और अवबोधन से सम्बन्धित भाषा प्रश्न तो ठीक किए पर जब निबन्ध/पत्र-लेखन का अवसर आया तो वे उन समग्र रूप से समझने में सही वाक्य रचना व शब्द प्रयोग करने में असफल रहे। इन्होंने वचनों विराम चिह्न काल प्रयोग सम्बन्धवाचक सर्वनाम, विशेषण क्रियाविशेषण सही क्रम व मुहावरे लेखन सम्बन्धी काफी अशुद्धियाँ कीं। माध्यमिक स्तर पर भी अंग्रेजी अनिवार्य (1972) के उत्तरों में भी छात्रों का भाषा ज्ञान अपेक्षा निम्न स्तर का पाया गया। निबन्ध/पत्र-लेखन वाले भाग में उनका वक्तृत्व निराशाजनक था। छात्रों ने अधिकांशतः त्रुटियाँ किया वाक्य संरचना सम्बन्धी गलतियाँ कीं। प्रश्न-पत्रों के सम्बन्ध में बताया गया कि एक ही प्रश्न-पत्र में उद्देश्यों की अच्छी तरह जाँच नहीं की जा सकती। प्रश्न-पत्र में शब्दों के प्रयोग तथा वाक्य निर्माण पर पर्याप्त संख्या में प्रश्न नहीं दिए गए। दिए गए प्रश्न पूरे पाठ्यचर्या का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे। द्रुत पठन के गद्य वास्तव में इस लायक ही नहीं थे कि इनसे उन स्थितियों में छात्रों के भाषा प्रयोग का मूल्यांकन किया जा सके। बहुविकल्पी प्रकार के प्रश्नों में अधिकांश विकल्प तर्कसंगत नहीं थे। अधिकांश प्रश्न पुनरास्मरण की परीक्षा करने वाले थे भाषा-क्षमता की परीक्षा करने वाले नहीं।

इसी तरह का ज्ञात कार्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (1974) ने सामान्य विज्ञान में भी किया। तदनुसार प्रश्न-पत्र के 'अ' एवं 'ब' खण्डों में विभिन्न उद्देश्यों की जाँच के लिए दिए गए अंकों के प्रतिशतों में बहुत अन्तर था। पाठ्यचर्या की विभिन्न इकाइयों में अंकों का अधिभार ठीक था मगर अंकन प्रणाली में विविधताजन्य की कमी पाई गई, जिसके कारण अंक देने में व्यक्तिनिष्ठता का प्रभाव रहा। छात्रों ने 'अ' खण्ड में 'ब' खण्ड की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त किए। जहाँ स्मृति व अनुमान से काम लेना था अंकों की प्राप्ति अधिक थी। अधिकांश वस्तुनिष्ठ प्रश्न उचित प्रकार के नहीं थे। सामान्य विज्ञान में छात्रों ने महत्वपूर्ण प्रत्ययों, तथ्यों व सिद्धान्तों की समस्या में या तो स्पष्टता की या समझ ही नहीं। पारिभाषिक शब्दों को लिखने में मात्राओं की बहुत अधिक अशुद्धियाँ पाई गई। बार-बार एक ही तथ्य को दुहराने की आदत भी रही है।

व्यक्तित्व का मापन

कौशिक (1963) ने घर, विद्यालय, समाज, स्वास्थ्य व संवेग के क्षेत्रों में समायोजन का मूल्यांकन करने हेतु एक व्यक्तित्व समायोजन परख तैयार की। इसका विश्वसनीयता गुणांक 70 से 82 व वैधता गुणांक 47 से 62 था। कक्षा में सहपाठी एक दूसरे को कितना चाहते हैं इस स्वीकृति का अन्य चरों से क्या सम्बन्ध होता है, आदि को लेकर दाधीच (1968) व गुप्ता (1973) ने शोध कार्य किए। दाधीच ने पाया कि अधिक सामाजिक स्वीकृति के कारण थे शैक्षिक सामाजिक और खेल में उच्च योग्यताएँ। माँ बाप की सामाजिक आर्थिक स्थिति व बुद्धि का सामाजिक स्वीकृति के साथ कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं पाया गया, मगर शैक्षिक सम्प्राप्ति का इसके साथ सार्थक सम्बन्ध प्रमाणित हुआ। जिन छात्रों को सामाजिक स्वीकृति अत्यल्प प्राप्त हुई उनमें समस्या प्रवृत्तियां अपेक्षाकृत बहुत अधिक पाई गई, उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति बहुत निम्न श्रेणी की थी। शशिप्रभा गुप्ता के निष्कर्षों के अनुसार बुद्धि व सामाजिक आर्थिक स्तर ने सामाजिक-स्वीकृति को प्रभावित किया। साहित्यिक व कलात्मक रुचियों वाले खेल में दक्ष आत्मनिर्भर, आत्मनिष्ठ और संवेगात्मक रूप से स्थिर विद्यार्थियों को अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई। छात्राओं में सौन्दर्यात्मक व साहित्यिक अभिरुचियाँ विशेष स्वीकृति का कारण बनी। जिन विद्यार्थियों में उपरोक्त योग्यताओं व अभिरुचियों की कमी थी, उन्हें सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नहीं हुई।

उर्मिला शर्मा (1971) ने किशोर छात्र छात्राओं की कुण्ठा प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया और बताया कि 13 से 16 वर्ष के किशोर छात्रों और छात्राओं में 'अहं प्रतिरक्षा' सम्बन्धी कुण्ठा का तत्त्व सबसे अधिक सक्रिय था। 'आवश्यकता प्रदर्शन' व 'अवरोधन' का तत्त्व 13 वर्षीय छात्राओं में क्रमशः दूसरे व तीसरे स्थान पर था जबकि 14 15 व 16 वर्ष की छात्राओं में 'अवरोधन' तत्त्व दूसरे स्थान पर व 'आवश्यकता प्रदर्शन' तीसरे स्थान पर था। यही तथ्य 13 14 वर्ष के छात्रों में पाया गया। 15 16 वर्ष के छात्र और 13 वर्ष की छात्राओं में इस दृष्टि से समानता थी। 13 से 16 वर्ष की किशोरियों व 14 से 16 वर्ष के किशोरों में सबसे अधिक 'अतिक्रमण' इसके बाद 'अनाक्रमण' व सबसे कम 'अन्त अतिक्रमण' पाया गया। 13 वर्ष के किशोरों में यह क्रम 'बाह्य अतिक्रमण', 'अन्त अतिक्रमण' व 'अनाक्रमण' था। 1973 में छत्रमोहन शर्मा ने अपने पीएच डी अनुसंधान कार्य में 'विद्यालय परिस्थितियों में किशोर छात्र छात्राओं की कुण्ठा प्रतिक्रियाएँ' नामक परीक्षण तैयार किया। विभिन्न आयु स्तरों के सन्दर्भ में इसका विश्वसनीयता गुणांक 57 से 76 रहा। अध्यापकीय मतों के आधार पर तो इसकी वैधता कम रही, पर 30 अपराधी किशोरों पर यह उपकरण वैध प्रमाणित हुआ। इस परीक्षण के अनुसार किशोर छात्राओं में बाह्य अतिक्रमण तत्त्व 14 वर्ष की उम्र तक बढ़ता जाता है। दूसरी ओर 'अन्त अतिक्रमण' 12 से 15 वर्ष की उम्र में घटता जाता है। किशोर छात्रों में भी आयु वृद्धि के साथ साथ अहं प्रतिरक्षा तत्त्व घटता जाता है।

में मूल्यांकन करने पर पाया कि सबसे कम सम्प्राप्ति वाले छात्रों ने भाषा प्रकार की त्रुटियाँ [illegible] की अपेक्षा सम्प्राप्ति प्राप्त छात्रों की तुलना में अधिकतम संख्या में कीं। भाषा त्रुटियों के अन्तर्गत मात्राओं की त्रुटियाँ सबसे अधिक पायी गयीं। कम त्रुटियाँ विराम चिह्नों में न्यूनतम त्रुटियाँ थीं।

[illegible] दशमलव संख्याओं में त्रुटियाँ ज्ञात करने का प्रयास किया। सक्सेना ने [illegible] विद्यार्थियों में संख्या की त्रुटियाँ ज्ञात करने का प्रयास किया। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर ने सन् 1974 में उच्च माध्यमिक परीक्षा प्रश्नों के सन्दर्भ में सन् 1972 की उच्च माध्यमिक व माध्यमिक परीक्षाओं के अंग्रेजी अनिवार्य विषय के प्रश्नपत्रों के स्तर व विद्यार्थियों द्वारा उत्तरों का त्रुटियों का मूल्यांकन किया। उच्च माध्यमिक परीक्षा अंग्रेजी (अनिवार्य) विषय के उत्तरों के साथ बाद में निबन्ध के निबन्ध लिखने में [illegible] प्रयोग, वाक्य रचना और [illegible] से सम्बन्धित त्रुटियाँ अधिक पाई गयीं। निबन्ध/पत्र-लेखन की [illegible] प्रश्नों में [illegible] सम्बन्ध से बाहर रचना व [illegible] प्रयोग करने में असमर्थ रहे। [illegible] विराम चिह्न, शब्द प्रयोग, सम्बन्धवाचक सर्वनाम, क्रियाविशेषण आदि के प्रयोग में भी त्रुटियाँ थीं। माध्यमिक स्तर पर भी अंग्रेजी अनिवार्य (1972) के उत्तरों में भी [illegible] स्तर का पाया गया। निबन्ध/पत्र-लेखन वाले भाग में उनका स्तर निराशाजनक था। छात्रों ने अधिकांश अशुद्ध शब्द वाक्य रचना सम्बन्धी त्रुटियाँ कीं। प्रश्न-पत्रों के सम्बन्ध में बताया गया कि [illegible] की [illegible] नहीं की जा सकती। प्रश्नपत्र में [illegible] के प्रयोग [illegible] निर्माण [illegible] में प्रश्न [illegible] गए। [illegible] प्रश्न पूर्ण [illegible] का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे। [illegible] बालकों में [illegible] नहीं थे कि [illegible] स्थितियों में छात्रों के भाषा प्रयोग का मूल्यांकन किया जा सके। बहुविकल्पी प्रकार के प्रश्नों में अधिकांश विकल्प [illegible] नहीं थे। अधिकांश प्रश्न पुनर्स्मरण की परीक्षा करने वाले थे, भाषा-क्षमता की परीक्षा करने वाले नहीं।

[illegible] माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (1974) ने सामान्य विज्ञान में भी किया। तदनुसार प्रश्नपत्र के [illegible] में विभिन्न [illegible] की जाँच के लिए [illegible] के प्रतिशत में बहुत अन्तर था। [illegible] विभिन्न [illegible] में अंकों का अधिभार ठीक था, परन्तु अलग प्रश्नों में विभिन्न [illegible], जिससे [illegible] में वस्तुनिष्ठता का अभाव था। छात्रों ने [illegible] प्राप्त किए। उन्हीं स्मृति व अनुमान से काम [illegible] की प्राप्ति अधिक था। अधिकांश वस्तुनिष्ठ प्रश्न उचित प्रकार के नहीं थे। सामान्य विज्ञान में छात्रों ने [illegible] सिद्धान्तों को समझने में [illegible] होता था। पारिभाषिक शब्दों को लिखने में मात्राओं की बहुत अधिक अशुद्धियाँ पाई गईं। [illegible] का [illegible] भी [illegible]।

व्यक्तित्व का मापन

कौशिक (1963) ने घर, विद्यालय, समाज, स्वास्थ्य व सवेग के क्षेत्रो म समायोजन का मूल्याकन करने हेतु एक व्यक्तित्व समायोजन-परख तयार की। इसका विश्वसनीयता गुणाक 70 से 82 व वधता गुणाक 47 से 62 था। कक्षा म सहपाठी एक दूसरे को कितना चाहते हैं इस स्वीकृति का अन्य चरो से क्या सम्बन्ध होता है आदि को लेकर दाधीच (1968) व गुप्ता (1973) ने शोध काय किए। दाधीच ने पाया कि अधिक सामाजिक स्वीकृति के कारण थ शक्षिक सामाजिक और खेल म उच्च योग्यताएँ। माँ बाप की सामाजिक-आर्थिक स्थिति व बुद्धि का सामाजिक स्वीकृति के साथ कोई साथक सम्बन्ध नही पाया गया, मगर शक्षिक सप्राप्ति का इसके साथ साथक सम्बन्ध प्रमाणित हुआ। जिन छात्रो को सामाजिक स्वीकृति अत्यल्प प्राप्त हुई उनमे समस्या प्रवत्तिया अपेक्षाकृत बहुत अधिक पाई गइ, उनकी शक्षिक सप्राप्ति बहुत निम्न श्रेणी की थी। शशिप्रभा गुप्ता के निष्कर्षो के अनुसार बुद्धि व सामाजिक आर्थिक स्तर ने सामाजिक-स्वीकृति को प्रभावित किया। साहित्यिक व वनानिक रुचिया वाले, खेल म दक्ष आत्मनिभर आत्मनिष्ठ और सवगात्मक रूप से स्थिर विद्यार्थियो को अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई। छात्राआ म सौन्दर्यात्मक व साहित्यिक अभिरुचियाँ विशेष स्वीकृति का कारण बनी। जिन विद्यार्थियो म उपरोक्त योग्यताआ व अभिरुचिया की कमी थी, उन्हें सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नही हुइ।

उर्मिला शर्मा (1971) ने किशोर छात्र छात्राआ की कुण्ठा प्रतिक्रियाओ का अध्ययन किया और बताया कि 13 से 16 वष के किशोर छात्रो और छात्राआ म 'अह प्रतिरक्षा सम्बन्धी कुण्ठा का तत्त्व सबसे अधिक सक्रिय था। आवश्यकता प्रदशन' व 'अवरोधन का तत्त्व 13 वर्षीय छात्राओ मे क्रमश दूसरे व तीसरे स्थान पर था, जबकि 14, 15 व 16 वष की छात्राआ म अवरोधन' तत्त्व दूसरे स्थान पर व 'आवश्यकता प्रदशन' तीसरे स्थान पर था। यही तथ्य 13 14 वष के छात्रो मे पाया गया। 15 16 वष के छात्र और 13 वष की छात्राओ मे इस दृष्टि से समानता थी। 13 से 16 वष की किशोरियो व 14 से 16 वष के किशोरो मे सबसे अधिक 'प्रतिक्रमण इसके बाद 'अनाक्रमण व सबसे कम 'अन्त प्रतिक्रमण' पाया गया। 13 वष के किशोरो म यह क्रम बाह्य प्रतिक्रमण, अन्त प्रतिक्रमण व 'अनाक्रमण था। 1973 म छत्रमोहन शमा ने अपने पीएच डी अनुसधान काय मे 'विद्यालय परिस्थितियो म किशोर छात्र छात्राआ की कुण्ठा प्रतिक्रियाएँ नामक परीक्षण तयार किया। विभिन्न आयु स्तरो के सन्दभ म इसका विश्वसनीयता गुणाक 57 से 76 रहा। अध्यापकीय मतो के आधार पर तो इसकी वधता कम रही पर 30 अपराधी किशोरो पर यह उपकरण वध प्रमाणित हुआ। इस परीक्षण के अनुसार किशोर छात्राआ म बाह्य प्रतिक्रमण तत्त्व 14 वष की उम्र तक बढता जाता है। दूसरी ओर अन्त प्रतिक्रमण 12 से 15 वष की उम्र म घटता जाता है। किशोर छात्रो म भी आयु वद्धि के साथ साथ अह प्रतिरक्षा तत्त्व घटता जाता है।

में मूल्यांकन करने पर पाया कि सबसे कम सम्प्राप्ति वाले छात्रों ने चार प्रकार की अशुद्धियाँ औसत से अधिक सम्प्राप्ति प्राप्त छात्रों की तुलना में अधिकतम संख्या में कीं। आपने बुद्धिलब्धि व अशुद्धियों में भी सार्थक सम्बन्ध पाया। कम बुद्धिवाले विद्यार्थियों ने अधिकतम अशुद्धियाँ कीं।

यह तो रहे व्यक्तिगत अध्ययनों में अशुद्धियाँ ज्ञात करने के प्रयास। संस्थाओं ने भी विभिन्न विषयों में छात्रों की त्रुटियाँ ज्ञात करने का प्रयास किया। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने सन् 1974 में उद्देश्य आधारित परीक्षा प्रणाली के सन्दर्भ में सन् 1972 की उच्च माध्यमिक व माध्यमिक परीक्षा के अंग्रेजी अनिवार्य विषय के प्रश्न-पत्रों के स्तर व विद्यार्थियों द्वारा उनमें की गई गलतियों का मूल्यांकन किया। उच्च माध्यमिक परीक्षा अंग्रेजी (अनिवार्य) विषय सम्बन्धी जाँच कार्य से निष्कर्ष यह निकला कि छात्रों ने शब्द प्रयोग, वाक्य रचना और अवबोधन से सम्बन्धित भाषा प्रश्न तो हल किए पर जब निबन्ध/पत्र-लेखन का अवसर आया तो वे इन्हें समग्र रूप से समझने में तथा वाक्य रचना व शब्द प्रयोग करने में असमर्थ रहे। इन्होंने वर्तनी, विराम चिह्न, काल प्रयोग, सम्बन्धबोधक, सर्वनाम, क्रियापद, क्रियाविशेषण आदि का गलत व भाषागत रचना सम्बन्धी काफी अशुद्धियाँ कीं। माध्यमिक स्तर पर भी अंग्रेजी अनिवार्य (1972) के अन्तर्गत भी छात्रों का भाषा ज्ञान अपेक्षित स्तर से निम्न स्तर का पाया गया। निबन्ध/पत्र-लेखन वाले भाग में उनकी कमजोरी निराशाजनक थी। छात्रों ने अधिकांश अशुद्धियाँ क्रिया, काल, वाक्यरचना सम्बन्धी त्रुटियाँ कीं। प्रश्न-पत्रों के सम्बन्ध में बताया गया कि इनके द्वारा उद्देश्यों की अच्छी तरह जाँच नहीं की जा सकती। प्रश्नपत्र में शब्द के प्रयोग तथा वाक्य निर्माण पर पर्याप्त संख्या में प्रश्न नहीं दिए गए। दिए गए प्रश्न पूरी पाठ्यचर्या का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे। द्रुत पठन के पद्य वास्तव में इस बात के नहीं थे कि इनसे नई स्थितियों में छात्रों के भाषा प्रयोग का मूल्यांकन किया जा सके। वस्तुनिष्ठ प्रकार के प्रश्नों में अधिकांश विकल्प उपयुक्त नहीं थे। अधिकांश प्रश्न पुनरावृत्ति की परीक्षा करने वाले थे, भाषा क्षमता की परीक्षा करने वाले कम।

इसी तरह का कार्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (1974) ने सामान्य विज्ञान में भी किया। तदनुसार प्रश्न-पत्र के 'अ' एवं 'ब' खण्डों में विभिन्न उद्देश्यों की जाँच के लिए लिए गए प्रश्नों के प्रतिशतों में बहुत अन्तर था। पाठ्यवस्तु की विभिन्न इकाइयों में प्रश्नों का अनुपात ठीक था। मगर अंकन प्रणाली में नियमानुकूलता की कमी पाई जिसके कारण एक दल में वस्तुनिष्ठता का अभाव रहा। छात्रों ने 'अ' खण्ड में 'ब' खण्ड की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त किए। जहाँ स्मृति व अनुमान से काम लेना था, अंकों की प्राप्ति अधिक थी। अधिकांश वस्तुनिष्ठ प्रश्न उचित प्रकार के नहीं थे। सामान्य विज्ञान में छात्रों ने महत्त्वपूर्ण प्रत्ययों, तथ्यों व सिद्धान्तों की समझ में भी कमजोरी की या समझ नहीं रहा। पारिभाषिक शब्दों तथा विज्ञान में मात्राओं की सबसे अधिक अशुद्धियाँ पाई गईं। बार-बार एक ही तथ्य को दोहराने की आदत भी रहा करती है।

व्यक्तित्व का मापन

कौशिक (1963) न घर, विद्यालय समाज, स्वास्थ्य व संवेग मे क्षेत्रो म समायोजन का मूल्यांकन करने हेतु एक व्यक्तित्व समायोजन-परख तयार की। इसकी विश्वसनीयता गुणाक 70 से 82 व वधता गुणाक 47 से 62 था। कक्षा मे सहपाठी एक दूसरे को कितना चाहते हैं इस स्वीकृति का ग्रन्य चरो स क्या सम्बन्ध होना है, ग्रादि को लकर दाधीच (1968) व गुप्ता (1973) ने शोध काय किए। दाधीच ने पाया कि अधिक सामाजिक स्वीकृति के कारण थे शक्षिक, सामाजिक और मेल म उच्च योग्यताएँ। माँ-बाप की सामाजिक आर्थिक स्थिति व बुद्धि को सामाजिक स्वीकृति के साथ कोई सार्थक सम्बन्ध नही पाया गया, मगर शक्षिक सप्राप्ति का इसके साथ सार्थक सम्बन्ध प्रमाणित हुआ। जिन छात्रा को सामाजिक स्वीकृति अत्यल्प प्राप्त हुइ उनम समस्या प्रवृतियाँ अपेक्षाकृत बहुत अधिक पाई गइ, उनकी शक्षिक सप्राप्ति बहुत निम्न श्रेणी की थी। शशिप्रभा गुप्ता के निष्कर्षों के अनुसार बुद्धि व सामाजिक आर्थिक स्तर ने सामाजिक-स्वीकृति को प्रभावित किया। साहित्यिक व कलात्मक रुचिया वाले, मेल म दक्ष, आत्मनिर्भर आत्मनिष्ठ और संवेगात्मक रूप से स्थिर विद्यार्थियो को अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई। छात्राओं म सौन्दर्यात्मक व साहित्यिक अभिरुचियाँ विशेष स्वीकृति का कारण बनी। जिन विद्यार्थियो म उपरोक्त योग्यताओ व अभिरुचियो की कमी थी, उन्ह सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नही हुई।

उर्मिला शर्मा (1971) ने किशोर छात्र छात्राओ की कुण्ठा प्रतिक्रियाओ का अध्ययन किया और बताया कि 13 से 16 वर्ष के किशोर छात्रा और छात्राओ मे 'अह प्रतिरक्षा सम्बन्धी कुण्ठा का तत्त्व सबसे अधिक सक्रिय था। 'आवश्यकता प्रदशन' व अवरोधन का तत्व 13 वर्षीय छात्राओ म क्रमश दूसरे व तीसरे स्थान पर था, जबकि 14, 15 व 16 वर्ष की छात्राओ म 'अवरोधन' तत्त्व दूसरे स्थान पर व 'आवश्यकता प्रदशन' तीसरे स्थान पर था। यही तथ्य 13 14 वर्ष के छात्रा म पाया गया। 15 16 वर्ष के छात्र और 13 वर्ष की छात्राओ मे इस दृष्टि से समानता थी। 13 स 16 वर्ष की किशोरियो व 14 से 16 वर्ष के किशोरा म सबसे अधिक 'अतिक्रमण इसके बाद 'अनाक्रमण व सबसे कम अन्त अतिक्रमण' पाया गया। 13 वर्ष के किशोरो म यह क्रम 'बाह्य अतिक्रमण, अन्त अतिक्रमण' व अनाक्रमण था। 1973 म छत्रमोहन शर्मा ने अपने पीएच डी अनुसधान काय मे 'विद्यालय परिस्थितिया म किशोर छात्र छात्राओ की कुण्ठा प्रतिक्रियाएँ नामक परीक्षण तैयार किया। विभिन्न आयु स्तरा के सन्दभ म इसका विश्वसनीयता गुणाक 57 से 76 रहा। अध्यापकीय मता के आधार पर तो इसकी वधता कम रही, पर 30 अपराधी किशोरा पर यह उपकरण वध प्रमाणित हुआ। इस परीक्षण क अनुसार किशोर छात्राओ म बाह्य अतिक्रमण तत्त्व 14 वर्ष की उम्र तक बढता जाता है। दूसरी ओर अन्त अतिक्रमण 12 से 15 वर्ष की उम्र मे घटता जाता है। किशोर छात्रा म भी आयु वृद्धि के साथ साथ अह प्रतिरक्षा तत्त्व घटता जाता है।

व्यक्तित्व मापन के क्षेत्र में हुए शोधों में रचनात्मक चिन्तन शोधों का माध्यमिक स्तर विद्यार्थियों के मूल्य विश्लेषण में [illegible] गये हैं। नागर (1966) ने रचनात्मक चिन्तन के सम्बन्ध में पाया कि आयु वृद्धि के साथ-साथ रचनात्मक चिन्तन में वृद्धि होती है। बुद्धि व सामाजिक आर्थिक स्थिति का रचनात्मक चिन्तन के साथ सार्थक सहसम्बन्ध होता है। उच्च वर्ग के छात्रों का रचनात्मक चिन्तन के साथ [illegible] सम्प्राप्ति का सामान्य सम्बन्ध है परन्तु व्यक्तित्व समायोजन मुख्य विशेषता एवं कलाकृति का सार्थक सहसम्बन्ध सिद्ध हुआ। भटनागर (1971) ने नवी कक्षा के विज्ञान के विद्यार्थियों का [illegible] तथा के विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर में अन्तर पाया। यह भी पाया गया कि विद्यार्थियों का आकांक्षा-स्तर उनकी सम्प्राप्ति से सम्बन्धित था। आकांक्षा तथा सम्प्राप्ति [illegible] और आकांक्षा तथा बुद्धि के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया। श्रीवास्तव (1971) ने पाया कि शिक्षा की तुलना में [illegible] विकास में अधिक [illegible] है। चौधरी (1972) ने ग्राम प्रदेश [illegible] का अध्ययन किया व पाया कि [illegible] ग्राम प्रदेश वाले विद्यार्थियों में ग्राम विकास [illegible] अधिक था। यही स्थिति समायोजन के सम्बन्ध में देखी गई। अधिक समायोजित छात्रों में [illegible] तथा असमायोजित छात्रों में पारिवारिक परिस्थितियों की प्रधानता रही। उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों में आत्मविश्वास से [illegible] की प्रवृत्ति कम पाई गई।

जैन (1974) ने उच्च प्राथमिक स्तर पर छात्रों के जीवनगत मूल्यों की जांच की व पाया कि बुनियादी शालाओं के विद्यार्थी श्रम मूल्यों की दृष्टि से राजकीय विद्यालय के छात्रों से श्रेष्ठ रहे। [illegible] आत्मनियन्त्रण व स्वतन्त्रता में [illegible] अनुशासन के प्रति लगाव ज्यादा तथा राजकीय विद्यालयों के छात्रों ने ज्ञान प्राप्ति नैतिकता नेतृत्व आदि की तरफ अधिक लगाव प्रदर्शित किया। अहिंसा [illegible] व्यक्तिगत गुण और आध्यात्मिक मूल्यों के बारे में दोनों ही विद्यालयों के विद्यार्थियों में समानता पाई गई। [illegible] (1962) ने बेल द्वारा निर्मित व्यक्तित्व समायोजन तालिका का भारतीयकरण किया। इसकी विश्वसनीयता गुणांक 77 से 80 और वैधता गुणांक 94 रहा।

विद्यालय व्यवस्थाओं का मूल्यांकन

राज्य शिक्षा संस्थान उदयपुर ने विभिन्न प्रकार की विद्यालय व्यवस्थाओं का [illegible] सन् 1967 व 1972 में [illegible] कार्य किया। मुख्य विषय रहा – ग्राम पाठशाला प्रयोग जो राजसमंद [illegible] और [illegible] पंचायत समितियों में चलाया गया था। इन विद्यालयों की पाठ्यचर्या अन्य विद्यालयों के समान ही थी। सन् 1967 में मूल्यांकन के निष्कर्ष थे कि ग्राम पाठशाला के छात्रों की सम्प्राप्ति और पूर्णकालिक विद्यालयों के छात्रों की सम्प्राप्ति में कोई अन्तर नहीं था। छात्रों ने अपने अभिभावकों के व्यवसाय में मदद की और इनकी [illegible] की स्थिति पूर्णकालिक विद्यालयों की तुलना में अधिक अच्छी रही। अपव्यय व अवरोधन की समस्या नहीं रही। इनकी उपस्थिति अपेक्षाकृत अधिक रही। परन्तु 1972 में पता चला कि शिक्षिका और

ग्रनवधान स सुझाय भी ग्रसफल हो जाता है। पाया गया कि जिस लगन व उत्साह स य विद्यालय शुरू किए गए थे उसम पाच वर्षो म ही कमी ग्रा गई। उनम एस ग्रध्यापक ग्रा गए, जो योजना से परिचित नही थ। उन प्रयोगाधीन विद्यालयो पर शिक्षा विभागीय नियम समानत लागू कर दिए गए उसस बाधा पहुँची। ग्रावश्यक शिक्षण सामग्री का काफी ग्रभाव रहा।

विविध ग्रध्ययन

बृजकिशोर शर्मा (1973) न फ्लण्डर की दस वर्गीय प्रणाली (Flander s Ten Categories) के ग्रनुकरण पर विज्ञान ग्रध्यापको के लिए एक व्यवहार-तालिका का विकास करके मालूम किया कि रसायन विज्ञान विषय म ग्रध्यापक कथन छात्र कथन स साढे छह गुना ग्रधिक था। ग्रध्यापक द्वारा किए जान वाले परोक्ष कथन 12% थे। छात्रा म विचार क विकास के या उनके विचारो की प्रशसा के ग्रवसर नही क बराबर रहे। ग्रध्यापको के ग्रविकार प्रदर्शन की स्थिति की किसी न ग्रालोचना नही की। यह भी पाया गया कि कक्षा म विचार प्रवतन के ग्रवसर छात्रा का नही दिए जाते। ग्रध्यापको क कक्षागत व्यवहारो का सापेक्षिक प्रतिशत इस प्रकार स था – ग्रध्यापन स्थिति का निमाण 51 7%, ग्रधिगम स्थिति का निर्माण 15 5% सामग्री निमाण की स्थितिया 7% कक्षा नियत्रण के व्यवहार 8 2% मौन क्रिया क ग्रवसर 7% ग्रौर ग्रनिश्चित व्यवहार 10 5%।

सुमानी (1968) न महाविद्यालयी छात्रा क लिए एक ग्रध्ययन ग्रादत जाच प्रश्नावली तयार की, जिसका विश्वसनीयता गुणाक 78 व वधता गुणाक 43 रहा। सार था कि ग्रच्छी शक्षिक सप्राप्ति केवल ग्रध्ययन-ग्रादता पर ही निभर नही करती इसक लिए बुद्धिलब्धि व ग्रभिक्षमता जस तत्त्व भी उत्तरदायी हाते हैं।

कर्णावट (1971) ने कक्षा क बाहर चलन वाली (सहशक्षिक) क्रियाग्रा का मूल्याकन करके पाया कि 70/ से 75% ग्रध्यापका व छात्रा क मतानुसार इन क्रियाग्रा के सगठन व सचालन हतु काई ग्रच्छी योजना नही बनाई जाती थी। इनकी योजना बनान हेतु या क्रियान्विति हेतु छात्र समिति के सुझावा पर ग्रमल नही किया जाता था। इन क्रियाग्रा का मूल्याकन प्राय सत्र के ग्रन्त म किया जाता था। इस मूल्याकन म छात्र समिति का काई योगदान नही रहता। छात्रा के मतानुसार य क्रियाए जनतात्रिक नागरिकता ग्रौर भावनात्मक एकता का विकास करती हैं। य छात्रा म जिम्मेदारी, सहयाग व देश भक्ति क गुण पदा करती हैं।

सभावनाएँ एव सुझाव

मापन एव मूल्याकन क उपकरणा म सप्राप्ति परख पर विशष ध्यान रहा। वस्तुत इस क्षेत्र म ग्रध्यापक की स्व निर्मित परीक्षणा का उपयाग ग्रधिक करना चाहिए क्याकि प्रमाणीकृत परखें पाठ्यक्रम परिवतन के साथ ही बेकार हा जाती हैं। परीक्षाग्रा ग्रसफलता व उसके कारणा छात्रा की ग्रशुद्धिया, उनकी ग्रावश्यकताग्रा, ग्रभिवत्तिया व्यक्तित्व समायोजन ग्रापसी सामाजिक सम्बन्ध ग्रादि विषया म ग्रौर

अधिक मूल्यांकन शोध काय किय जाने अपेक्षित हैं। खल शारीरिक विकास आदि क्षेत्रो म मूल्यांकन का क्षेत्र तो शोधकर्त्ताओं के लिए अछूता सा है।

न्यादर्श की दृष्टि स अधिकांश शोध काय किशोर छात्र-छात्राओं पर किए गए हैं। मगर पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक स्तर के बच्चो पर मूल्यांकन शोध काय भी उतन ही आवश्यक हैं। यह ठीक है कि छोटे बच्चो के लिए तयार परख-पत्र/जांच पत्र नहीं मिलत या कम मिलत हैं मगर आवश्यकतानुसार उनका निर्माण किया जाना चाहिए।

उपकरणो की दृष्टि स यह मानना चाहिए कि भारतीय स्थितियो म निर्मित उपकरण ही सही निष्कष दे पान म सहायक होत हैं। विदेशी वातावरण म विकसित परीक्षणो का प्रयोग भ्रात निष्कष द सकता है। यदि कुछ न हो सक तो उनका भारतीयकरण तो किया ही जाना चाहिए। इस तरह प्रयास करन स शिक्षा क्षत्र म काम करन वाल व्यक्तियो को सही उपकरण प्राप्त हो सकेंगे।

इन अनुसधानो म प्रयोग विधि को कम स्थान मिला है जबकि निष्कष प्राप्त करन की दृष्टि स सबस अधिक वधता व विश्वसनीयता प्रयोग म ही होती है।

छात्रो/अध्यापको की अभिवत्तियो का मापन शक्षिक विकास म मददगार होता है पर एक-दो विषयो म ही कमा करन स प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। इसी तरह एक आध जगह के छात्रो की अभिवत्ति जान लन स राज्य-स्तर पर किसी सुधार की दिशा नहीं बन सकती। यदि इतिहास विषय म लडको की अभिवत्ति लडकियो की अपेक्षा अधिक सकारात्मक पाई गई लडकियो की आपसी तुलना म नवी कक्षा की लडकियो म अधिक सकारात्मकता प्रदर्शित हुई तो इसस सम्बन्धित परिपूरक अनुसधान होन चाहिए थ मगर कमा कहीं हुआ नहीं।

उसी तरह यदि सरकारी विद्यालयो क विद्यार्थियो की सप्राप्ति प्राइवेट विद्यालयो के विद्यार्थियो की तुलना म कम रही तो शिक्षा विभाग म अध्यापको क चुनाव उनके व्यावसायिक विकास उनक अभिवत्त्यात्मक परिवतन उनके स्थानान्तरण आदि पर भी अनुपूरक या परिपूरक अध्ययनो की आवश्यकता थी। यदि व हो तो उन्ह इनस सम्बद्ध करके कहीं देखन की आवश्यकता भी है और उनक आधार पर प्रणाली म सुधार करन की उद्यतता की भी जरूरत है।

तथापि एक सराहनीय प्रवति यह उभरती है कि इन अनुसधानो म कुछ तो भारतीय वातावरण म निर्मित परीक्षणो का आचलिक प्रमाणीकरण करन का प्रयास हुआ है कुछ विदेशी परीक्षणो का। परख-पत्र समूहो का भारतीयकरण करक भारतीय परिवेश म उनके प्रमापीकरण करन का प्रयास हुआ है और कुछ स्वतन्त्र परीक्षण/परख-पत्र समूह/सप्राप्ति परख बनाकर उनक प्रमापीकरण का प्रयास किया गया है। इस प्रसग म निम्नलिखित नवनिर्मित उपकरणो का उल्लेख करना समुचित

(1954, 72, 74), भाषागत अशुद्धियाँ निदानात्मक परख (1954, 66, 69, 72 73, 74) व्यक्तित्व समायोजन तालिका (1963, 68 73), कुण्ठा प्रतिक्रिया परख (1971, 74), मूल्य निर्धारण सम्बन्धी परख (1971 72, 74) अध्यापक-व्यवहार तालिका (1973), अध्ययन आदत तालिका (1968), गुडिया खेल किट (1971) व बच्चों की समायोजन तालिका का भारतीयकरण (*1962*)। इनके उपयोग एव परीक्षण का दायित्व उन सभी का होना चाहिए जो शिक्षा कार्य से सम्बन्धित हैं और उसके समुन्नयन की भावना रखते हैं।

सन्दर्भांकित अनुसधान

अग्रवाल आर एन	Reading Tests and Diagnosis of Reading Difficulties of Children of Class VI of Nearly 11+ M Ed Raj Uni, 1957
अमृतकौर	To Develop Battery of Tests and Procedure for the Educational Guidance of the Pupils in Different Streams of the Higher Secondary Schools Ph D (Edu) Raj Uni 1970
उमेशकुमारी	कक्षा प्रथम, द्वितीय व तृतीय की हिन्दी मे होने वाली वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों को ज्ञात करने के लिए निदानात्मक परीक्षण का निर्माण, एम एड राज वि वि, 1973
उपाध्याय राधेश्याम	पाचवीं कक्षा मे सामान्य विज्ञान की पढाई का मूल्याकन एक अध्ययन, राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर 1965
कचरू बालकृष्ण	Construction of an Achievement Test in Social Studies for Class IX M Ed Raj Uni 1956
कपूर रामनाथ	Students Attitude towards School and School Work Development of a Scale M Ed Raj Uni 1967
कर्णावट, चान्दमल	A Critical Evaluation of Out of class Activities in Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1971
कृपालसिंह	Construction of an Achievement Test in Mathematics for Class VIII M Ed Raj Uni 1961
कौशिक ओंकारप्रकाश	Construction of Personality Adjustment Inventory (Students Form) M Ed Raj Uni 1963
खन्ना, दुर्गाप्रसाद	Construction of an Attitude Scale on Likert Technique M Ed Raj Uni 1971

अधिक मूल्यांकन शोध कार्य किये जाने अपेक्षित हैं। मूल्य शारीरिक विकास आदि क्षेत्रों में मूल्यांकन का क्षेत्र तो शोधकर्त्ताओं के लिए अछूता सा है।

स्तर की दृष्टि से अधिकतर शोध कार्य किशोर छात्र-छात्राओं पर किए गए हैं। मगर पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक स्तर के बच्चों पर मूल्यांकन शोध कार्य भी उतने ही आवश्यक हैं। यह ठीक है कि छोटे बच्चों के लिए तैयार परीक्षण-पत्र/जाँच पत्र नहीं मिलते या कम मिलते हैं मगर आवश्यकतानुसार उनका निर्माण किया जाना चाहिए।

उपकरणों की दृष्टि से यह मानना चाहिए कि भारतीय स्थितियों में निर्मित उपकरण ही सही निष्कर्ष देने में सहायक होते हैं। विदेशी वातावरण में विकसित परीक्षणों का प्रयोग भ्रान्त निष्कर्ष दे सकता है। यदि कुछ न हो सके तो उनका भारतीयकरण तो किया ही जाना चाहिए। इस तरह प्रयोग करने से शिक्षा क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्तियों को सही उपकरण प्राप्त हो सकेंगे।

इन अनुसंधानों में प्रयोग विधि को कम स्थान मिला है, जबकि निष्कर्ष प्राप्त करने की दृष्टि से सबसे अधिक वैधता व विश्वसनीयता प्रयोग में ही होती है।

छात्रों/अध्यापकों की अभिवृत्तियों को मापना अधिक विकास में महत्त्वपूर्ण होता है पर एकाध विषयों में ही ऐसा करने से प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। इसी तरह एक आध जगह के छात्रों की अभिवृत्ति जान उन से राज्य-स्तर पर किसी सुधार की दिशा नहीं बन सकती। यदि इतिहास विषय में लड़कों की अभिवृत्ति लड़कियों की अपेक्षा अधिक सकारात्मक पाई गई, लड़कियों की आपसी तुलना में नवीं कक्षा की लड़कियों में अधिक सकारात्मकता प्रदर्शित हुई, तो इससे सम्बन्धित परिपूरक अनुसंधान होने चाहिए थे, मगर वैसा नहीं हुआ।

इसी तरह यदि सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की सम्प्राप्ति प्राइवेट विद्यालयों के विद्यार्थियों की तुलना में कम रही तो शिक्षा विभाग में अध्यापकों के चुनाव उनके व्यावसायिक विकास, उनके अभिवृत्यात्मक परिवर्तन, उनके स्थानान्तरण आदि पर भी अनुपूरक या परिपूरक अध्ययनों की आवश्यकता थी। यदि वे हों तो उन्हें इससे सम्बद्ध करके वहीं देखने की आवश्यकता भी है और उनके आधार पर प्रणालियों में सुधार करने की उपयुक्तता की भी जरूरत है।

तथापि एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति यह उभरती है कि इन अनुसंधानों में कुछ तो भारतीय वातावरण में निर्मित परीक्षणों का आवधिक प्रमाणीकरण करने का प्रयास हुआ है कुछ विदेशी परीक्षणों का। परीक्षण-पत्र समूहों का भारतीयकरण करके भारतीय परिवेश में उनके प्रमाणीकरण करने का प्रयास हुआ है और कुछ स्वतंत्र परीक्षण/परीक्षण-पत्र समूह/सम्प्राप्ति परीक्षण बनाकर उनके प्रमाणीकरण का प्रयास किया गया है। इस प्रसंग में निम्नलिखित नवनिर्मित उपकरणों का उल्लेख करना सर्वथा संगत होगा: अभिवृत्ति मापनी (1967, 69, 70 71) बुद्धि परीक्षा (1954 57 68 72) सम्प्राप्ति परीक्षण (1953 54 56 57 61 62 64 65 66 72) अभिरुचि अभिवृत्ति एवं मापनी परीक्षण-पत्र समूह (1970) निदानात्मक परीक्षण (वाचन)

(1954, 72, 74), भाषागत अशुद्धियाँ निदानात्मक परख (1954 66 69, 72, 73 74) व्यक्तित्व समायोजन तालिका (1963, 68 73), कुण्ठा प्रतिक्रिया परख (1971, 74), मूल्य निर्धारण सम्बन्धी परख (1971, 72, 74), अध्यापक-व्यवहार तालिका (1973), अध्ययन आदत तालिका (1968) गुडिया खल किट (1971) व बलस की समायोजन तालिका का भारतीयकरण (1962)। इनके उपयोग एव परीक्षण का दायित्व उन सभी का होना चाहिए जो शिक्षा काय से सम्बन्धित हैं और उसके समुन्नयन की भावना रखत हैं।

सन्दर्भाकित अनुसधान

अग्रवाल, आर एन	Reading Tests and Diagnosis of Reading Difficulties of Children of Class VI of Nearly 11+ M Ed Raj Uni 1957
अमृतकौर	To Develop Battery of Tests and Procedure for the Educational Guidance of the Pupils in Different Streams of the Higher Secondary Schools Ph D (Edu) Raj Uni 1970
उपदशकुमारी	कक्षा प्रथम, द्वितीय व तृतीय की हिन्दी मे होने वाली वतनी सम्बन्धी अशुद्धियों को ज्ञात करने के लिए निदानात्मक परीक्षण का निर्माण, एम एड, राज वि वि, 1973
उपाध्याय, राधेश्याम	पाचवीं कक्षा मे सामा य विज्ञान की पढ़ाई का मूल्याकन एक अध्ययन, राज्य शिक्षा सस्थान उदयपुर 1965
कचर बालकृष्ण	Construction of an Achievement Test in Social Studies for Class IX M Ed Raj Uni 1956
कपूर, रामनाथ	Students Attitude towards School and School Work Development of a Scale M Ed Raj Uni 1967
कर्णावट चादमल	A Critical Evaluation of Out of class Activities in Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1971
कृपालसिंह	Construction of an Achievement Test in Mathematics for Class VIII M Ed Raj Uni 1961
कौशिक आकारप्रकाश	Construction of Personality Adjustment Inventory (Students Form) M Ed Raj Uni 1963
खत्री, दुर्गाप्रसाद	Construction of an Attitude Scale on Likert Technique M Ed Raj Uni 1971

गुप्ता कमलचन्द	A Study into the Relationship of External Examination Marks and Internal Assessment of XI Class Students of Jaipur and Ajmer Districts of Rajasthan M Ed Raj Uni 1963
गुप्ता शशिप्रभा	A Study into the Personality Traits Intelligence Socio Economic Status and Interests of the Socially Accepted and Rejected Children of VIII Class M Ed Raj Uni 1973
गुप्ता सुरेन्द्र	Causes of Failures in Mathematics M Ed Raj Uni 1972
चन्दार उषा	Study of Self Concept of Tenth Class Students in relation with their Intelligence Socio Economic Status and Adjustment M Ed Raj Uni 1972
चतुर्वेदी जगदीशसिंह	Problem of Assessment in Basic Education M Ed Raj Uni 1955
जैन गणपतलाल	विद्याभवन बुनियादी शाला एवं एक सरकारी उच्च प्राथमिकशाला के मूल्य एम एड उदयपुर वि वि 1974
जैन सुशीलकुमारी	A Study of the Non Scholastic Factors Responsible for High and Low Scholastic Achievement of Girls Studying in Higher Secondary Schools at Banasthali and Jaipur M Ed Raj Uni 1966
जोशी जी के	पाँचवीं कक्षा में सामाजिक ज्ञान की पढ़ाई का मूल्यांकन एक अध्ययन राज्य शिक्षा संस्थान उदयपुर 1965
नागौर मातादीन	A Comparative Study of the Over Chosen and Under Chosen X Class Students M Ed Raj Uni 1968
नागर नवरतन	Relationship between the Socio Economic Status of Parents and the Intelligence of their Wards M Ed Udaipur Uni 19?3
नारंगरेखा	Construction of an Achievement Test in Chemistry for Class IX M Ed Raj Uni 196?
पाराशर मातासहाय	An Investigation into the Creative Thinking of Students at Different Age levels and the Relationship between Creative Thinking and Other Related Factors M Ed Raj Uni 196?
बनराज	Construction of an Achievement Test in Hindi for class VIII M Ed Raj Uni 1?4

वाक्लीवाल, केशरीमल	An Appraisal of the Comprehensive Internal Assessment Scheme Recently Introduced in the Secondary Schools of Rajasthan M Ed Raj Uni 1968
बागची, नमिता	Diagnosis of Language Errors in English for VIII and Exploration of Probable Causes M Ed Raj Uni 1973
भादू हजारीलाल	Evaluation of Pupils Attainment in Hindi (Class VIII) through Dr Bloom s Technique M Ed Raj Uni 1965
भार्गव, रामशरण	Construction of an Achievement Test in General Science for Class VIII M Ed Raj Uni 1956
भारतीय, सुधा	A Comparative Study of the Attitudes of Class XI Domestic Science and Non Domes tic Science Girl Students towards Domestic Life M Ed Raj Uni 1974
भारद्वाज, पुरुषोत्तम	Prognostic Values of VIII Class Marks M Ed Raj Uni 1965
मक्खनलाल	Construction of an Achievement Test in Mathematics for Class VIII M Ed Raj Uni 1961
माथुर सुशीलारानी	Diagnosis of Language Errors in English in Class VI M Ed Raj Uni 1972
मेहता, ऋषिवल्लभ	A Study of the Students Failures at the High School Stage M Ed Raj Uni 1955
मोटवानी सुशीला नानकराम	सिन्धी विद्यार्थियों द्वारा हिन्दी सीखने मे की गई त्रुटियो का अनुसधान एम एड, राज वि वि, 1968
यादव दिलीपसिंह	An Experimental Study of the Effect of Fatigue on Bilateral Transfer M Ed Raj Uni 1972
यादव राधेश्याम	राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद की भौतिक विज्ञान सम्बन्धी माध्यमिक कक्षाओ की पाठ्यपुस्तकों के अभ्यास प्रश्नो तथा परीक्षा प्रश्नों की उद्देश्यनिष्ठता मूलक विश्लेषण एव अनुसधान एम एड राज वि वि, 1974
रघुनाथप्रसाद	Construction of an Achievement Test in Geography for Classs VIII M Ed Raj Uni 1957
राठौड़ मोतीसिंह	Disabilities in Hindi Spelling M Ed Raj Uni 1966

राजरानुशाम	An Investigation into Fa tors Responsib e for High Fercentage of Failures in High School Exam nation of U P Board M E Raj Uni 1/4
ग्रा रविरा	A Study of th D ve' pr ent of Vocabulary of Children of Ag Gro p 6 to 8 Ph D (Edu) Raj Uni 19
गमगविदविद	Indian Adaptat on of B ll s Adjustment Inventory (Stud nt Form) f r High School Students M Ed Raj Uni 1
रक प राराप	Constru tion of an Achievement Test in History M Ed Raj Un 1/6
रपा सुराप	Constru tion of an Achievement Test in Alg bra and Geom try for Class VIII M Ed Raj Uni 1/5
राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड	A Study of Stud nts Common Errors with special reference to the Effi acy of the Obj c tive based Examination System in Compul sory English High r S condary Examina tion 1972 1974
राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड	A Study of Students Common Errors with special reference to th Effi a y of the Obj c tive based Examination Syst m in G n ral S i n e Se ondary Examination 1972 1974
राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड	A Study of Stud nts Common Errors with special reference to th Effi acy of the Obje tive bas d Examination System in Elementary Mathematics Secondary Examination 1972 1974
राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड	A Study of Students Common Errors with special reference to the Effi acy of the Obj c tive based Examination System in Compulsory English Secondary Examination 1972 1974
राजस्थान राज्य शिक्षा सस्थान	Evaluation of Three Hours School An Ex periment 1967
राजस्थान राज्य शिक्षा सस्थान	प्रहर पाठशालाओं के सगठनात्मक पक्ष का मूल्यांकन 1972
राष्ट्रीय नरा	Construction of a Scale of Altruistic Attitude M Ed Raj Uni 1973
वस्य, रामचन्द्र	Constru tion of an Achi vement Test in So ial Studies for Class VIII Students M Ed Raj Uni 1972
शर्मा, उर्मिला	किशोर बालक-बालिकाओं म कुण्ठा क फलस्वरूप प्रति क्रियाओं क विकासात्मक क्रम म रोजनज्विग तकनीक क आधार पर एक अध्ययन एम एड राज वि वि 1971

शर्मा, कन्हैयालाल	Doll play as a Technique of Evaluating Attitude of Children towards Home M Ed Udaipur Uni 1971
शर्मा, छनमोहन	Reactions to Frustration among Adolescents in the School Situations Ph D (Edu) Raj Uni 1973
शर्मा, जयप्रकाश	Common Errors in English at the High School Stage M Ed Raj Uni 1954
शर्मा, नरदेव	Measurement of Understanding in Geography, M Ed Raj Uni 1962
शर्मा, वृजकिशोर	Developing a Science Teacher Behaviour Inventory M Ed Raj Uni 1973
शर्मा रविकान्त	Draw a Man Test as Predictor of Intelligence of Children M Ed Raj Uni 1972
शर्मा, रामनिवास	Diagnosis of Errors in Hindi Class IX M Ed Raj Uni 1969
शर्मा, रामप्रसाद	Construction of an Achievement Test in Social Studies for Class V M Ed Raj Uni 1972
शर्मा रामानन्द	छात्रों की सस्कृत विषय के प्रति अभिवृत्ति (लिकर्ट पद्धति से मापनी रचना) एम एड, राज वि वि 1969
शर्मा लक्ष्मीनारायण	Construction of a Verbal Intelligence Test for Eleven plus M Ed Raj Uni 1954
शाह श्रीकृष्ण	Standardization of Alexander s Pass Along Test for Eleven plus M Ed Raj Uni 1957
शेखावत सवाईसिंह	माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा प्रवर्तित तथा तदनुरूप राजस्थान के माध्यमिक विद्यालयों मे क्रियान्वित व्यापक आतरिक मूल्याकन योजना के प्रति विभिन्न विद्यालयीय घटकों की अभिवृत्ति का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1973
शतानसिंह	उदयपुर नगर के राज० उ० मा० विद्यालयो मे आतरिक मूल्याकन एम एड, उदयपुर वि वि, 1974
सरदारसिंह	Construction of an Achievement Test in Agriculture for Class VIII M Ed Raj Uni 1957
सारस्वत कल्याणमल	भीलवाडा जिले के उच्च माध्यमिक विद्यालयो के छात्रों के कद व वजन सम्बन्धी मानकीकरण हेतु अध्ययन एम एड राज वि वि, 1971

माहनस्मान	दो शैक्षिक संभागों में विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन एम एड उदयपुर वि वि, 1971
मिश्र रमगजानन्द	Construction of an Achievement Test in General Science for Students of Class VIII M Ed Raj Uni 1964
गिरिराजकुमार	A Critical Study of a Group Intelligence Test in Hindi by Dr Prayag Mehta M Ed Udaipur Uni 1968
मुखाना, मनीष	Development of Study Habits Inventory for College Students M Ed Raj Uni 1968
सूद रमाकान्त	विद्यार्थियों की इतिहास विषयक अभिवृत्ति एक सर्वेक्षण, एम एड राज वि वि 1970
समुअल एन इन्यू	An Investigation into the Attitudes of Teachers towards the Objective based Questions Introduced by the Board of Secondary Education Rajasthan Ajmer M Ed Udaipur Uni 1967
सदाराम	Causes of High School Failures M Ed Raj Uni 1961
माहेश्वरी उमराव	किशोर जनों में व्याप्त स्नायु दौर्बल्य का एक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1971
हिम्मतसिंह	Relationship between the Marks of Sections A and B Obtained at the Board s Examination M Ed Raj Uni 1972
त्रिपाठी विष्णुदत्त	Construction of an Achievement Test in Arithmetic for Class VIII M Ed Raj Uni 1953



शैक्षिक निर्देशन

□ डा अरविन्द बी फाटक
□ वासुदेव जी दवे

वसे तो मानव का आदिकाल स निर्देशन की आवश्यकता रही है और वह अपने वयस्कों से अथवा मित्रों से अनौपचारिक रूप स निर्देशन प्राप्त करता रहा है किन्तु शिक्षा म निर्देशन सेवाओं का सुव्यवस्थित प्रारभ बीसवी शताब्दी के आरम्भ म अमेरिका म हुआ था। इसकी आवश्यकता औद्योगिक क्रान्ति के बाद विशेष अनुभव की जान लगी है। भारत मे तो इस विचारधारा का जन्म और भी बाद मे हुआ। बम्बई नगर मे पारसी पचायत नामक सस्था द्वारा निर्देशन के क्षेत्र म सवप्रथम काय प्रारभ किया गया था। यह एक विचित्र सी बात है कि शिक्षा के इस महत्वपूर्ण पक्ष के जन्म दाता शिक्षाजगत से बाहर के व्यक्ति थे। यह एक सयोग का विषय है कि भारत व अमेरिका दोनो ही देशो म निर्देशन सेवाओं का प्रारभ व्यावसायिक निर्देशन मे हुआ था और इस विचारधारा के जन्म के बाद कुछ वर्षों तक निर्देशन का अथ व्यावसायिक निर्देशन से ही लिया जाता रहा था। धीरे धीरे निर्देशन के सप्रत्यय म परिवतन आया व इसको अधिक व्यापक रूप म लिया जाने लगा। इसके अन्तगत आज मानव जीवन से सबधित सभी आयामो की समस्याओं का समावेश किया जाता है।

आज निर्देशन के विभिन्न रूप हमारे सामने है यथा-व्यावसायिक निर्देशन, शक्षिक निर्देशन वयक्तिक निर्देशन आदि। आज यह माना जाने लगा है कि निर्देशन शिक्षा का अविभाज्य अग है और यही कारण है कि विभिन्न राज्यो म निर्देशन ब्यूरो स्थापित किए गए हैं। राजस्थान म निर्देशन ब्यूरो की स्थापना सन् 1958 ई० म हुई। इसी के साथ निर्देशन की विचारधारा का प्रचार व प्रसार होने लगा व इस क्षेत्र म गतिविधिया बढने लगी।

इस क्षेत्र म अनुसधान की प्रचुरता का कल्पना इसी स की जा सकती है कि इस क्षेत्र के अनुसधान कार्यों को प्रवत्ति निरूपण हेतु दो भागो म बाँटना पडा - (1) शक्षिक निर्देशन तथा (2) व्यावसायिक निर्देशन। यहाँ यह स्पष्ट कर देना उपयुक्त होगा कि शक्षिक निर्देशन के अन्तगत यहाँ छात्रो की व्यक्तिगत समजन समस्याओं का भी समावेश किया गया है।

यदि निर्देशन व परामर्श सम्बन्धी अनुसंधानों का यदि वर्गीकरण किया जाए तो वह इस प्रकार हो सकता – छात्रों की समस्या समस्याएँ एवं छात्रों की अभिरुचियों छात्रों का अध्ययन अपने विशिष्ट पिछड़ापन प्रतिभावान एवं सृजनशील छात्र छात्राओं का निर्देशन सम्बन्धी आवश्यकताएँ निर्देशन-सेवाओं की प्रभावोत्पादकता का अध्ययन चयन की कसौटियाँ तथा विविध।

सर्वप्रथम यह तथ्य उभरता है कि अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान छात्रों की समायोजन समस्याओं की ओर अधिक गया है निर्देशन-सेवाओं की प्रभावोत्पादकता को आँकने का तथा विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेश की कसौटियाँ निर्धारित करने का प्रयास बहुत कम हुआ है। विधि की दृष्टि से देखा जाए तो अधिकतर अनुसंधान सर्वेक्षण विधि पर आधारित हैं केवल तीन चार अध्ययन ही प्रयोगात्मक विधि पर आधारित हैं। प्रकरण अध्ययन विधियों का प्रयोग तो और भी कम हुआ है।

छात्रों की समायोजन समस्याएँ

छात्रों की समायोजन समस्याओं पर तीन प्रकार के शोध देखने को मिलते हैं। एक तो वे जिनमें विभिन्न प्रकार के छात्रों की समायोजन समस्याओं का सर्वेक्षण करने का प्रयत्न किया गया है दूसरे वे जिनमें समायोजन के सहसम्बन्धकों का अध्ययन किया गया है तथा तीसरे प्रकार के अनुसंधान वे हैं जिनमें कुसमायोजन अथवा समायोजन समस्याओं के कारणों का पता लगाने का प्रयास किया गया है।

कॉलेज के छात्रों के अध्ययन पर स्वामी (1973) ने यह मालूम किया कि लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक समायोजन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। माध्यमिक स्तर पर भी इसी तथ्य की पुष्टि रामकृष्ण शर्मा (1968) ने की है। ज्योति भाटिया (1970) ने यह पाया कि लिंग भेद का समायोजन स्तर पर कोई प्रभाव नहीं पाया। इसी क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के छात्रों की तथा निम्नवित्त परिवार से आए छात्रों की समायोजन समस्याओं के अध्ययन में कृष्णमुरारी शर्मा (1971) ने यह ज्ञात किया कि अनुसूचित जन जाति के छात्रों व अन्य जाति के छात्रों में व्यक्तिगत समायोजन की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं था जबकि माथुर (1974) द्वारा किए गए प्रकरण अध्ययन के अनुसार निम्नवित्त परिवारों से आए बच्चों के समायोजन पर विस्थापन का तत्काल प्रभाव पड़ता है। एक अध्ययन में पंजाब व राजस्थान की विभिन्न जातियों की लड़कियों का तुलनात्मक अध्ययन करके माथुर (1973) ने यह मालूम किया कि पंजाब की लड़कियाँ राजस्थान की लड़कियों की अपेक्षा अधिक चिन्ताग्रस्त रहती हैं। राजनाथ शर्मा (1970) के अध्ययन के अनुसार ग्रामीण छात्र शहरी वातावरण में सामाजिक प्रवृत्तियों में समायोजन करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। विभिन्न प्रकार के छात्रों का समायोजन स्तर कैसा होता है यह पता लगाने के साथ-साथ कुछ अनुसंधान ऐसे भी हैं जिनमें छात्रों की समायोजन समस्याएँ किस प्रकार की हैं यह पता लगाने का प्रयत्न किया गया है। आसोपा (1967) ने अपने अनुसंधान में यह ज्ञात किया कि छात्राएँ प्रायः स्वास्थ्य आर्थिक स्थिति अध्ययन-सामग्री घर के सदस्य मिलन जुलन भवन की आदत तथा संवेगात्मक अस्थिरता से चिन्तित रहती हैं। जब कि

वी एस शर्मा (1966) ने टी डी सी प्रथम वर्ष के छात्रों की समस्याओं के बारे में मालूम किया कि वे स्वकेन्द्रित होते हैं आर्थिक समस्याओं से पीडित होते हैं, भविष्य के बारे में अनिश्चितता उनकी एक प्रमुख समस्या है तथा दूसरे साथियों से सुखद सबधों का अभाव उनकी चिंता का विषय बना रहता है।

अनेक अनुसधानकर्त्ताओं के अनुसधानों से यह तथ्य सामने आया है कि बुद्धिलब्धि व समायोजन में धनात्मक सहसबध है। उच्च बुद्धिलब्धि वाले छात्रों के समायोजन स्तर के अधिक अच्छे होने की सभावना है। इसी प्रकार शाला विषयों में उपलब्धि-स्तर व समायोजन का भी धनात्मक सबध होता है यह निष्कर्ष जैन (1969), भाटिया (1970) तथा राय (1970) के अनुसधानों से निकलता है। इसके अतिरिक्त कुछ अनुसधानों में आर्थिक-सामाजिक स्तर, अध्ययन आदतें, शाला में उपस्थिति, शारीरिक स्वास्थ्य, मौलिक चिंतन आदि कारकों के साथ भी समजन का धनात्मक सहसबध देखा गया है। इन अनुसधानों की सख्या यद्यपि बहुत अधिक नहीं है फिर भी एक निर्देशन कार्यकर्ता के लिए बच्चों के समजन में सहायता हेतु उपयुक्त निष्कर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं। समजन में समस्याओं के कारणों का पता लग जाए तो वह छात्रों को कुसमायोजित होने से बचा सकता है। पारीक (1970) का निष्कर्ष है कि अहम तथा परम अहम की सुरक्षा, आवश्यकताओं की पूर्ति तथा आक्रामकता का प्रभाव अनुकूलन पर पडता है। सिसोदिया (1967) ने सामाजिक दृष्टि से परित्यक्त बच्चों के सम्बन्ध में यह पाया कि वे अपने माता पिता के व्यवहार से असतुष्ट थे। उनमें सवेगात्मक नियत्रण की कमी थी साथ ही उनमें आत्मविश्वास की कमी व जिम्मेदारी वहन करने से जी चुराने की प्रवृत्ति पाई गई।

शाला की एक प्रमुख समस्या पलायन की है। शालाओं से अवसर भाग जाने वाले बालक अपने शिक्षकों माता पिता तथा शाला प्रशासकों के लिए एक सिरदर्द बन जाते हैं। निर्देशन कार्यकर्ता का एक प्रमुख कार्य इन बालकों को शाला में समायोजित होने में सहायता करने का है। इसके लिए यह जानना जरूरी है कि पलायन की समस्या के कारण क्या हैं। चेतनस्वरूप (1970) ने यह मालूम किया कि पलायनवादिता का बुद्धिलब्धि से कोई सबध नहीं है किन्तु कुछ सीमा तक आर्थिक एवं सामाजिक स्तर से यह समस्या जुडी हुई है। किन्तु सक्सेना (1966) ने शैक्षिक पिछडेपन का पलायनवादिता से धनात्मक सह-सबध बताया है। उनके निष्कर्षों के अनुसार पलायन वृत्ति वाले छात्रों में से बहुत ही कम प्रतिशत ऐसे छात्रों का था जो कि उच्च बुद्धिलब्धि के थे 86 5 प्रतिशत तो निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले ही थे। बलवीरसिंह (1959) के अनुसधान से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि पलायन करने वाले बालकों में से 80 प्रतिशत के माता पिता अशिक्षित थे। पलायनवादिता के कारणों के विश्लेषण के सन्दर्भ में रघुवीरसिंह (1958) ने पाया कि व्यावसायिक निर्देशन की कमी माता पिता की निरक्षरता पिता का कुसमजन अवाछित मित्र अत्यधिक काम, पिता द्वारा व्यक्तिगत ध्यान का अभाव खेलों में अत्यधिक (अतिरिक्त रुचि) भाग लेना आदि पलायन के कारण थे। सक्सेना (1966) के अनुसार इस समस्या के प्रमुख कारण हैं शाला द्वारा गए छात्रों

की खोज न करना, प्रत्येक कालांश में उपस्थिति न देना, शालाओं में पढ़ाए जाने वाले विषयों में अनिश्चित एवं अरुचिकर गृहकार्य। कक्षा के अरुचिकर वातावरण को भी इस समस्या के लिए उत्तरदायी पाया गया।

छात्रों की अभिरुचियाँ

छात्रों की समायोजन समस्याओं के साथ-साथ छात्रों की अभिरुचियों पर भी अनुसंधान किए गए। इन अनुसंधानों को तीन प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है – वाचन अभिरुचियों का अध्ययन, पाठ्येतर क्रियाओं से संबंधित अभिरुचियों का अध्ययन एवं छात्रों की सामान्य अभिरुचियों का अध्ययन। अधिकतर अनुसंधानों से यह तथ्य उभरता है कि किशोर बालक व बालिकाएँ वाचन में काफी रुचि रखते हैं। बक्स श्रीवास्तव (1959) ने यह पाया कि छात्रों की रुचि वाचन में कम होती है। बाबू (1963) के अनुसंधान में यह रोचक एवं आश्चर्यजनक तथ्य सामने आया कि उनके न्यादर्श में से लगभग एक तिहाई अध्यापकों में वाचन के प्रति रुचि का अभाव था। 30 प्रतिशत अध्यापकों ने एक वर्ष में कोई भी व्यावसायिक पत्रिका नहीं पढ़ी थी तथा 20 प्रतिशत अध्यापकों ने अपने विषय से संबंधित कोई भी पुस्तक नहीं पढ़ी थी।

वाचन से सम्बन्धित दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह सामने आता है कि छात्र तथा छात्राओं की वाचन अभिरुचियाँ भिन्न होती हैं। छात्र वैज्ञानिक साहित्य, सामाजिक उपन्यास, ऐतिहासिक कहानियाँ तथा वीर रस की कविताएँ अधिक पसन्द करते हैं जबकि छात्राएँ लघु कहानियाँ, नाटक तथा जासूसी उपन्यास अधिक पसन्द करती हैं। अधिक बुद्धिलब्धि वाले तथा ऊँचे सामाजिक आर्थिक स्तर वाले परिवारों से आने वाले बालक वाचन में अधिक रुचि लेते हैं। किन्तु यह भी पाया गया कि शालाओं में तथा घर पर बालकों को वाचन सम्बन्धी मार्गदर्शन नहीं मिलता। कुछ अनुसंधानों से यह स्पष्ट हुआ कि शालाओं में वाचनालयों का अभाव और समय-सारिणी में वाचनालय कालांश का अभाव वाचन अभिरुचियों के प्रोत्साहन में बाधक सिद्ध होता है। गृहकार्य का बाहुल्य भी वाचन अभिरुचि में बाधक पाया गया।

पाठ्येतर प्रवृत्तियों में अभिरुचि के क्षेत्र में वारिगा (1959) के अनुसंधान से यह तथ्य निकला कि छात्र सहगामिक क्रियाओं में रुचि रखते हैं, उन्हें सिनेमा सबसे अधिक प्रिय होता है। जागाद (1968) के अनुसार छात्रों की अभिरुचियों में नागरिक क्रिया कलापों को द्वितीय स्थान प्राप्त है। लड़कियों की अपेक्षा लड़के खेल को अधिक पसन्द करते हैं। यह एक दिलचस्प बात है कि अधिकतर छात्रों ने खेलकूद को अध्ययन में बाधक नहीं माना।

रामचन्द्रकुमार शर्मा (1970) ने छात्र व छात्राओं की सामान्य रुचियों का अध्ययन करके यह मालूम किया कि छात्रों की रुचियों की वरीयता का क्रम पढ़ना, रेडियो सुनना व धार्मिक स्थानों पर जाना है जबकि छात्राओं की रुचियों का वरीयता क्रम रेडियो सुनना, पढ़ना, सिलाई व कसीदा करना, खाना बनाना, घर का कार्य करना, भजन व धार्मिक स्थानों पर जाना है। दोनों ही समय न गप्पें लगाने में दुकानों पर

बठने म व घुमक्कड़पने म कोई रुचि नहीं बताई। किशोरा की रुचिया पर श्रौत्च्य (1969) न श्रौर प्रकाश डाला है। तदनुसार भारतीय तथा श्रमरिकी किशोर सुन्दर दिखने म, अच्छी पोशाक पहिनने म पढ़ने म श्रौर अच्छे स्वास्थ्य म रुचि रखते हैं।

छात्रों की अध्ययन आदतें

छात्रा की अध्ययन आदता न सबधित अनुसधाना म मुख्यत दो प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। एक प्रकार के अनुसधान तो व हैं जिनम अध्ययन आदतो का अन्य चरा मे सह सबध दखन का प्रयास किया गया है तथा दूसर प्रकार के अध्ययना म दो समूहा की अध्ययन आदता का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

अध्ययन आदता एव शक्षिक सप्राप्ति म धनात्मक सह सम्बन्ध होता है। टागरा (1960) तथा मार्बीजा (1970) के अध्ययना से अध्ययन आदतों का बुद्धिलब्धि के साथ धनात्मक सबध पाया गया। दासगुप्ता (1966) न भी अध्ययन आदता का शक्षिक उपलब्धि क साथ घनात्मक किन्तु साथक सहसम्बन्ध बताया है। राव (1966) व निहालसिह शमा (1967) न छात्रा क आर्थिक-सामाजिक स्तर एव अध्ययन आदता म नगण्य सम्बन्ध की स्थिति ज्ञात की। बारगांवकर (1960) न नसरी स्कूल के बच्चो के बुद्धिस्तर का सर्वेक्षण करके यह पाया कि 3 वष की आयु के बालक शाब्दिक परीक्षणा की अपेक्षा निष्पादन परीक्षणा (Performance Tests) म अच्छे अक प्राप्त करते हैं। इस आयु स पूव दोना ही परीक्षणा के आधार पर अको म कोइ अतर नहीं पाया गया। छात्राआ की अपेक्षा छात्रा का स्तर प्रत्येक परीक्षण म थोडा-सा ऊँचा पाया गया। आर्थिक सामाजिक स्तर बुद्धिलब्धि को प्रभावित नहीं करता। निहालसिंह शर्मा (1967) के अध्ययन स यह पता चलता है कि छात्र एव छात्राआ की अध्ययन आदता म बहुत अन्तर होता है। अध्ययन म छात्राओ को छात्रा स अधिक कठिनाइ का सामना करना पडता है। कोथरा (1970) ने यह पाया कि निजी सस्थाआ म पढने वाल छात्र तथा छात्राआ की अध्ययन आदतें राजकीय विद्यालयो म पढन वाले छात्र तथा छात्राआ स अच्छी होती थी। शर्मा (1969) के अनुसार विज्ञान के विद्यार्थिया की अध्ययन आदतें वाणिज्य एव कला के छात्रा से अच्छी होती हैं तथा वाणिज्य के छात्र इस क्षेत्र म कला के छात्रा स अच्छे होते हैं। राव (1966) के शोध से निम्न एव उच्च शक्षिक सप्राप्ति वाले बालका की अध्ययन आदता म बहुत अन्तर पाया गया। उच्च सप्राप्ति क छात्र छात्राआ म परस्पर साथक अन्तर नहीं पाया गया।

शक्षिक पिछड़ापन

छात्रा क पिछड़ेपन पर किए गए अनुसधान निर्देशन कायकर्त्ताओ के लिए मागदशक हो सकत हैं। इस क्षेत्र म जो अनुसधान हुए हैं उनम स अधिकाश म पिछडपन के कारणा का पता लगाने का प्रयास किया गया है। इस लक्ष्य हेतु अधिकतर अनुसधानकर्त्ताओ न सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है। माथुर (1971) न पिछडेपन के निम्नलिखित कारण मालूम किए अत्यधिक अवकाश कक्षाआ म अधिक छात्र सख्या, वाभिन्न पाठ्यक्रम प्रयोगशालाआ का व सहायक

सामग्री की अभाव इन्हीं व्यक्तिगत ध्यान का अभाव छात्रों द्वारा कम्पनी वर्जिया का प्रयोग पाठ्यक्रम का जादा से सम्बंधित न होना अंग्रेजी माध्यम छात्रों की प्रवृत्ति शिक्षा पुस्तकों का अभाव निम्न आर्थिक-सामाजिक स्तर घर पर शिक्षा के प्रति उदासीनता का दृष्टिकोण घर के सदस्यों के साथ तनावपूर्ण संबंध अनियमित अध्ययन आदतें आत्मविश्वास की कमी व अभिभावकों का निम्न स्तर।

साहू (1970) ने नागरिक शास्त्र में पिछड़ेपन का अध्ययन करते हुए यह बताया कि अध्ययन आदतों का व आर्थिक-सामाजिक स्तर का पिछड़ेपन से नगण्य संबंध है। जबकि गणित विषय के लिए बलिष्ठ (1958) ने इसके विपरीत तथ्य ज्ञात किए। उनके अनुसंधान के अनुसार निम्न आर्थिक सामाजिक स्थिति व खराब अध्ययन-आदतें इनका पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी होती है।

प्रतिभावान तथा सृजनशील छात्र

प्रतिभावान उच्च सम्प्राप्ति वाले तथा सृजनशील बालकों की विशेषताओं खोजने और उनकी विभिन्न समस्याओं का पता लगाने की दिशा में भी अनुसंधान हुए हैं। गुप्ता (1960) भाटी (1971) तथा सुरेन्द्रकुमार शर्मा (1973) के अध्ययनों में प्रतिभावान छात्रों की विशेषताएं इस प्रकार से हैं इन बालकों की समझने की उन बालकों से अच्छी होती है इनकी अभिरुचियां के क्षेत्र अधिक विस्तृत होते हैं ये शिक्षित परिवारों से आते हैं इनमें अच्छी समस्याएं स्वतंत्र रूप से स्वयं हल करने की क्षमता होती है ये पढ़ाई में नियमित होते हैं। मुखालिया (1969) ने सृजनशील बालकों का अध्ययन करके यह मालूम किया कि कला एवं विज्ञान वर्ग के छात्रों की सृजनशीलता में कोई सार्थक भिन्नता नहीं थी। सृजनशीलता के विभिन्न घटकों का शैक्षिक सम्प्राप्ति के साथ कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं पाया गया। बल्कि कला-वर्ग में तो सृजनशीलता का शैक्षिक सम्प्राप्ति के साथ नकारात्मक संबंध पाया गया। बावरा (1970) के अनुसंधान में प्रतिभावान छात्रों की पाठ्यचर्या से सम्बंधित समस्याओं का उल्लेख किया गया है। इस अनुसंधान में यह पाया गया कि इन छात्रों को पाठ्यपुस्तकें सरल लगती हैं। गृहकार्य तथा परीक्षा के प्रश्नपत्र इनको चुनौतीपूर्ण नहीं लगते।

छात्रों की निर्देशन सम्बन्धी आवश्यकताएँ

सक्सेना शर्मा (1968) ने नवीं कक्षा के छात्रों की निर्देशन आवश्यकताओं का सर्वेक्षण करके यह पता लगाया कि छात्रों को निर्देशन की आवश्यकता सबसे अधिक शैक्षिक क्षेत्र में होती है इसके पश्चात् क्रमशः व्यावसायिक एवं संवेगात्मक निर्देशन की आवश्यकता पाई गई। छात्रों की निर्देशन आवश्यकता उम्र में अधिक पाई गई। टंडन (1969) के अध्ययन के निष्कर्ष ये कि विज्ञान एवं वाणिज्य वर्ग के छात्रों की निर्देशन आवश्यकताएँ कला वर्ग के छात्रों से भिन्न होती हैं और विज्ञान वर्ग के छात्रों को निर्देशन की आवश्यकता अपेक्षाकृत अधिक होती है। इसी प्रकार ग्रामीण छात्रों की अपेक्षा शहरी छात्रों की निर्देशन आवश्यकताएँ अधिक पाई गई। स्वरूप (1974) तथा बेनाराम शर्मा (1968) के अनुसंधानों में निर्देशन आवश्यकताओं को अन्य घटकों

के साथ क्या सबध है यह नान होता है। हरकुट के निष्कर्षों के अनुसार निर्देशन आवश्यकताओ का बुद्धिलब्धि स काई सबध नही हाता। शमा के अनुसधान म भी यह सबध नगण्य पाया गया। आर्थिक सामाजिक परिस्थितिया एव निर्देशन आवश्यकताओ का कोई साथक सहसबध शमा के अनुसधान से नही मिलता, जबकि हरकुट के निष्कर्षों से यह पता चलता है कि आर्थिक-सामाजिक स्तर निर्देशन आवश्यकताओ को प्रभावित अवश्य करता है।

निर्देशन सेवाओ की प्रभावशीलता

शर्मा (1965) तथा पुरोहित (1973) न प्रयागात्मक विधि से निर्देशन काय की प्रभावशीलता देखने का प्रयास किया। शर्मा के अनुसार प्रयागात्मक समूह म शिक्षा क्रमा एव व्यवसाया सबधी जानकारी म वद्धि हुइ तथा व्यक्तिगत एव सामाजिक समस्याओ म कमी हुई। प्रयागात्मक एव नियत्रित दाना ही समूहा के सदस्या की अध्ययन आदता म सुधार हुआ। पुरोहित के परिणाम भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि उपबोध से प्रयोगात्मक समूह को लाभ हुआ।

चयन की कसौटिया

इन अनुसधाना म विनान तथा कृषि विषय के लिए छात्रा का चयन करने की कसौटिया निर्धारित करन के प्रयास भी हुए हैं। कौल (1967) के अनुसार उच्च बुद्धिलब्धि तथा वनानिक रुझान वाले बालका का विनान विषय म लिया जाना चाहिए। भल्ला (1963) के अनुसार कृषि विषय म सफलता के लिए केवल बुद्धि ही महत्वपूर्ण घटक नही है। इस विषय मे सफलता के लिए छात्रा की अभिरुचि का भी महत्वपूर्ण स्थान हाता है। छात्रा के व्यक्तिगत समजन का प्रभाव भी इस विषय म सफलता पर पडता है।

विविध

उपयुक्त अध्ययना के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी अध्ययन शक्षिक निर्देशन के क्षेत्र म हुए हैं जो अलग अलग प्रकार के है। चारण (1968) न छात्रा की शक्षिक योजनाओ का अध्ययन करके यह जाना कि केवल 25 प्रतिशत छात्र व्यावसायिक क्षेत्रा म जाना चाहते थे। विनान के अधिकाश छात्र अभियान्त्रिकी म जाना चाहते थे। बाफना (1969) न यह देखा कि माताओ के सेवारत हान का प्रभाव उनके बच्चों की आकाक्षाओ तथा शक्षिक उपलब्धि पर पडता है। शिक्षित सेवारत माताओ के बच्चा की आकाक्षाएँ तथा शक्षिक उपलब्धि शिक्षित किन्तु नौकरी न करने वाली माताओ के बच्चा स ऊँची पाई गई। मुशी (1955) ने उदयपुर के छात्रा के स्वास्थ्य का अध्ययन करके यह पाया कि उन छात्रा म कुपोषण की समस्या सामान्य रूप से थी। घर का वातावरण आर्थिक सामाजिक स्तर एव शाला का वातावरण बच्चा के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं। गुप्तनकुमार (1958) न निर्देशन हतु वयक्तिक सूचनाएँ एकत्रित करन के लिए कुछ उपकरणा का निमाण किया जिनम वयक्तिक सूचना पत्र अभिरुचि-पत्र एव अभिभावक मत-पत्र प्रमुख हैं।

संभावनाएँ एवं सुझाव

शैक्षिक निर्देशन को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हमारे यहाँ भारतीय परिस्थितियों में निर्मित परीक्षण उपलब्ध हों जिनके द्वारा हम छात्रों के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों से सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित कर सकें। अनुसंधानों की समस्त सूची में केवल एक अनुसंधान ऐसा मिलता है जिसमें निर्देशन परीक्षणों के निर्माण का प्रयास किया गया है।

अभिक्षमताओं एवं सृजनात्मक क्षमताओं के क्षेत्र में तो कुछ अध्ययन मिलते हैं किन्तु इन छात्रों के लिए विशेष शिक्षाक्रम क्या हो इस पर कोई भी अध्ययन दृष्टिगोचर नहीं हुआ। आज आवश्यकता इस बात की है कि इन बालकों के विकास हेतु उचित शैक्षिक वातावरण का सृजन किया जाए। यह तभी हो सकता है जब अनुसंधानकर्ता प्रायोगिक रूप से इन बालकों के विकास के लिए कुछ कार्यक्रम पेश कर सकें। राज्य शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन ब्यूरो द्वारा भी इस प्रयोजन से प्रायोगिक कार्य किया जाना चाहिए। पिछड़ेपन के कारणों का पता लगाने के अनेक प्रयास हुए हैं किन्तु किसी भी अनुसंधान में पिछड़ापन दूर करने की किसी विधि का प्रायोगिक परीक्षण नहीं किया गया। यदि पिछड़ापन दूर करने के कुछ ठोस सुझाव आएँ तो निर्देशन कार्यकर्ताओं को अधिक मार्गदर्शन मिल सकता है।

निर्देशन भारत के लिए नवीन शैक्षिक प्रयोग है। अतः निर्देशन के कौन से तरीके भारतीय परिस्थितियों में अधिक सफल हो सकते हैं इस विषय पर भी पर्याप्त अनुसंधान कार्य की आवश्यकता दृष्टिगोचर होती है। यह मानकर नहीं चला जा सकता कि जो विधियाँ पश्चिम में सफल हों वे भारत में भी उपयुक्त सिद्ध होंगी।

छात्रों की अभिरुचियाँ क्या हैं यह पता लगाना तब तक कोई अर्थ नहीं रखता जब तक कि अभिरुचियों के विकास का कोई सुनियोजित प्रयास न हो। इस क्षेत्र में जो अनुसंधान हुए हैं उनमें केवल अभिरुचियों के विकास का पता लगाने का प्रयास किया गया है। अभिरुचियों के विकास के कितने अवसर शालाएँ प्रदान करती हैं या उनके विकास के कौन से तरीके हो सकते हैं इस पर भी अनुसंधान किया जाए तो निर्देशन कार्यकर्ताओं को अधिक लाभ हो सकता है।

शैक्षिक निर्देशन का प्रमुख उद्देश्य छात्रों को विभिन्न शिक्षाक्रम चुनने में सहायता प्रदान करना है। यह तभी किया जा सकता है जब विभिन्न विषयों में सफलता के लिए कौन से व्यक्तिगत गुण होना आवश्यक है यह ज्ञात हो। इस दिशा में शोध कार्य नहीं के बराबर हुए हैं। अतः शोधकर्ताओं के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य क्षेत्र हो सकता है।

इस अध्याय में जिन अनुसंधान प्रवृत्तियों की चर्चा की गई है उनसे क्षेत्र में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के लिए भी अनेक सुझाव सामने आते हैं

छात्र मुख्य रूप से आर्थिक कठिनाइयों से, भविष्य की चिन्ता से व स्वास्थ्य से चिन्तित रहते हैं। इसी प्रकार निम्न शैक्षिक उपलब्धि भी कुसमायोजन के लिए उत्तरदायी रहती है। समस्याओं की जाँच व स्वास्थ्य शिक्षा का सुनियोजित कार्यक्रम तथा पिछड़े

बालको के लिए विशेप प्रयासा द्वारा छात्रा के समजन का ग्रच्छा वनान म सहायता की जा सकती है। ग्रभिरुचिया क्या हैं यह जानना तभी साथक हो सकता ह जवकि शिक्षा के माध्यम स ग्रभिरुचिया का विकसित करन का प्रयास किया जाए। शिक्षका का चाहिए कि ग्रध्यापन विधाग्रा स तथा पाठयेतर क्रियाग्रा के माध्यम से छात्रा म विभिन्न रुचिया का विकास करें। शोध निष्कर्षो म यह उल्लख मिलता है कि शाला पुस्तकालया की स्थिति सतोपजनक नहीं है। ग्रत इस ग्रोर शाला प्रशासका का ध्यान विशप रूप स जाना चाहिए। कुछ ग्रनुसधाना से ये निष्कप सामन ग्राए ह कि शाला म व घर पर छात्रा की ग्रध्ययन ग्रादतो की ग्रार ध्यान नहीं दिया जाता। ग्रध्ययन ग्रादतें शक्षिक सप्राप्ति का प्रभावित करती हैं। ग्रत शिक्षक ग्रौर ग्रभिभावक इस ग्रार ध्यान दें ता छात्रा को ग्रधिक लाभ हो सकेगा। गहकाय के भार एव ग्ररोचकता को घटान का प्रयास भी जरूरी है। सजनशील बालका न यह मत यक्त किया है कि गहकाय एव परीक्षाएँ उन्ह चुनौतीपूण नही लगती। ग्रत इन बालका की विशेप ग्रावश्यकताग्रा की ग्रार भी हमारा ध्यान जाना चाहिए।

सदर्भांकित अनुसधान

ग्रग्रवाल ग्रार के	An Investigation into the Reading Interests in Hindi among Adolescent Boys and Girls of Various Schools of Sardarshahr M Ed Raj Uni 1961
ग्रग्रवाल चन्द्रप्रकाश	A Study of the Superstitions of the Students of the Various Age Levels (11 plus to 15 plus) and the Measure of the Relationship between Superstitions Intelligence and Personality Adjustment of 200 Students of Bikaner Division M Ed Raj Uni 1962
ग्रग्रवाल, प्रेमचन्द्र	The Impact of Cinema on Adolescents M Ed Raj Uni 1960
ग्रवस्थी, रमेन्द्रप्रसाद	सुसमायोजित व कुसमायोजित किशोर छात्रा मे कुण्ठा की प्रतिक्रियाग्रो का रोजेन्जवीग तक्नीक के ग्राधार पर ग्रध्ययन, एम एड राज वि वि 1973
ग्राशादवी	An Investigation into Personal Problems of the Adolescent Girls in Relation to their Intelligence and Achievement M Ed Raj Uni 1967
ग्राय, एम क	A Study of Some Causes of Maladjustment of IX Class Students of Jodhpur M Ed Jodhpur Uni 1970
उपन्शकुमारी	A Comparative Study of Adjustment Problems and Independent Yielding Nature of High and Low Adolescent Original Thinkers M Ed Raj Uni 1970

आगरा स्वरूपचन्द	An Investigation into the Relationship of Personality Adjustment Problems with Intelligence and Age of the Delinquents of Barstal Jail Hissar M Ed Raj Uni 1960
औदिच्य निरजननाथ	Current Trends of Adolescent Interests A Comparison with the Trends of Adolescent Interests in U S A M Ed Udaipur Uni 1969
काबू चुन्नीलाल	Study Habits and Skills in Mathematics M Ed Udaipur Uni 1964
काबू मदनलाल	A Study of the Reading Interests of Secon dary School Teachers M Ed Raj Uni 1963
कावरा रामचन्द्र	प्रतिभाशाली छात्रा की पाठ्यक्रम सबधी समस्याएँ एम एड उदयपुर वि वि 1970
कौर स्वरूप	Parental Attitude as a Causative Factor of Maladjustment in Children M Ed Raj Uni 1959
कौर रवान्द्र	A Comparative Study of Behavioural Adjust ment of Boys and Girls Secondary Schools M Ed Raj Uni 1972
कौर श्यामाकुमारी	Selection Criteria for Admission of Students to the IX Class Science Course M Ed Udaipur Uni 1967
कौर सूरज	A Study of the Needs of Adolescents M Ed Raj Uni 1969
खुराणा कमलाकुमारी	Social Beliefs of a Group of Teachers and Pupils in a Higher Secondary School M Ed Raj Uni 1960
गुप्ता अशोककुमार	Backwardness in Reading Ability in English M Ed Raj Uni 1959
गुप्ता बृजमोहन	A Study of Gifted Children in Udaipur M Ed Udaipur Uni 1960
गुप्ता वन्दप्रकाश	किशोर किशोरियों मे व्याप्त समस्याओं क प्रति सतोष असतोष का एक अध्ययन एम एड राज वि वि 1972
गुप्ता त्रिलोकीनाथ	Reading Interests of Adolescent Boys and Girls of Class IX of Ajmer City, M Ed Raj Uni 1966
गुमास्ता ब्रजभूषण	Investigation into Personal Problems of Adolescent Boys Studying in the High Schools of Sardarshahr M Ed Raj Uni 1959
चडढा उषा	A Study of Self Concept in Relation to Intelli gence Adjustment and Socio Economic Status of the Students of Class X M Ed Raj Uni 1972

चारण, हरिदान	छात्रो की शक्षणिक एव व्यावसायिक योजनाएँ कक्षा 9 का एक सर्वेक्षण एम एड, राज वि वि 1968
चेतनस्वरूप	A Study of the Causes of Truancy in IX Class in Higher Secondary Schools of Jodhpur M Ed Jodhpur Uni 1970
चौधरी, चन्द्रकला	प्रथम वष स्नातक विद्यार्थियो के अनुत्तीण होने के कारणों का अध्ययन एम एड राज वि वि 1973
जागीड, रामलाल	जयपुर स्थित विद्यालयो की नवम कक्षा के छात्र एव छात्राओ की खेल सबधी अभिरुचियो का सर्वेक्षण, एम एड, राज वि वि, 1968
जुगलबिहारीलाल	Investigation into the Activities of Brilliant Children M Ed Raj Uni 1955
जन, शिवरचन्द	Causes of Social Non Acceptance and Some of its Correlates M Ed Raj Uni 1969
जाशी, विष्णुदत्त	निम्न सम्प्राप्ति वाले किशोर एव किशोरिया की रुचियों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1969
टण्डन रामलाल	A Comparative Study of Guidance Needs of IX Class Arts Commerce and Science Students M Ed Raj Uni 1969
टुटू दुर्गानाथ	Maladjustment among Adolescents M Ed Raj Uni 1957
डोगरा द्वारकानाथ	Study Habits and Skills of Science Students M Ed Raj Uni 1960
देव चन्द्रकान्ता	A Study of Reading Interests of XI Class Boys with special reference to its Relation with Intelligence and Socio Economic Status M Ed Udaipur Uni 1968
दासगुप्ता, मीरा	Backwardness and Study Habits in Girls M Ed Udaipur Uni 1966
द्विवदी, मजु	A Study of the Adjustment of Adolescent Students (Male & Female) of Uni sex and Co educational Schools M Ed Raj Uni 1974
दौलतराम	A Study of Social Acceptance of Delta Class Students of Churu District (Rajasthan) in Relation to their Intelligence Achievement Friendship Personality Adjustment Socio Economic Status and Participation in Group Activities M Ed Raj Uni 1964

परिहार, पृथ्वीसिंह	Adjustment Difficulties of College Students M Ed Raj Uni 1963
पांडे लक्ष्मी	विभिन्न कक्षाओं के स्तर पर लड़के एवं लड़कियों की आवश्यकताओं का एक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1968
पालीवाल अरुणा	पूर्व तरुणावस्था तरुणावस्था तथा उत्तर तरुणावस्था आयु समूह की छात्राओं की आवश्यकताओं तथा पढ़ने की रुचियों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1973
पाराक शान्ति	छात्र एवं छात्राओं के अनुकूलन पर अनाशाओं के प्रति प्रतिक्रियाओं का प्रभाव, एम एड, राज वि वि 1970
पुरोहित, चन्द्रभान	An Experimental Evaluation of Counselling M Ed Udaipur Uni 1973
पुरोहित लक्ष्मीनारायण	Sociometric Status Adjustment Problems of Altruistic Teachers M Ed Raj Uni 1974
बल गुरमिन्दर	परिवार के सबसे बड़े एवं सबसे छोटे बालक के समायोजन की समस्याएँ, एम एड, राज वि वि 1973
बलबीरसिंह	An Investigation into the Problems of Truancy among High School Boys of Sardarshahr M Ed Raj Uni 1959
बापना, चन्द्रप्रकाश	Mothers Employment and their Children s Aspirations and Achievement M Ed Udaipur Uni 1969
बारिया लालसिंह	Investigation into the Hobbies and Co curricular Activities of Class IX and X Boys in Churu District in relation to their Educational Vocational Choice and Guidance M Ed Raj Uni 1959
बाथरा महावीर	सरकारी एवं सरकार द्वारा अनुदान प्राप्त विद्यालयों की अष्टम श्रेणी के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का एक तुलनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1970
बारगांवकर शकुन्तला	A Survey of Intelligence of Nursery School Children in Udaipur M Ed Raj Uni 1960
भटनागर वा गन	Reading Difficulties of Class VI Students in Hindi M Ed Udaipur Uni 1966
भल्ला रणजीतसिंह	An Investigation to Evolve Selection Criteria for Admission to the D gree Course in Agriculture M Ed Raj Uni 1963

भवानीसिंह	Personality of Least and Most Anxious Adjustment of Students M Ed Raj Uni 1971
भागिया, सुषमा	A Study of School Adjustment of Pupils in Relation to Achievement Intelligence and Sex M Ed Jodhpur Uni 1970
भाटी, ओमप्रकाश	A Study of the Family Educational Social and Economic Background of Academically Brilliant Students, M Ed Raj Uni 1971
भागव, विमला	A Study of Vocational Aspirations of Adolescent Girls of Class X M Ed Udaipur Uni 1966
भोजक, बी एन	An Investigation into the Problem Tendencies of 576 Children (11+ to 14+) of Bikaner Division and the Measure of Correlation between Problem Tendencies Intelligence Achievement and other Related Factors M Ed Raj Uni 1961
महरोत्रा, पुष्पलता	छात्र एव छात्राओ की सामान्य एव तक बुद्धि का उनकी आवश्यकताओ से सम्बन्ध, एम एड राज वि वि 1970
महेशचन्द्र	Sociometric Status and Personal Problems of Adolescents An Exploratory Study M Ed Raj Uni 1966
माखीजा, मनोहरलाल	भूगोल मे अध्ययन आदतें एव कुशलताएँ दशम श्रेणी पर आधारित एक अध्ययन एम एड उदयपुर वि वि 1970
माथुर, चन्द्रप्रकाश	Effectiveness of Group Guidance in Developing Study Habits in Tenth Grade Students in English M Ed Udaipur Uni 1968
माथुर मिथिलेशकुमारी	Adjustment Problems of M Ed Students M Ed Udaipur Uni 1967
माथुर योगेश्वरदयाल	Underachievement Some Case Studies M Ed Raj Uni 1971
मीना सुशीला	Adjustment of Children from Migrated Families Some Case Studies M Ed Raj Uni 1974
मुशी मक्खनलाल	Students Health in Udaipur M Ed Raj Uni 1955
मुशी शान्ता	Reading Interests of Boys and Girls of VIII Class in Udaipur Schools M Ed Raj Uni 1958
मोहर्नासह	Adjustment Problems of College Students M Ed Raj Uni 1969

राठौड़ मनोहरसिंह	A Study of Intelligence Vocational Preference and Personal Adjustment of School Children Showing High Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 1962
[illegible]	Causes of Truancy in High Schools M Ed Raj Uni 1958
[illegible]	विद्यार्थियों के पारिवारिक जीवन में वर्तमान तनाव तथा समायोजन के सम्बन्ध का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1969
[illegible]	Study of Expressed Manifest and Tested Interests of the Delta Class Students M Ed Raj Uni 1959
राजपूत कुसुम	A Study of Harmony and Disharmony between Parents and their School going *Adolescent Daughters* M Ed Udaipur Uni 1965
राठौर सुमेरसिंह	An Investigation into the Reading Interests of Boys and Girls of Class IX in Jodhpur City Schools M Ed Jodhpur Uni 1970
[illegible]	Investigation into the Reading Interests of High School Students in Udaipur City Schools M Ed Raj Uni 1957
राय गुरुनारायण	A Comparative Study of Study Habits of the High Achievers and Low Achievers in Class VIII M Ed Raj Uni 19[illegible]
वर्मा बनवारीलाल	A Study of the Personality Problems Adjustment Traits and Vocational Interests of Super Normal School Children M Ed Raj Uni 19[illegible]
वर्मा चन्द्रप्रभा	व्यावसायिक महाविद्यालयों के छात्रों के कुसमायोजन का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1968
[illegible]	Backwardness in Arithmetic Diagnostic Study of Children of Class VI M Ed Raj Uni 19[illegible]
[illegible]	Problems of Home Adjustment of School going Adolescents with Different Socio Economic Background M Ed Raj Uni 19[illegible]
[illegible]	A Study of Home Adjustment of Home Science College Girls M Ed [illegible] 19[illegible]

शर्मा, कृष्णमुरारी	माध्यमिक स्तर पर अध्ययन करने वाले सवर्ण एव अनुसूचित व पिछड़ी जनजातियो के विद्यार्थियो की अध्ययन आदत तथा समायोजन समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
शर्मा कैलाशनाथ	An Experimental Investigation to Evaluate the Efficiency of Guidance Services in Secondary Schools M Ed Udaipur Uni 1965
शर्मा खेमाराम	An Investigation into the Guidance Needs of IX Class Students M Ed Raj Uni 1968
शर्मा दाऊलाल	ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों क शहरी विद्यालयों मे समायोजन की समस्याएँ एम एड उदयपुर वि वि 1970
शर्मा निहालसिंह	A Comparative Study of the Study Habits of X Class Boys and Girls M Ed Raj Uni 1967
शर्मा परमानन्द	Personal Adjustment of Degree Class Students M Ed Raj Uni 1959
शर्मा, बृजनारायण	A Study of Justice Principle of Students at Different Age Levels and the Relationship between the Justice Principle and other Related Factors, M Ed Raj Uni 1964
शर्मा, महावीरप्रसाद	A Comparative Study of the Study Habits of Tenth Class Science Commerce and Arts Students M Ed Raj Uni 1969
शर्मा महेन्द्रकुमार	अध्यापक प्रेरणा तथा उसका दक्षता से सम्बन्ध, एम एड, राज वि वि 1974
शर्मा मोतीलाल	Front Benchers and Back Benchers An Exploratory Study in Psychometry M Ed Raj Uni 1966
शर्मा, रतनलाल	Social Maladjustment Its Causes and Remedies M Ed Udaipur Uni 1964
शर्मा रमेशचन्द्र	The Leisure time Activities of the High School Students in Udaipur City M Ed Raj Uni 1954
शर्मा रामकृष्ण	Problem Tendencies of Adolescent M Ed Raj Uni 1968
शर्मा, रामदेव	तीव्र बुद्धि और निम्न बुद्धि के छात्रों की समायोजन समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1971

शर्मा राजेन्द्र कुमार	किशोर बालक व बालिकाओं की पढ़ाई व व्यवसाय से सम्बन्धित रुचियों का एक अध्ययन एम एड राज वि वि 1970
शर्मा श्री राम	Personal Problems of the Ist Year T D C Science Students M Ed Udaipur Uni 1966
शर्मा सुरेन्द्रकुमार	Case Studies of Merit Scholarship Holders M Ed Raj Uni 1973
स्वामी रघुवर	महाविद्यालय विद्यार्थियों की समायोजन की समस्याएँ एम एड राज वि वि 1973
सक्सेना रमाकान्त	An Investigation into the Causes of Truancy in Secondary/Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1966
साधू जयराम	A Study of Some Factors Related to Backwardness in Civics M Ed Jodhpur Uni 1970
[illegible]	किशोर छात्राओं की रुचि का विषयक अध्ययन-पंजाबी और राजस्थानी छात्राओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1973
सिसोदिया रामवीरसिंह	Socially Accepted and Rejected Children and their Adjustment Problems M Ed Raj Uni 1967
श्रीनारायण पारीक	An Investigation into the Reading Interests of High School Students of Sardarshahr and Suggestions for Improving them M Ed Raj Uni 1953
सुरेशकुमार	An Investigation to Explore and Evolve Tools for Educational Guidance M Ed Raj Uni 1958
सुखानिया मुरलीधर	Creativity Among Science and Arts Students A Study Based on Xth Class Science and Arts Students M Ed Udaipur Uni 1969
सूद आर सी	An Investigation into the Personal Problems Confronted in the School by the High School Students of Bikaner Division M Ed Raj Uni 1961
रूपावत कन्हैयालाल	Adjustment Problems of Bhil Students Studying in Secondary and Higher secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1967
हरगुर वनिता	कक्षा १० के विद्यार्थियों की निर्देशन की आवश्यकताओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि 1974

□

व्यावसायिक निर्देशन

□ सत्यप्रकाश शर्मा

प्रारम्भ म निर्देशन का ज म यावसायिक आवश्यकताओं क लिए ही हुआ। नवयुवकों को व्यावसायिक सूचना प्रदान करन तथा उपयुक्त व्यवसाय क चयन म सहायता दन के लिए व्यावसायिक निर्देशन केद्रों की स्थापना हुई। धीरे धीरे वे शक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन क द्रों के रूप म बदले। राजस्थान म इस क्षेत्र म प्रथम शिक्षानुसधान काय 1956 म ही हो चुका था।

शोधकर्ताओं न 1963 स 1969 तक व्यावसायिक निर्देशन सम्ब धी अध्ययनो पर अधिक ध्यान दिया है। 1963 से पूव तथा 1970 स 1974 तक इक्के-दुक्के अध्ययन ही हुए हैं। जिन विषयों पर अध्ययन स्नातकोत्तर स्तर पर हुए है उनम सर्वाधिक सख्या व्यावसायिक अभिरुचि, व्यवसाय चयन तथा पसन्द की है। व्यवसाय मान के अध्ययनो की सख्या उसके बाद है। बुद्धि तथा व्यावसायिक अभिरुचि व चयन क साथ सामाजिक आर्थिक स्तर, व्यक्तित्व समायोजन व उपलब्धि के सहसम्बन्ध विषयक अध्ययनों की सख्या उसके पश्चात आती है। अन्य विषयों पर भी एक एक दो दो अध्ययन हुए है।

व्यावसायिक अभिरुचि

व्यावसायिक अभिरुचि पर दलजीतसिंह (1956) ने उदयपुर क कक्षा नौ व दस क 300 विद्यार्थियों का लेकर अध्ययन किया। उनका निष्कर्ष था कि सर्वाधिक छात्रों की पसन्द अभियान्त्रिकी के लिए थी। उससे कम क्रमश चिकित्सा व्यापार तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्यों को पसन्द किया गया। हरिश्च द्र (1957) न दो महाविद्यालयो क 350 स्नातक कक्षा क विद्यार्थियों की व्यावसायिक अभिरुचि का अध्ययन किया जिसके अनुसार विद्यार्थियो न अभियान्त्रिकी को सर्वाधिक पसन्द किया। 72 प्रतिशत विद्यार्थियो ने सूचना तथा निर्देशन सेवा की आवश्यकता का अनुभव किया। नागपाल (1969) न चूरू जिले के किशोर विद्यार्थियो की व्यावसायिक रुचियो का अध्ययन किया और पाया कि विभिन्न सम्बन्धी व्यावसायिक अवसरो तथा चयन करने वाले विद्यार्थियो की तत्सम्बन्धी जानकारी सर्वोत्तम थी। यह भी देखा गया कि ये विद्यार्थी उनकी अभिरुचि के अनुसार निर्देशित नहीं थे और न ही उनको उपयोगी व्यावसायिक निर्देशन दिया गया था। जन (1963) न कक्षा नौ के विद्यार्थियो की व्यावसायिक पसन्द क

अध्ययन में पाया कि विद्यार्थी अपने अभिभावकों की सलाह से प्रभावित हुए पाए गए हैं। छात्रों के सामाजिक आर्थिक स्तर तथा व्यावसायिक रुचि में धनात्मक सहसम्बन्ध (Positive correlation) देखा गया तथा उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों ने निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक ऊँचा व्यावसायिक चयन किया। शर्मा (1965) ने पब्लिक स्कूल के 106 विद्यार्थियों तथा ग्रामीण विद्यालय के 108 विद्यार्थियों की व्यावसायिक अभिरुचि के तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की ([illegible]) [illegible] भिन्न अभिरुचियाँ थीं। इस अध्ययन में बुद्धि-लब्धि का व्यावसायिक अभिरुचि पर कोई वास्तविक प्रभाव नहीं देखा गया। [illegible] (1967) ने विभिन्न विद्यालयों के कक्षा 10 के 144 छात्रों व 96 छात्राओं की व्यावसायिक अभिरुचियों का अध्ययन करके देखा कि छात्रों ने सर्वाधिक वरीयता विज्ञान सम्बन्धी क्षेत्र को तथा सबसे कम समाज सेवा सम्बन्धी क्षेत्र को दी। विविध व्यवसाय तथा वाणिज्य-व्यवसाय उपेक्षित रहे। छात्रों व छात्राओं की व्यावसायिक रुचियों में भिन्नता पाई गई। अलग अलग स्तरों के छात्रों की रुचियाँ भी भिन्न भिन्न पाई गईं। अग्रवाल (1967) ने कक्षा आठ के 100 विद्यार्थियों की व्यावसायिक अभिरुचि को उनके अभिभावकों की आशाओं से तुलना करके देखा कि कक्षा (VIII) के विद्यार्थियों में व्यावसायिक अभिरुचि प्रकट करने की परिपक्वता नहीं थी। सबसे अधिक विद्यार्थियों ने अभियान्त्रिकी को प्रथम तथा चिकित्सा व्यवसाय को द्वितीय वरीयता दी। न्यूनतम पसन्द के कार्य रहे दर्जी का काम, मछली पालना व कृषि कार्य। अभिभावकों की अपने बच्चों के बारे में व्यवसाय सम्बन्धी आकांक्षाएँ अभियान्त्रिकी, चिकित्सा, प्रशासन व शिक्षण सम्बन्धी व्यवसायों के लिए पाई गईं। कुछ नौकरीपेशा अभिभावकों ने कृषि तथा निम्न स्तर कार्य [illegible] बच्चों के लिए भावी व्यवसाय की आकांक्षा रखी। माथुर (1968) ने जयपुर के विद्यालयों की कक्षा X की छात्राओं की व्यावसायिक अभिरुचि तथा उनकी भावी आकांक्षाओं के अध्ययन में बताया कि मानविकी वर्ग (Humanities) वाली छात्राओं का सामान्य व कला सम्बन्धी व्यवसायों में धनात्मक सहसम्बन्ध था। आक्रामक प्रवृत्ति (aggressiven ss) का कला तथा विविध कार्य के अतिरिक्त अन्य अभिरुचियों से अनुकूल सम्बन्ध देखा गया। विनम्रता (Modesty) का कला साहित्य समाज सेवा व सामान्य सम्बन्धी अभिरुचियों से सहसम्बन्ध देखा गया। [illegible] (1970) के अनुसार अधिकांश विद्यार्थियों की अभिरुचि उपलब्धि तथा योग्यता का उनकी पसन्द से मेल नहीं बैठा। अनेक ऐसे व्यवसाय जो विद्यार्थियों की जानकारी में थे उनकी ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। दर्जी के कार्य को अच्छे व्यवसाय की श्रेणी में उन्होंने नहीं लिया यद्यपि कम शिक्षितों के लिए यह कार्य अच्छी आय का व्यवसाय हो सकता है। व्यावसायिक निर्देशन का कार्य विद्यालयों में नगण्य पाया गया। कमला कुमारी (1973) ने किशोर छात्र एवं छात्राओं की व्यावसायिक रुचियों के अध्ययन में पाया कि कला वर्ग के छात्र व छात्राओं की रुचियाँ भिन्न थीं। विज्ञान वर्ग की छात्राओं की अपेक्षा विज्ञान वर्ग के छात्रों की वैज्ञानिक विषयों में अधिक रुचि थी। कला व विज्ञान वर्ग की छात्राओं की अपेक्षा उसी वर्ग के छात्रों की तकनीकी, प्रशासन तथा राष्ट्रीय सुरक्षा

सम्बन्धी व्यवसायों म अधिक रुचि देखी गई। कला वग का छात्राम्रा की अधिक रुचि ललित कलाम्रा म पाई गई।

व्यावसायिक म्रभिरुचि एव बुद्धि-स्तर

बुद्धि-स्तर तथा व्यावसायिक अभिरुचि म सहसम्बन्ध के अध्ययन भी किए गए हैं। उनम जिन्दल (1960) न अजमेर क छात्रा की व्यावसायिक रुचि तथा बुद्धि स्तर के अध्ययन म पाया कि मानविकी वग, वाणिज्य वग, कृषि वग तथा ललित कला वर्गों के लिए न्यूनतम बुद्धिलब्धि क्रमश 108, 104, 101 व 97 चाहिए। पसन्द के अनुसार वरीयता का क्रम यह था – पहला विज्ञान, फिर तकनीकी, फिर कृषि फिर वाणिज्य उसके बाद ललित कला तथा सबसे अन्त म मानविकी वग। कक्षा VIII क 5 प्रतिशत छात्र अपनी व्यावसायिक अभिरुचि नहीं बता सके। 20 प्रतिशत छात्रा की बुद्धिलब्धि 90 स कम थी। कुछ विद्यार्थियो न ऐसे वग का चयन किया जिसके लिए उनम आवश्यक मानसिक प्रखरता नही था। गुप्ता (1966) न चिकित्सा पाठ्यक्रम के 52 विद्यार्थियो (40 छात्र व 12 छात्राएँ) के इण्टरमीडिएट क प्राप्तांको और चिकित्सा पाठ्यक्रम म सफलता का सहसम्बन्ध जानन का प्रयत्न किया तथा निष्कर्ष निकाला कि दोनो म अनुकूल सम्बन्ध है। इस अध्ययन स यह भी स्पष्ट हुआ कि मात्र इण्टरमीडिएट परीक्षा के प्राप्तांक चिकित्सा पाठ्यक्रम की सफलता की भविष्यवाणी करने हेतु ठोस आधार नही बनत। उस पर अन्य पक्षो का भी प्रभाव पडता है।

व्यावसायिक म्रभिरुचि एव सामाजिक आर्थिक स्तर

व्यावसायिक निर्देशन म शक्षिक उपलब्धि एव बुद्धि का वास्तविक महत्व है तथा सामाजिक आर्थिक स्तर भी प्रभावी हो सकता है। इस सबध म चौहान (1967) न जयपुर व बनस्थली की छात्राम्रा के आर्थिक-सामाजिक स्तर, बुद्धि व शक्षिक उपलब्धि का सहसम्बन्ध जानन की चेष्टा की। उनके अध्ययन के अनुसार सामाजिक आर्थिक स्तर का व बुद्धि का व्यावसायिक चयन स वास्तविक (Significant) सहसम्बन्ध नही पाया गया और न ही बुद्धि व शक्षिक उपलब्धि का ही कोई ठोस सम्बन्ध व्यावसायिक पसन्दो के साथ देखा गया। उपाध्याय (1969) के अनुसार छात्राम्रा का आर्थिक सामाजिक स्तर उनकी व्यावसायिक अभिरुचि पर प्रभाव नहीं डालता तथा उच्च आर्थिक-सामाजिक स्तर के और निम्न आर्थिक सामाजिक स्तर के विद्यार्थियो की व्यावसायिक अभिरुचि म वास्तविक अन्तर नही पाया गया। भटनागर (1971) न मालूम किया कि सामान्य स उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर वाली लडकियो की पसन्द चिकित्सा व्यवसाय के लिए थी। यह भी देखा गया कि अभिभावको के सामाजिक आर्थिक स्तर तथा विद्यार्थियो की व्यावसायिक पसन्द म अनुकूल सहसम्बन्ध है तथा अभिभावको के व्यवसाय का विद्यार्थियो की व्यावसायिक अभिरुचि पर प्रभाव पडता है।

व्यवसाय मान

व्यावसायिक अभिरुचि तथा व्यवसाय मान क विषय म भी कुछ अध्ययन किए गए हैं। आर (1964) न विद्यालय के तथा महाविद्यालय के विद्यार्थियो क व्यावसायिक

चयन तथा उनके मूल्यों के अध्ययन में निम्न निकाला कि विद्यालय तथा महाविद्यालय के विद्यार्थियों के व्यवसाय चयन में भिन्नता पाई गई है। सामाजिक वर्ग में सम्बन्ध की मात्रा के आधार में दोनों समूहों में अन्तर पाया गया। उच्च माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों ने स्वतंत्र व्यावसायिक कार्य को अधिक महत्व दिया। सामान्य विद्यार्थियों का मत इसके विपरीत पाया गया। दोनों समूह व्यावसायिक चयन के मामले में सामान्य पाए गए और दोनों समूहों में चिकित्सा व्यवसाय के प्रति लगाव ज्यादा पाया गया। बायना (1966) ने माध्यमिक विद्यालय जाने वाले विद्यार्थियों के आधार पर पता लगाया कि उनका व्यावसायिक पसन्द का क्रम इस प्रकार था – चिकित्सा, इंजीनियरी, वैज्ञानिक क्षेत्र, शान्ति तथा रक्षा सम्बन्धी कार्य। इस समूह ने सबसे कम पसन्द किया मजदूर, मोची, इत्यादि। चिकित्सक, पुस्तकालयाध्यक्ष, नागरिक विकास अधिकारी के पदों को कार्यों को ज्यादा उपयुक्त नहीं माना। छात्रों व छात्राओं की पसन्द भिन्न थी। सक्सेना (1969) ने कि ग्रामीण जिले के विद्यार्थियों की व्यावसायिक अभिरुचि व व्यवसाय मान के सम्बन्धों के अध्ययन के आधार मालूम किया कि ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों के व्यावसायिक चयन समाज सेवा में सर्वोत्तम थे। दोनों क्षेत्रों के व्यक्तियों ने समान में सम्बन्धित प्रवृत्तियों में अपनी व्यावसायिक रुचि प्रकट की। विज्ञान वर्ग के छात्रों ने विज्ञान सम्बन्धी प्रवृत्तियों तथा कला वर्ग के छात्रों ने साहित्यिक व समान सम्बन्धी व्यवसायों में अपनी रुचि दिखाई। व्यावसायिक मूल्यों के अनुसार शहरी विद्यार्थियों ने सामाजिक कार्यों के प्रति अपना झुकाव दिखाया जबकि ग्रामीण विद्यार्थियों ने स्वतंत्र व्यवसाय तथा नेतागिरी के प्रति अपनी भावना दिखाई। त्यागी (1971) के अनुसार अधिकांश विद्यार्थियों ने जिलाधीश, इंजीनियर, चिकित्सक, प्राध्यापक तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता के कार्यों के प्रति अपना पसन्द बताई। अध्यापक, पत्रकार, साहित्यिक, पुलिस, रेडियो, मजिस्ट्रेट तथा टाइपिस्ट के कार्य उन्हें कम पसन्द आए तथा दिहाड़ी, बुनकर, बागवान व मिस्त्री इत्यादि कार्य के काम बिल्कुल पसन्द नहीं किए गए।

व्यावसायिक चयन एवं व्यक्तित्व

अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी विद्यार्थियों के व्यावसायिक चयन एवं वरीयताओं का अध्ययन जैन (1968) ने जोधपुर के विद्यार्थियों पर किया। उनका निष्कर्ष था कि व्यावसायिक छात्रों में से ज्यादातर पुरुष अन्तर्मुखी थे और न ही पुरुष बहिर्मुखी। दोनों समूहों के व्यावसायिक चयन या पसन्द में कोई वास्तविक अन्तर नहीं पाया गया। दुर्गाप्रसाद शर्मा (1969) ने विद्यार्थियों की व्यावसायिक अभिरुचि तथा उनके व्यक्तित्व के विभिन्न अंगों का अध्ययन करके बताया कि कुण्ठाग्रस्त स्थिति में विद्यार्थी स्वयं को रक्षा का भाव सर्वाधिक रखते हैं। उन्होंने आक्रामक मानसिक स्थिति में बाह्य प्रतिक्रमण का भाव पाया। अधिकांश विद्यार्थियों में व्यावहारिक व साहित्यिक क्षेत्रों के लिए रुचि रखी गई। साहित्यिक रुचि वाले विद्यार्थी कुण्ठाग्रस्त अवस्था में स्वयं को दोष न देकर बाह्य वातावरण या अन्य व्यक्तियों को इस स्थिति का दोषी बताते हुए देखा गया।

विविध

व्यावसायिक अभिरुचि तथा पाठ्येतर प्रवृत्तिया, बुद्धिलब्धि व उपलब्धि के सबधा को जानने हेतु जो अध्ययन किए गए हैं उनम भ वर सिंह (1963) न इस क्रम मे अजमेर जिले के छात्रा पर अध्ययन करके निष्कर्ष निकाला कि विद्यार्थिया की रुचि के व्यावसायिक क्षेत्र समाज सेवा, सगणक काय, सगीत, लिपिक काय, वज्ञानिक काय, कला, साहित्य तथा यान्त्रिकी थे। छात्र तथा छात्राओ के प्रमुख रुचि वाल व्यवसायो म 52 का सहसम्बन्ध दखा गया परन्तु 40 प्रतिशत से अधिक विद्यार्थिया के वकल्पिक विषया का चयन सही आधार पर नही किया गया था, यह भी अध्ययन से पता चला। उदयपुर के विद्यार्थिया पर किए गए एसे ही एक अध्ययन म दवे (1968) ने देखा कि 58 प्रतिशत विद्यार्थी अपनी रुचि के व्यावसायिक क्षेत्र को स्पष्टत व्यक्त करने म समथ नहीं थे, फिर भी बहुत से विद्यार्थी गणित तथा विज्ञान क क्षेत्रा म रुचि रखते थ।

खोसला (1966) न नर्सों के प्रशिक्षण हतु प्रवेशाथ चयन नियमा का अध्ययन करक देखा कि मट्रिक परीक्षा के प्राप्ताका तथा व्यावहारिक परीक्षा के प्राप्ताका म सीधा सहसम्बन्ध न्यून है। इस अध्ययन म डी ए टी परीक्षा तथा व्यावहारिक परीक्षा के प्राप्ताका म भी न्यून सहसम्बन्ध पाया गया। सामाजिकता तथा सद्धान्तिक परीक्षा के प्राप्ताका म भी न्यून सहसम्बन्ध पाया गया।

अध्यापन व्यवसाय के लिए चयन हेतु प्रेरक तत्त्वा क अध्ययन म मनमोहन कौर (1968) न देखा कि आकषक धधा के चयन के लिए प्रेरक तत्त्वा म उच्च आर्थिक-सामाजिक स्तर अधिक प्रभावी नही है। परन्तु ज्या-ज्या प्रबुद्धता का स्तरोन्नयन हाता है अध्यापन व्यवसाय के प्रति आकषण कम होता पाया गया है।

जोशी (1960) ने बीकानेर सम्भाग के शक्षिक एव व्यावसायिक निर्देशन कायक्रम से सम्बधित कुछ पक्षा का अध्ययन किया जिसके अनुसार विभिन्न स्रोता मे प्राप्त सुझावा का छात्रा की व्यावसायिक अभिरुचि पर प्रभाव पडता है। अध्यापका के प्रति छात्रा की पसन्द नापसन्द के अनुसार छात्रो की विद्यालय के प्रति भी अनुकूल या प्रतिकूल अभिवृत्ति बनती है।

आहूजा (1963) ने लिपिक वग की अभिवृत्ति स सम्बधित पक्षा का लिपिका पर अध्ययन करके निष्कर्ष निकाला कि उनकी बुद्धिलब्धि का औसत 95 86 है। लिपिक का काय अपनाने हेतु जा मुख्य कारण उत्तरदायी पाए गए थे वे विपरीत परिस्थिति तथा अन्य काय न मिलने पर जा मिले उस स्वीकार करना' थे।

टाक (1965) ने व्यावसायिक सूचना कायक्रम का कक्षा VIII के विद्यार्थिया की अभिरुचि तथा चयन पर प्रभाव का प्रायोगिक अध्ययन किया जिसके अनुसार प्रायोगिक समूह के छात्रा ने नियत्रित समूह के छात्रा की अपक्षा आरभ स अन्त तक अपने व्यावसायिक चयन क निणय म अधिक परिवतन किए। यह भी दखा गया कि प्रायोगिक समूह न अतिम चरण म अनक नये चयन किए तथा पुराने चयन का

छात्र किया जबकि नियन्त्रित समूह ने कुशल चयन का। दूसरे छात्रों ने शायद ही सही चयन किया।

गोधा (1969) ने शिक्षक प्रशिक्षण के छात्रों तथा पूर्व आयुर्वेदिक छात्रों की अपने व्यवसाय के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन किया जिसके अनुसार दोनों समूहों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर पाया गया। दोनों समूहों की बुद्धिलब्धि में भी उनके आर्थिक सामाजिक स्तर व व्यक्तित्व की तुलना में कम अन्तर पाया गया।

रचनात्मक चिन्तन तथा व्यावसायिक अभिरुचि का अध्ययन राजपाल (1967) ने मिडिल स्कूलों के 11 से 16 आयुवर्ग के छात्रों पर किया। उनका जो निष्कर्ष निकाला उसमें बुद्धि का रचनात्मक चिन्तन पर अवास्तविक प्रभाव देखा गया। विद्यालय के प्राप्तांकों तथा रचनात्मक चिन्तन में साधारण सहसम्बन्ध भी देखा गया परन्तु वह मामूली था। अपनी व्यावसायिक रुचि दर्शाते समय इन छात्रों ने शायद ही रचनात्मक चिन्तन किया था। इन छात्रों की व्यावसायिक रुचि तथा रचनात्मक चिन्तन की सम्प्राप्ति में सीधा सहसम्बन्ध नहीं देखा गया।

मेठी (1970) ने माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की कार्य-सन्तुष्टि तथा उनकी कार्यकुशलता का अध्ययन किया। उनके अध्ययन का निष्कर्ष था कि अधिकांश अध्यापक सन्तोष की मात्रा से नीचे थे। उनका असन्तोष मुख्यतः आर्थिक कारणों से था यद्यपि सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सन्तोष पाया गया। कार्यकुशलता अधिकांश अध्यापकों में सामान्य से निम्न स्तर की पाई गई एवं सहायता प्राप्त संस्थाओं के अध्यापकों को राजकीय संस्थाओं के अध्यापकों की अपेक्षा अधिक कार्यकुशल पाया गया परन्तु राजकीय एवं सहायता प्राप्त संस्थाओं की महिला अध्यापिकाओं की कार्यकुशलता में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

सवजीतकौर (1974) ने दिल्ली में नियोजन के अवसरों का अध्ययन किया तथा अध्ययन से मुख्य निष्कर्ष निकाले कि 1961 से 1971 तक प्रत्याशियों की सर्वाधिक पंजीकरण की प्रवृत्ति शिक्षित व्यवसायहीनता की देखी गई। उसके बाद अकुशल श्रमिकों के पंजीकरण की प्रवृत्ति पाई गई। सबसे कम पंजीकरण [illegible] तथा [illegible] श्रमिकों का देखा गया। 1961 से 1967 तक पंजीकरण बढ़ोतरी की ओर था तथा 1967 के पश्चात 1972 तक पंजीकरण का रुख घटने की ओर था।

सम्भावनाएँ एवं सुझाव

व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र में जो अध्ययन या शोध-कार्य राजस्थान में हुए हैं उनमें विद्यार्थियों की वर्तमान तथा भविष्य की आवश्यकताओं को देखते हुए व्यावसायिक निर्देशन सम्बन्धी शोध-कार्य करने के लिए अभी भी अनेक क्षेत्र अछूते पड़े हैं तथा अनेकों ऐसे हैं जिन पर इक्के दुक्के ही कार्य हुए हैं। भविष्य में शोध कार्य हेतु विषय का चयन करने से पूर्व यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि ऐसे विषयों का चयन हो जो विद्यार्थियों की वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हो

तथा उनकी कठिनाइयो व समस्याओ के समाधान मे भी सहायक सिद्ध हो। इसका भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जो आवश्यकताएँ समाप्त हो चुकी हो उन पर अध्ययन लाभकारी नही होगा। अत विषय का चयन उनकी आवश्यकता व उपयोगिता को ध्यान म रखकर सावधानी मे होना चाहिए।

व्यावसायिक निर्देशन व व्यावसायिक चयन सम्ब धी अध्ययन तो अनेक हुए हैं, परन्तु किसी भी अध्ययन से यह स्पष्ट नहा हुआ कि अमुक विद्यालय म व्यावसायिक चयन या अभिरुचि को दिशा देने की भी कोई व्यवस्था है या नही। सही चयन तो तब हो सकता है जबकि विद्यालयो म विस्तृत व्यावसायिक सूचनाएँ देने की समुचित योजना व व्यवस्था हो। व्यावसायिक निर्देशन की व्यवस्था की स्थिति जानने के लिए मात्र एक अध्ययन हुआ है जो अपर्याप्त है। इस दिशा म अधिक विस्तृत जानकारी व प्रयत्नो की बडी आवश्यकता है। अध्ययनो के जो निष्कर्ष निकाले गए है उनम मे कुछ साधारणतया स्पष्ट नही है, कुछ साख्यिकी भाषा म बताए गए हैं जिन्हे विशिष्ट व्यक्ति ही समझ सकते है साधारण व्यक्ति नही। अध्ययन के परिणाम ऐसी भाषा म भी व्यक्त किए जाने चाहिए जो साधारण व्यक्ति की समझ से परे न हो। मानव शक्ति आयोजन के काय का विभिन्न स्तरो पर वरीयता के साथ प्रभावी ढग से चलाने की आवश्यकता है जिससे कि व्यावसायिक निर्देशन व चयन सही तथा उपयोगी बन सकें।

व्यावसायिक निर्देशन सम्बन्धी जो क्षेत्र या विषय अध्ययनो से अछूते रह गए हैं या जिन पर काय न्यून हुआ है तथा जिन पर और अधिक अध्ययनो, शोध कार्यों सर्वेक्षणो की आवश्यकता है तथा जिनके परिणाम निस्सन्देह उपयोगी होग वे इस प्रकार से होंगे –

- महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो की व्यावसायिक रुचि और चयन,
- विद्यालयो महाविद्यालयो विश्वविद्यालयो म व्यावसायिक निर्देशन कायक्रमो की स्थिति तथा प्रभावशीलता
- *व्यावसायिक निर्देशन कायक्रमो म अध्यापको प्रधानाध्यापको प्राचार्यों की* रुचि व क्रियाशीलता,
- व्यावसायिक सूचना केन्द्रो निर्देशन केन्द्रो नियोजन कार्यालयो के सर्वेक्षण,
- उच्च स्तरीय, निम्न स्तरीय (प्रभावहीन) व्यावसायिक निर्देशन-सेवाओ का तुलनात्मक अध्ययन,
- शिक्षाधिकारियो म निर्देशन कायक्रमो के प्रति जागरूकता,
- शिक्षा विभाग, राजस्थान द्वारा निर्देशन कायक्रमो को प्रभावी बनाने हेतु किए गए प्रयत्नो व अध्ययन/सर्वेक्षण,
- निर्देशन कायक्रम की आवश्यकताओ व न्यूनताओ का अध्ययन,

- विभिन्न व्यवसाया व धन्धा क विश्लेषण
- व्यावसायिक निर्देशन व नियोजन क अवसर
- व्यावसायिक रुचि व्यावसायिक चयन व वास्तविक नियोजन की तुलना
- वास्तव मान तथा न्यूनतम मान रोजगारों क तुलनात्मक अध्ययन ।

सदर्भाकित अनुसधान

अग्रवाल श्यामसुन्दर	Vocational Interests of the VIII Class Students as Compared with Vocational Aspirations of their Parents M Ed Udaipur Uni 1967
आन्जा ज्ञानचन्द	A Study into the Relationship of some Correlates to Clerical Aptitude of Clerks of D lhi with a view to Improve the Methods of S-lection and Guidance of Prospective Entrants M Ed Raj Uni 1963
उपाध्याय लक्ष्मी	कक्षा दस क छात्र एव छात्राओं क सामाजिक आर्थिक स्तर का उनकी व्यावसायिक रुचियों स सहसबध ज्ञात करना एम एड राज वि वि, 1969
कमलाकुमारी	किशोर छात्र एव छात्राओं की व्यावसायिक रुचियों का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1973
क्यामला करुणा	A Study of the Selection Criteria for Admission to the Training of Nurses M Ed Raj Uni 1966
गग श्यामकृष्ण	A Study of N C C Cadets and their Vocational Preferences M Ed Raj Uni 1966
गाधी जौहरीलाल	A Comparative Study of Attitudes of S T C and Pre Ayurved Students towards the Profession M Ed Raj Uni 1969
गुप्ता ज्ञानप्रकाश	Interm diate Marks as the Predictors of Medical Success M Ed Raj Uni 1966
चारण नरसिंह	छात्रों की शैक्षिक एव व्यावसायिक योजनाएँ कक्षा नौ का एक सर्वेक्षण, एम एड राज वि वि, 1968

चौहान, पुष्पलता
An Investigation into the Relationship of Socio Economic Status Intelligence and Academic Achievement of Class X Girls with their Vocational Preference
M Ed Raj Uni 1967

जिन्दल, जोगिन्दरपाल
An Investigation into Correlation between Intelligence and Vocational Interest of Delta Class Students of Multipurpose Higher Secondary Schools
M Ed Raj Uni 1960

जैन कृष्णचन्द्रसिंह
Vocational Choices of Ninth Grade Students
M Ed Raj Uni 1963

जैन सज्जनराज
अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी छात्रों के व्यावसायिक चयन एवं प्राथमिकताएँ,
एम एड, राज वि वि 1968

जोशी रूपलाल
An Investigations into some Related Factors of Vocational And Educational Guidance of Multipurpose Schools of Bikaner Division
M Ed Raj Uni 1960

भंवरसिंह
A Study of Vocational Interests of XI Class Students of M P Hr Sec Schools of Ajmer District in Relation to their Vocational and Curricular Choices I Q Achievement Co Curricular Leisure time Activities and other Related Factors
M Ed Raj Uni 1963

टाक, सुलेमान
Influence of Career Instructional Programme on the Vocational Choices and Attitude of Delta Class Students
M Ed Raj Uni 1965

दलजीतसिंह
Vocational Interests of High School Boys,
M Ed Raj Uni 1956

देव वासुदेव जी
Vocational Interests and A vocational Activities
M Ed Udaipur Uni 1968

नागपाल भगतराम
An Investigation into the Vocational Interests of High School Boys of Churu District Rajasthan and Need for Reorientation of Educational Programme
M Ed Raj Uni 1959

बरार, प्रीतमसिंह
Vocational Choices And Values of Adolescents
M Ed Udaipur Uni 1964

बायती, जमनालाल
An Exploratory Study of Vocational Preference Job Values and Occupational Choices of Secondary School Leavers
M Ed Raj Uni 1966

भटनागर कमला	प्राइमरी कक्षा के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रुचि एवं उनके अभिभावकों के आर्थिक सामाजिक स्तर के सम्बन्ध का अध्ययन एम एड राज वि वि 1971
मनमोहनकौर	A Study of the Motivating Factors for the S lection of Teaching Profession by the Teachers M Ed Raj Uni 19?3
महात्मा चन्दमल	An Investigation into the Vocational Interests of Class X Students M Ed Raj Uni 1967
माथुर प्रभाकुमारी	An Investigation into the Relationship between the Aspiration and Vocational Interests of the Girls Stud nts of Class X M Ed Raj Uni 19?8
मेहता सत्यनारायण	माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की काम सन्तुष्टि एवं दक्षता एम एड उदयपुर वि वि 1970
मेहता सुशीला	A Study of Vocational Interests of IX Class Boys in th City of Jodhpur M Ed Jodhpur Uni 1970
यादव मनोहरसिंह	A Study of Intelligence Vocational Preferen e and Personal Adjustment of School Children showing High Scholastic Achievement M Ed Raj Uni 19?2
राजकुमार	An Investigation into the Superior Achievers in Science of Class IX of Rajasthan and their Vocational Preferences M Ed Raj Uni 1965
राठौड़ मनोहरनाथ	An Investigation into the Creative Thinking and the Vocational Interests of the Delta Class in Rajasthan M Ed Raj Uni 1967
वर्मा वनारसीदास	A Study of the Personality Problems Adjustment Traits and Vocational Interests of Super Normal School Children M Ed., Raj Uni 1964
वाजपेयी कमलेश्वरी	A Follow up Study of Educational and Vocational Placement of Middle School Leavers M Ed Udaipur Uni 1967
व्यास कृष्णगोपाल	A Survey of Vocational Selection Vocational Liking and Work Values of the Students of Higher S condary Schools of Bikaner M Ed Raj Uni 1971
	A Study of the Placement of Higher Secondary Pass d Agriculture Students M Ed Raj Uni 1969

शर्मा, गणपतिराम	A Comparative Study of Vocational Interests of the Public School Students and Residential School Students M Ed Raj Uni 1965
शर्मा, दुर्गाप्रसाद	किशोरो मे व्यावसायिक रुचियो और उनके व्यक्तित्व तत्वो का अध्ययन एम एड राज वि वि, 1969
सक्सेना, सरोज	अजमेर जिले के उच्च माध्यमिक विद्यालयो के छात्रो द्वारा सभावित व्यावसायिक मूल्य एव रुचियो के मध्य सबध का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1969
सवजीतकौर	A Study of the Employment Opportunities in Delhi M Ed Raj Uni 1974
हरिश्चन्द्र	Vocational Interests of Under graduates M Ed Raj Uni 1957



शिक्षक-प्रशिक्षण

□ डा. मुक्तराज घिलाना
□ प्रकाशचन्द्र द्विवेदी

किसी भी शिक्षा कार्यक्रम के क्रियान्वयन और सम्पादन में शिक्षक की केन्द्रीय भूमिका होने के कारण शिक्षक प्रशिक्षण का महत्त्व भी विशेष होता है। इस क्षेत्र में अनुसंधान कार्य के प्रथम दर्शन 1957 में होते हैं। तब से इक्के दुक्के अध्ययन सन् 1964 तक होते रहे मगर अकस्मात ही सन् 1965 में इन अध्ययनों में 6 गुना वृद्धि हो गई और तब से न्यूनाधिक रूप में निरंतर वृद्धि होती हुई सन् 1974 में वह सन् 1957 की तुलना में 12 गुनी हो गई। इन अध्ययनों में शिक्षक प्रशिक्षण के जो आयाम उभरे हैं वे हैं शिक्षक प्रशिक्षण का विकास, प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के प्रकार, प्रशिक्षण में प्रवेश प्रक्रिया, शिक्षण अभ्यास, प्रबन्ध और प्रशासन, तुलनात्मक अध्ययन तथा सेवारत प्रशिक्षण।

शिक्षक प्रशिक्षण का विकास

अम्बिकाप्रसाद शर्मा (1972) ने पांच डाक्टर स्तर पर विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का समानान्तर अध्ययन करके ज्ञात किया कि शिक्षक प्रशिक्षण में नामांकन निरन्तर बढ़ रहा था। निजी संस्थाओं की संख्या में क्रमिक वृद्धि होती रही मगर इनमें शासन सुविधाओं की स्थिति सुदृढ़ नहीं रही थी। संख्यात्मक विकास के साथ यह भी पाया गया कि उस पर विदेशी प्रभाव बहुत ज्यादा था और पाठ्यचर्या में परिवर्तन भी बारम्बार होते रहे थे। अपव्यय और अवरोधन प्रायः नहीं था किन्तु प्रशिक्षणार्थियों की संख्या व्यवसाय की मांग से परे बढ़ने लगी थी। इसी प्रसंग में बाहुरा (1971) ने मालूम किया कि प्रायमिक शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में शाला विद्यालय हो स्वतन्त्रता पूर्व काल के थे और शेष नौ बाद में विकसित हुए थे। विकासात्मक धरातल पर अपने पांच डाक्टर अध्ययन में जोशी (1973) ने प्रशिक्षण संस्थाओं में अन्य तीन दशकों की तुलना में नवाचार का अध्ययन करके मालूम किया कि सूक्ष्म सत्र (ओपन एयर सेशन) का प्रयोग केवल एक ही संस्था में हो रहा था, जबकि सामूहिक अभ्यास पाठ (ब्लाक प्रैक्टिस टीचिंग) का प्रयोग 50% संस्थाओं में था। बसंतकुमार जैन (1971) ने विद्याभवन में सूक्ष्म सत्र की प्रणाली का मूल्यांकन करके ज्ञात किया कि इसमें कम्प फायर, मौन काल और स्वशासन की प्रवृत्तियाँ अधिक पसन्द की जाती थीं।

प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के प्रकार

शिक्षक प्रशिक्षण के नियमित और अवकाशकालीन पाठ्यक्रम के रूपों पर जो अध्ययन हुए हैं उनमें मार्गरेट माथुर (1970) के अनुसार शिक्षक अवकाशकालीन

प्रशिक्षण म असुविधा अनुभव करत थे, उन्हें छात्रावासा म अतेवासी बनाकर रखे जान म आपत्ति थी, अलग अलग सत्रा म अलग अलग प्रशिक्षक पढाएँ, इस पर आपत्ति थी और वे सद्धान्तिक चचा को शिक्षण-व्यवसाय के लिए अनुपयोगी मानते थे। उनम अध्ययन आदता का नया विकास नही हो पाया, तथापि वह अवश्य दखा गया कि वे प्रशिक्षार्थी छात्रा और प्रशिक्षका के साथ अच्छे स्तर के स्नेह सम्बन्ध उपजा लेते थे। सह शक्षिक प्रवृत्तिया म उनकी अच्छी रुचि विकसित होती थी और आतरिक मूल्याकन को वे पसन्द करते थे। उ होने यह स्वीकार किया कि प्रशिक्षण के व्यय का उन्ह समुचित लाभ मिल जाता था। कुमुद शमा (1974) ने नियमित और अवकाशकालीन प्रशिक्षार्थिया के तुलनात्मक अध्ययन से यह मालूम किया कि नियमित प्रशिक्षार्थिया म स 85% तक बिना किसी पूर्वानुभव के होते थे और उनके परिणाम भी अवकाश कालीना की तुलना म निम्नतर होत थे। अवकाशकालीन प्रशिक्षार्थी अधिकतर 8–15 वष के सेवा अनुभव वाल होते थे। यद्यपि उन्ह प्रशिक्षण कायक्रमा म सकारात्मक रुचि और उत्साह नही होता था मगर उनके परिणाम अपक्षाकृत अच्छे रहत थ। व प्रशिक्षण काल म आर्थिक और पारिवारिक चिताओ मे ग्रस्त भी रहते थ। लगभग यही तथ्य पारीक (1972) ने प्राथमिक प्रशिक्षणाधीन पत्राचारी प्रशिक्षार्थिया के प्रसग म ज्ञात किए। अतिरिक्त तथ्य यह विदित हुआ कि सदभ सामग्री की उपेक्षा दोना ही वर्गो म समान थी मगर सवारत प्रशिक्षार्थी अपना निर्दिष्ट गहकाय अपेक्षाकृत जल्दी और समय पर कर लेते थ। प्राथमिक प्रशिक्षण के स दभ म शिवकुमार शर्मा (1966) न यह भी निष्कष निकाला कि एक वर्षीय पाठ्यचर्या पर्याप्त नही थी।

प्रवेश प्रक्रिया

शिक्षण-व्यवसाय की प्राथमिक आवश्यकताओ की अपेक्षा से प्रवशार्थी के व्यक्तित्व भावनात्मक स्थिरता अकादमिक योग्यता और अनुकूलन की अभिवत्ति का खास महत्व है। दीक्षित (1965) ने शिक्षक क कत्तव्य का अध्ययन करके बताया है कि उसके कुछ महत्वपूर्ण काय हैं शक्षिक उद्देश्या की जानकारी रखना श्यामपट्ट का कुशल उपयोग शिक्षण को रुचिकारक बनाना, गहकाय निर्दिष्ट करना, अध्ययन आदता का विकास करना उपचारात्मक कायक्रम चलाना सहशक्षिक प्रवत्तियाँ आयोजित करना और सौन्दयवत्ति जगाना। अग्रवाल (1974) न मालूम किया कि शिक्षणगत कुशलता पर बुद्धिलब्धि, अनुकूल अभिवत्ति और सामाजिक मा यताओ का अनुकूल प्रभाव पडता है। आर्थिक राजनतिक और धार्मिक मूल्य/मान्यताओ का शिक्षणगत कुशलताओ पर सीधा पभाव नही पडता। प्रवेश प्रक्रिया म इन मुद्दा पर विचार हो सकता है। उधर चौहान (1971) बताते हैं कि आयु स्तर की वद्धि क साथ शिक्षण-कौशल म धनात्मक वद्धि दखी गई है। अरोडा (1970) न शिक्षण कौशल के निर्धारका की खोज करके यह मालूम किया कि बुद्धिलब्धि का शिक्षण कौशल पर कोई साथक असर नही है यद्यपि 01 स्तर पर कौशल का यह एक निर्धारक तत्त्व जरूर है। इसकी अपक्षा अभिव्यक्ति क्षमता अधिक साथक घटक है। हरग (1973) विज्ञान शिक्षका के लिए अकादमिक योग्यता निरूपण क्षमता, व्यक्तित्व सौष्ठव और प्रश्नगत चतुराई को आवश्यक निर्धारक बताती

है। वे यह भी बताते हैं कि लिंग भेद से शिक्षण कुशलता में अन्तर पाया जाता है मगर स्त्रियों भेद में कोई अन्तर नहीं होता। नवाननम माथिस ने पत्नी में और स्त्रियों जानकारी रखने में ज्यादा स्नातकोत्तर पाया है। शर्मा (1972) ने प्रशिक्षार्थियों के ग्राम प्रत्यय और उनकी सम्प्राप्ति ग्रामीण/शहरी का सहसम्बन्ध ज्ञात कर पता लगाया कि दोनों में धनात्मक सम्बन्ध था। व्यास (1967) के अनुसार 58% प्रशिक्षार्थी केवल आर्थिक लाभ को लक्ष्य लेकर शिक्षक प्रशिक्षण में आते हैं और यदि उन्हें अन्तर मौका मिले तो वे इस व्यवसाय का परित्याग भी करने को उद्यत हैं। मेहता (1970) ने विभिन्न संस्थाओं की स्थिति का विश्लेषण करके पता लगाया कि क्षत्रीय शिक्षा महाविद्यालय में अपेक्षाकृत उच्चतर शैक्षणिक सम्प्राप्ति के प्रशिक्षार्थी आकृष्ट होते हैं उनमें 53 39% मतानुसार युक्त थे। राठौर (1974) बताते हैं कि नगर क्षेत्र की महिला प्रशिक्षार्थियों में शिक्षण व्यवसाय के प्रति अधिक सकारात्मक रुझान रहता है। मनमोहनकौर (1968) ने शिक्षण व्यवसाय के उपक्रमों का अध्ययन करके यह मालूम किया कि बौद्धिक उन्नयन के साथ-साथ शिक्षण व्यवस्था के प्रति आकर्षण निरन्तर घटता जाता है। ल्यूर तिवारी (1964) बताते हैं कि प्रशिक्षण में प्रवेश के लिए शैक्षणिक योग्यता जीवन चरित्र के तथ्य बुद्धि परख और साक्षात्कार को आधार बनाया जाए तो इधर पड्या (1973) के अनुसार शैक्षणिक सम्प्राप्ति प्रशिक्षण के अंक और मतानुभव में परस्पर कोई धनात्मक सहसम्बन्ध नहीं है। इस प्रसंग में शर्मा (1962) ने पुनः यह मालूम किया कि शिक्षण योग्यता का सहसम्बन्ध बुद्धिलब्धि शिक्षण अभिवृत्ति व्यक्तित्व समायोजन और शैक्षणिक उपलब्धि के साथ क्रमशः 64 78 55 और 55 है। प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण में नामांकन पर आर्थिक घटकों का असुविधा का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है यह तथ्य श्रीमाली (1969) ने अपने अध्ययन से निकाला है। जब एक टी सी में नई फीसें लागू की गई और 25/– मासिक की प्रशिक्षण वृत्ति दी गई तो प्रवेश-संख्या घट गई थी। इस सम्बन्ध में मेहता (1965) ने मालूम किया था कि प्राथमिक प्रशिक्षण संस्थाओं में जिन के हो प्रशिक्षार्थी 70% तक नान थे। उनमें से 60% ग्रामीण क्षेत्र के होते थे 90% माध्यमिक/उच्च माध्यमिक के ही उत्तीर्ण होते थे और 3% ग्रेजुएट्स। सरकारी और निजी संस्थाओं में फीस सम्बन्धी अन्तर व्यापक थे यह तथ्य शर्मा (1971) ने मात्र निकाला। उन्होंने यह भी मालूम किया कि कुछ ही प्रशिक्षार्थियों को मासिक वृत्ति प्राप्त थी।

शिक्षण अभ्यास

शिक्षक प्रशिक्षण की प्रभावकारिता की कसौटी है – शिक्षण अभ्यास की योजना और उसका क्रियान्वयन। इसी के अन्तर्गत प्रशिक्षार्थी की आवश्यकतायें कुण्ठायें और संभावनायें मुखर होती हैं। मायाराम शर्मा (1974) ने पता लगाया कि शिक्षण अभ्यास क्रम के स्वरूप प्रायः संचालकों परस्पर प्रतिकूल और जटिल होते थे। न प्राध्यापक उन्हें समझ पाते थे न प्रशिक्षार्थी। प्रशिक्षार्थी शिक्षण-अभ्यास की व्यावहारिक उपयोगिता के बारे में आश्वस्त नहीं थे। धनवन्त शर्मा (1967) बताते हैं कि पाठ निर्माण और आयोजना शिक्षण अभ्यास में विभिन्न प्रशिक्षित रहा होते न हो

शिक्षण अभ्यास क्रम परिवर्तनशील शिक्षा सबधो का अनुकरण करता था। वली (1966) का निष्कर्ष था कि शिक्षण अभ्यास म शिक्षक प्रशिक्षक के व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, उसे मानवीय सबधो का ज्ञान होना अपेक्षित है। शिक्षण-अभ्यास म प्रधानाध्यापक सहयोग नहीं करते सहकार्य अपेक्षित रह जाता था और प्रशिक्षार्थी शक्षिक प्रयासो की अपेक्षा प्राख्याता के अनुरजन पर अधिक ध्यान रखते थ — यह तथ्य सरिया (1972) न उजागर किया। तम्बोली (1966) भी शिक्षण अभ्यास म सहयोग-समन्वय और नइ विधियो क प्रयोग की आवश्यकता अनुभव करते थे। मगर वर्मा (1972) बताती हैं कि शिक्षण अभ्यास के लिए निर्दिष्ट स्कूलो की समस्याएँ भी प्रखर होती हैं। प्रशिक्षार्थी पाठ्यक्रम को पूरा करन की चिन्ता नहीं करत उन्हे विषय का पूरा ज्ञान नहीं होना, उनका शिक्षण व्यवस्थित और क्रमबद्ध नहीं होता व सहकार्य निर्दिष्ट नहीं करत, उनकी कक्षाओ म अनुशासन की समस्या थी और व शिक्षण की अन्तवस्तु की अपेक्षा विधियो की नाटकीयता पर ज्यादा समय व्यय करत थे। समाधान यह कि शिक्षण अभ्यास की योजना स्कूल के सहयोग से बनाई जाए और प्रशिक्षार्थी अतिथि अध्यापक न रहकर स्कूल म काम करें और पूरे समय तक स्कूल के सभी कार्यक्रमो म भागीदारी करें। दत्त (1967) न भी लगभग यही समस्याएँ खोज निकाली। मानी (1968) के अनुसार भी प्रधानाध्यापक शिक्षण अभ्यास कार्यक्रम को समय और शक्ति का अपव्यय मानत थ। प्राथमिक प्रशिक्षण म बोलिया (1974) के अनुसार एक एक अनुदेशक के पास 25 स 30 तक प्रशिक्षार्थी होत थे यद्यपि वहाँ शिक्षण अभ्यासो म स्कूलो का सहयोग अच्छा होता था। जनकदुलारीसिह (1972) बताते हैं कि प्रशिक्षार्थी म आयु की प्रौढता आने पर वह शिक्षण अभ्यास का लाभ नहीं उठा पाता।

प्रशिक्षार्थियो की त्रुटियो पर भी अध्ययन हुए हैं। पाहूजा (1968) न मालूम किया कि प्राथमिक प्रशिक्षार्थियो (महिलावग) की लिखावट नितान्त खराब थी। विराम चिह्न, वतनी और उच्चारण की गलतियाँ बहुत होती थी और हिन्दी पाठ योजनाओ तक म अनुदेशक कोई सुझाव भी नहीं दते थे। गलहोत्रा (1974) बताती हैं कि विज्ञान विषय म शिक्षको का वाचिक व्यवहार कम होता था जबकि उधर सामाजिक ज्ञान म शिक्षक छात्रो को बोलने-बतियाने का मौका ही नहीं दत थे। भाषा विषय म छात्र पर्याप्त बोलते थे। भडारी (1973) ने मालूम किया कि प्रशिक्षार्थी अधिकतर ज्ञानात्मक उद्देश्यो का ही उल्लेख करते थ और भावनात्मक क्षेत्र को एकदम स उपेक्षित छोड दिया जाता था। सुवाली (1972) के अनुसार अनुदेशक/प्राख्याता अपनी टिप्पणियो म सहायक सामग्री के पक्ष को अछूता छोड दते थे यद्यपि टिप्पणियो म निर्दिष्ट सुझावो की सख्या पर्याप्त रहती थी। प्रशिक्षार्थी कक्षा म अपना पाठ भुगता देने की चेष्टा म अधिक रहते थे और छात्रो की कमियो दूर करन का ध्यान नहीं रखते थे। उधर प्रशिक्षार्थी भी इस बात से दुखी पाए गए कि प्रशिक्षण म उनकी कठिनाइयो पर भी कोई ध्यान नहीं देता। प्रमोदकुमार (1974) न यह मालूम किया कि विज्ञान विषय के अध्यापको म अन्यो की अपेक्षा अपन व्यवसाय के प्रति सकारात्मक रुझान रहता है।

दुग्गा (1970) ने पाया कि प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और माध्यमिक कक्षाओं में पढ़ाने वाले प्रशिक्षार्थियों के मानसिक कार्यभार में कोई अन्तर नहीं होता। छात्र प्रशिक्षार्थियों में क्या अपेक्षाएँ रखते हैं इस सम्बन्ध में अध्ययन करके दीक्षित (1969) ने मालूम किया कि यद्यपि छात्रों की बुद्धिलब्धि और उनकी अपेक्षाओं में धनात्मक सहसम्बन्ध नहीं था मगर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर और अपेक्षाओं में—भावनात्मक व्यक्तित्व सम्बन्धी और सामान्य व्यवहार सम्बन्धी स्तरों में क्रमशः 01, 01 और 05 तक सहसम्बन्ध पाया गया। गुप्ता (1968) के अनुसार महिला प्रशिक्षार्थियों के विषय ज्ञान और कक्षा में सामाजिक वातावरण बनाने की उनकी क्षमता के बारे में छात्राओं का मत नकारात्मक पाया गया, मगर उनकी वेशभूषा और व्यक्तित्व की सजगता के बारे में उनका मत सकारात्मक था। उधर विज्ञान प्रशिक्षार्थियों के बारे में नानकचन्द (1974) बताते हैं कि छात्रों की अपेक्षा शिक्षकों में विज्ञान विषय की प्रवृत्ति का झुकाव अन्तर था। उधर एक ओर विज्ञान के छात्रों और अन्य छात्रों में कोई अन्तर नहीं पाया गया वहाँ दूसरी ओर विज्ञान और विज्ञानेतर शिक्षकों में भी कोई अन्तर नहीं पाया गया। वाजपेयी (1967) ने यह मालूम किया कि प्राथमिक प्रशिक्षार्थी आरम्भिक कक्षाएँ पढ़ाने के लिए उत्प्रेरित नहीं किए जाते व रचना शिक्षण और संवाद में रुचि नहीं लेते और एक ही प्रसंग बार-बार प्रशिक्षार्थी श्रमिक रूप में पढ़ाते थे। ज्यवि राज्य शिक्षा संस्थान द्वारा किए गए एक अन्य अध्ययन (1968) में पता लगा कि अन्य विषयों की अपेक्षा प्राथमिक स्तर के प्रशिक्षण में हिन्दी विषय के पाठों का अभिप्रतिनिधित्व संतोषप्रद था। प्राथमिक प्रशिक्षण में मनोबल की स्थिति दयनीय है, यह तथ्य व्यास (1974) ने यह पता लगाकर उजागर किया कि प्राथमिक प्रशिक्षण विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की प्रतिष्ठा अन्य समकक्षों की अपेक्षा कम थी।

प्रबन्ध और प्रशासन

शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की साधन-सम्पन्नता, व्यवस्था और प्रबन्धन कुशलता का जितना प्रभाव प्रशिक्षार्थियों पर पड़ता है उतना संभवतः औपचारिक कार्यक्रमों का भी नहीं पड़ता। प्रशिक्षार्थियों की आवश्यकताओं के सन्दर्भ में रस्तोगी (1970) ने मालूम किया कि पुरुष और महिला प्रशिक्षार्थियों के आवश्यकता साध्य में अन्तर रहता है, वैसे ही विवाहित अविवाहित के बीच भी और नवयुवा तथा प्रौढ़ों के बीच भी। सक्सेना (1957) ने पता लगाया कि समन्वय-सहयोग के स्तर पर अधिकांश प्रशिक्षार्थी सहयोगी पाए गए मगर शर्मा (1958) के अनुसार समन्वय-सहयोग की समस्याओं से पुरुष व महिला दोनों ही ग्रस्त और चिंतित रहते थे यद्यपि स्वास्थ्य की समस्याएँ पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में अधिक प्रखर रहती थीं। जब माथुर (1974) ने समन्वय सम्बन्धी अभिनवन कार्यक्रम के प्रभावों का मापन किया तो पाया कि इन कार्यक्रमों का प्रभाव प्रशिक्षण व्यवहार पर ही नहीं पड़ता बल्कि उनका स्थानान्तर पारिवारिक समायोजन में भी होता है। उन्होंने यह भी निष्कर्ष निकाला कि बुद्धिलब्धि या सामाजिक-आर्थिक स्थिति का समन्वय से धनात्मक सम्बन्ध नहीं होता। मगर सुधा

जन (1971) कहती हैं कि सामाजिक आर्थिक स्थितियां प्रशिक्षार्थियों म समस्याएँ पदा करती हैं और उन समस्याओं का मानसिक स्वास्थ्य, व्यक्तित्व और स्व सुधार पर असर पडता है तथा य पिछली बातें शिक्षण कुशलता स सकारात्मक भाव से सम्बन्धित है।

अग्रवाल (1971) न व्यक्तित्व सरचना और सहगामी कार्यों के प्रति रुचियों म साथक सहसम्ब ध नही पाया। जबकि पारीक (1971) ने सहज अनुशासन और नेतत्व म तथा सामाजिक अनुशासन और नतत्व मे उच्च स्तर का सहसम्बन्ध पाया, मगर नेतत्व और व्यक्तिगत अनुशासन म कोई सहसम्बध नही पाया। प्रशिक्षार्थियों की चिंताओं के दायरे म व्यास (1969) ने मालूम किया कि निजी सस्थाओं म व आर्थिक व्यय भार की अधिकता से जनित होती थी, तो बूब (1968) ने पता लगाया कि चिंताग्रस्तता तो पुरुष महिला दोनो वर्गों म व्याप्त थी। मगर, विवाहित महिलाओं म उसकी प्रखरता ज्यादा रहती थी। पूर्वानुभव विहीन नवयुवाओं मे प्रशिक्षण सम्ब धी चिंताएँ और आशकाएँ अधिक रहती थी। निष्कप यह कि प्रशिक्षणकाल मे भी निर्देशन की व्यवस्था होनी चाहिए। कन्हैयालाल शर्मा (1967), ने प्राथमिक प्रशिक्षार्थियों को आर्थिक समस्याओं से बुरी तरह ग्रस्त पाया। साथ ही उन्ह आवास और भोजन की व्यवस्था से बहुत असन्तुष्ट भी पाया। चिकित्सा और खेल सुविधाएँ भी उन्ह प्राप्त नही थी।

उधर सानार (1967) ने अनुदेशकों/प्राख्याताओं के कार्यभार की स्थिति देखकर निष्कप निकाला कि विभिन्न कार्यकर्त्ताओं म असतुलन की स्थिति थी और कुछ पर काय भार बहुत अधिक था। पारस्परिक सबध भावों की खोज करके अम्बिकाप्रसाद शर्मा (1966) ने बताया कि आतककारी, पक्षपाती और निरकुश प्रशिक्षकों की बनिस्पत सहानुभूतिशील और उदार प्रशिक्षकों को प्रशिक्षार्थी ज्यादा पसन्द करते थे। अनुभव की प्रौढता और बौद्धिक सम्पन्नता म कसल (1969) ने घनिष्ट सहसम्बन्ध पाया जिसका आशय यह है कि प्रशिक्षण सस्थाओं म ज्ञानवृद्ध और अनुभवी प्राख्याताओं को रखा जाना चाहिए। लीलाविहारी (1966) बताते है कि प्रशिक्षार्थी प्राख्याताओं म शक्षिक दक्षता देखना चाहते हैं और प्राख्याता प्रशिक्षार्थियों म अभ्यास शिक्षण की पुष्ट तयारी और परीक्षोपयोगी सावधानी देखना चाहते हैं।

मन्नलाल शर्मा (1967) ने पता लगाया कि प्रशिक्षार्थियों की व्यावसायिक आकाक्षाएँ तो बहुत ऊँची थी मगर उनकी उपलब्धियाँ उतनी ही निचले स्तर की थी। मित्तल (1966) ने ज्ञात किया कि प्रशिक्षार्थी प्रशिक्षण सस्थाओं से व्यावहारिक प्रशिक्षण कायक्रम की अपेक्षा करत थे। उधर, मेहता (1965) ने प्रशिक्षण सस्थाओं के कार्मिक ढाचे का विश्लेषण करके बताया कि उनमे स 50% प्रशिक्षित स्नातक थ प्रवचन ग्राम प्रणाली थी, सहायक सामग्री और शिक्षा उपकरणों की स्थिति दयनीय थी पाठ्यक्रम की महत्वाकाक्षाएँ अकल्पनीय थी। मगर अभ्यास शालाओं पर उन सस्थाओं का कोई नियत्रण नही था। इन सस्थाओं म स 75% के पास अपन भवन थ मगर पुस्तकालयों की स्थिति नही क बराबर थी। अधिकतर कोई अनुदेशक या लिपिक ही पुस्तकालय का भी काम करता था। प्रशिक्षण मौखिक वाचिक और सद्धान्तिक व्यापार बनकर उभरता था।

नरेन्द्र सिंह (1965) ने तुलनात्मक अध्ययन द्वारा मालूम किया कि पंजाब में प्राचार्य चार सदस्यीय आयोग द्वारा चुने जाते थे जबकि राजस्थान में माध्यमिक प्रधानाध्यापक ही प्राचार्य बना दिए जाते थे। शिक्षा संस्थाओं में प्रबन्ध समितियाँ ही चुनाव पर नहीं थीं। वेतन स्तर की दृष्टि से राजस्थान पंजाब से आगे था। दोनों राज्यों में शिक्षण प्रशासन सिद्धान्त तथा मूल्यांकन प्रणाली में भी अन्तर था।

प्रशिक्षण का प्रभावांकन

शाहिन (1965) ने शिक्षक के कार्य को शिक्षण कार्य सम्पर्क कार्य सम्बद्ध कार्य निर्देशन कक्षा-व्यवस्था अभिलेख कार्य और सामुदायिक कार्यों में वर्गीकृत किया। उन्होंने ज्ञात किया कि प्रशिक्षण के उपरान्त भी अध्यापक कतिपय निम्न नामित कार्य ही करते थे। इनमें प्रगतिशीलता नहीं देखी गई। इससे पता चलता है कि प्रशिक्षण तथा का प्रभाव व्यावहारिक धरातल पर स्थित नहीं था। नन्द नाथ (1965) ने प्रधानाध्यापकों की प्रशंसा-स्तर जानना चाहा तो पता चला कि वे प्रशिक्षण मनोविज्ञान शिक्षा-दर्शन और विद्यालय-व्यवस्था में तो सन्तुष्ट थीं शिक्षण प्रक्रिया के उत्थान को महत्त्व नहीं दिया जबकि प्रशिक्षण संस्थाओं में सारा बल शिक्षण की विधियों पर था। उधर कपूर (1966) ने पाया कि प्रशिक्षित अध्यापकों में पाठ-योजना इकाई-योजना और सहायक सामग्री के उपयोग के प्रति सकारात्मक रुझान था और अप्रशिक्षितों की तुलना में वे अधिक प्रजातान्त्रिक भी थे एवं संशोधन कार्य भी करते थे। यही बात अनन्त (1969) ने मालूम की। भार्गव (1972) ने पता लगाया कि प्रशिक्षण संस्था के कार्यकर्ताओं द्वारा किए गए और स्कूल में प्रधानाध्यापक द्वारा किए गए मूल्यांकन में कोई सहसम्बन्ध नहीं रहता। अमरकौर (1965) ने इसी तथ्य की पुष्टि इस प्रकार के तथ्यों में की है कि प्रशिक्षण संस्थाओं में विधि प्रविधि आदि में जटिलता और विस्तार ही अधिक होता थी। उधर माथुर (1974) ने विज्ञान शिक्षकों में कृषि शिक्षकों की अपेक्षा सृजनशीलता का स्तर उच्चतर पाया और गुप्ता (1973) ने मालूम किया कि सामाजिक आर्थिक स्थिति का असर शिक्षक के व्यक्तित्व और उसकी शिक्षणगत प्रौढ़ता पर पड़ता है।

सेवारत प्रशिक्षण

शिक्षक प्रशिक्षण में यह इस दृष्टि से उपयोगी कार्यक्रम है कि इससे सेवारत शिक्षक को गतिशील बने रहने और नवनवोन्मेषी होने में मदद मिलती है। विश्वविजय सिंह (1969) ने इस क्षेत्र में कार्यरत अभिकरणों/संस्थाओं का पता लगाकर बताया कि शिक्षा सेवा प्रसार विभाग के कार्यक्रम सामूहिक गोष्ठियाँ विज्ञान मेला विज्ञान-क्लब निदर्शन पाठ प्रसार व्याख्यान माला आदि उपायों से यह लक्ष्य साधा जा रहा था। इस क्षेत्र में साधन सुविधाओं और विशेषज्ञ व्यक्तियों की नितान्त कमी थी अनुवर्तन की प्रणाली नहीं थी और वास्तविक सुरुचि का अभाव था। माथुर (1966) ने प्रसार विभागों में शिक्षकों द्वारा की गई अपेक्षाओं का पता लगाया तो यह तथ्य उभरा कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाएँ स्वसुधार के लिए अधिक उत्सुक थीं। मगर पुरुष शिक्षक

ऐसे कार्यक्रमो के प्रति उदासीन ही नही विरुद्ध भाव भी रखते थे। विजयवर्गीय (1966) ने प्राथमिक प्रसार विभागो म वित्तीय कमी देखी तो भटनागर (1967) ने अनुवर्तन म प्रधानाध्यापको की भूमिका का अध्ययन करके मालूम किया कि 90 प्रतिशत स्थिति म वे परिवीक्षण और अनुवर्तन म अक्षम रहे। बावने (1974) ने ग्रीष्मकालीन हिन्दी शिविरो के अध्ययन मे पाया कि वहा सर्वथा अनुभवविहीन और विषयेतर शिक्षक भेजे गए थे। डोगरा (1960) ने पता लगाया कि सेवारत प्रशिक्षण के प्रति शिक्षको का सामान्य झुकाव तो नही था किन्तु जिनमे अपने व्यवसाय के प्रति सकारात्मक रुझान था वे इन कार्यक्रमो म अपूर्व उत्साह रखते थे। दुर्गाप्रसाद माथुर (1970) ने शिक्षको म सेवारत प्रशिक्षण के प्रति आक्रोश पाया, मगर विचार विमर्श के बाद वे इसकी उपयोगिता स्वीकार भी कर लेते थे ऐसा विदित हुआ। उनकी कठिनाइयो म आर्थिक निवेश, अवकाश की क्षति और प्रशिक्षणकाल म मुक्त विचरण की क्षति के कष्ट प्रमुखतया उभरे। बेनी (1960) ने मालूम किया कि 80% अध्यापक केवल प्रशासनिक दबाव तथा अनिवार्यता के दबाव से इन कार्यक्रमो म भाग लेते थे। कावरा (1969) ने सेवारत प्रशिक्षण का तात्कालिक लाभ पुरुष व महिला दोनो पर समान रूप से पाया, मगर वर्ष भर के समय म भूलन की गति भी उतनी ही तीव्र पाई। जबकि नम्बर (1970) बताते हैं कि सेवारत अभिनवन पाठ्यक्रमो से शिक्षको के विषय ज्ञान और उनकी व्यवसाय दक्षता म अभिवृद्धि हो रही थी।

सभावनाएँ और सुझाव

इन अध्ययनो के प्रवत्ति निरूपण स यह बात उभरकर सामने आती है कि इस क्षेत्र म कम से कम इतनी तो उत्साहप्रद बात निकली है कि प्रशिक्षण कार्यक्रमो के प्रति आस्था का अभाव नही है। इतना अवश्य है कि प्रशिक्षण का जितना सकारात्मक प्रभाव शिक्षण पद्धतियो और कक्षा व्यवस्था पर है उतना विषय ज्ञान और गतिशीलता पर नही। उधर या तो स्कूलो म प्रशिक्षण कार्यक्रमो के प्रति निष्ठा नही बनी या फिर दोनो स्तरो पर तालमेल की कमी रही है। अत्यन्त आवश्यकता तो यह है कि स्कूल और प्रशिक्षण सस्था को परस्पर निकट लाने के उपायो पर अनुसधान हो। सेवारत प्रशिक्षण की राजस्थान म जो प्रवर्तनकारी भूमिका रही है, वह आश्वस्तिकारक तो है मगर उससे पूर्व प्रशिक्षण का स्कूली व्यवहार मे ढालने गालन म मदद नही मिलती। पूर्व प्रशिक्षण म जो कमियाँ सामने आई हैं यथा — सिद्धान्त विषयो का व्यावहारिक पृष्ठभूमि से अलगाव, सहगामी प्रवत्तियो की उपेक्षा, स्वय प्रशिक्षण सस्थान म विघिगत पारम्परिकता — इन सबके निराकरण की आवश्यकता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। यह विस्मयकारक ही है कि प्रशिक्षण सस्थाओ म ये सब सर्वेक्षणात्मक अनुसधान तो हुए हैं मगर कहीं भी कोई प्रायोगिक प्रायोजना को लेकर किसी नवाचार को प्रतिपादित करने की चेष्टा नही हुई। इस तथ्य म प्रशिक्षण और अनुसधानो की प्रथापालन प्रवृत्ति का आभास होता है। अधिकतर अनुसधानो म प्रश्नावली मतावली द्वारा ही तथ्य सकलन का सहारा लिया गया है। शिक्षण अभ्यास, प्रशिक्षण सस्थाओ की कार्यावली व्यवहार साँचा और धार्मिक ढाँचा का वायकारण भावी या परिणाम भावी अध्ययन

शिक्षण दिया जाता। प्रशिक्षण तथा वे मात्र स्वरूप का मात्र शिक्षण का भाग ही बनी रहती है और प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम की वास्तविक अन्तर्वस्तु का ज्ञान का प्रयत्न भी रहा है। शिक्षण अभ्यास व गतिविधियों का बहुत ही उपयोग है मगर स्कूलों और प्रशिक्षण संस्थाओं के बीच सम्पर्क समन्वय का स्वरूप उभरता नहीं प्रस्तुत किया जा रही थी। निरीक्षकों की अभिरुचि कठिनाइयों द्वारा समस्या के रूप को मात्र गए जो उनमें सहजता निष्ठा और आस्था पैदा करें।

वस्तुतः शिक्षक प्रशिक्षण बहुत व्यापक क्षेत्र है और इसमें प्रशिक्षार्थियों की संख्या और सम्बन्धित भाग भी प्रसार होता है। अनुसंधानों का स्वरूप यदि प्रयोजना सम्बन्धी हो और वह व्यावहारिक धरातल पर होता (जैसा कि एक अध्ययन में सामाजिक समन्वय के क्षेत्र में स्पष्ट हुआ है) उससे प्रशिक्षण संस्थाओं को समुचित की दिशा अवश्य मिल सकेगा।

सदर्भांकित अनुसधान

अग्रवाल आभा — शिक्षक कुशलता से सम्बन्धित कुछ कारकों का अध्ययन
एम एड राज वि वि 1974

अग्रवाल सुधा — छात्राध्यापकों के व्यक्तित्व के कुछ पक्षों से सम्बन्ध रखते हुए उनकी पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में रुचियों का अध्ययन,
एम एड राज वि वि 1971

अनन्त गिरिराज शर्मा — An Investigation into the Impact of B S T C Training Programme on the Trained Teachers
M Ed Udaipur Uni 196)

अमरकौर — The Basic S T C Programme and the Needs of our Primary Schools
M Ed Udaipur Uni 1965

अरोड़ा नरमा — An Investigation into the Determinants of Teaching Skill
M Ed Raj Uni 1970

कक्कड़ गायत्री — An Investigation into the Factors Affecting the Attitudes of Pupil teachers towards Students and the School Work
M Ed Raj Uni 1969

कपूर अनूपसिंह — An Investigation into the Impact of Teacher Education Programme on the Teaching Practices of Trained Teachers
M Ed Udaipur Uni 1966

कौशिक गंगाप्रसाद — A Study into the Effectiveness of Refresher Training Centres with respect to Teachers Attainments and their Attitudes towards the Programme (Refresher Training Centres of Goner and Kishangarh)
M Ed Udaipur Uni 196)

गलहोत्रा, उषा	बी एड की छात्राध्यापिकाओ के कक्षा शिक्षण मे शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1974
गुप्ता, पुष्पादेवी	A Study of Effects of Secondary School Teachers Personality Maturity on their Adjustment M Ed Raj Uni 1973
गुप्ता वीना रानी	The Study of the Attitudes of the High School Girl Students towards the Female Trainees of the B Ed College, M Ed Raj Uni 1968
गौड, रवीन्द्रनाथ	बी एड सद्धान्तिक शिक्षण के उद्देश्य एव उनकी प्राप्ति का अन्वेषण, एम एड, राज वि वि 1974
चरणमेवकसिंह	Relevance and Prognostic Value of B Ed Examination as an Indicator of Performance in Actual Practice in Schools M Ed Udaipur Uni 1965
चौहान, लक्ष्मणसिंह	माध्यमिक विद्यालयो के शिक्षको की सामाजिक आर्थिक स्थिति और उनकी व्यावसायिक कुशलता एम एड, राज वि वि 1971
जनकदुलारीसिंह	An Investigation into the Supervision of Selected School Subjects in Practice Teaching M Ed Raj Uni 1972
जन वसतकुमार	Evaluation of Open Air Session in Vidya Bhawan M Ed Udaipur Uni 1971
जन सुधा	अध्यापक एव अध्यापिकाओ के क्वालिटी प्वाइट, शिक्षण अनुभव व सामाजिक आर्थिक स्तर पर उनकी समस्याओ का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1971
जोशी दिनेशचन्द्र	A Study of Innovations and Changes in Teachers Colleges Ph D (Edu) Udaipur Uni 1973
डागरा चमनलाल	An Investigation into the Attitudes of Teachers towards In service Training M Ed Raj Uni 1960
तम्बोली कन्हैयालाल	A Study of the Block Practice Teaching Pro gramme of a Teachers College M Ed Udaipur Uni 1966
तिवारी वा डी	Selection Criteria for Admission to the B Ed Course M Ed Raj Uni 1964

डंग नरनप्रसाद	An Investigation into the Qualities of a Teacher M Ed Udaipur Uni 1966
डंग शिवमान्न	An Investigation into the Problems of Practice Teaching Experienced by the Student Teachers of a Teachers College of Udaipur University M Ed Udaipur Uni 1967
डागर चनदा	छात्राध्यापकों की स्वधारणा आकांक्षा-स्तर एवं उपलब्धि में सहसम्बन्ध का अध्ययन, एम एड उदयपुर वि वि 1972
दाधिच आशा	A Study of Pupils Expectations from Teachers M Ed Raj Uni 1969
दीक्षित उमा प्रसाद	A Study of the Job of a Teacher M Ed Udaipur Uni 1965
नन्दर रामनारायण	राजस्थान में अभिनवन प्रशिक्षण तथा उसके अनुवर्ती कार्यक्रम का प्राथमिक शालाओं पर प्रभाव का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1970
नारायण	A Comparative Study of Fair Groups Understanding the Nature of Science M Ed Raj Uni 1974
पण्ड्या निर्मला	A Study of Factors Affecting Theory and Practice Results of B Ed Examination M Ed Raj Uni 1973
प्रमोदकुमार	A Comparative Study of Attitude towards Teaching of Science and Non Science Student Teachers M Ed Raj Uni 1974
पारीक मंजु	छात्राध्यापकों के व्यक्तिगत पारस्परिक मूल्यों के संदर्भ में अनुशासन के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1971
पारीक श्यामसुन्दर	राजस्थान में प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु विद्यालयी एवं पत्राचार पाठ्यचर्या का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड उदयपुर वि वि 1972
पाठुजा कौशल्या	Diagnosis of Language Errors of Student Teachers in Training Schools M Ed Udaipur Uni 1968
बमा शकुन्तला	Relevance of Aptitude and Intelligence with Teaching Success at the B S T C Level M Ed Udaipur Uni 1966
बग्गा हरजान	छात्राध्यापकों की अभिरुचियों एवं सामान्य तथा अभ्यास सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन, एम एड राज वि वि 1970

बूब, पुरुषोत्तमराम	An Investigation into the Prevalence of Anxiety in Student Teachers of Rajasthan M Ed Raj Uni 1968
बेनी, रणदीपसिंह	Evaluation of In Service Teacher Training Programmes M Ed Raj Uni 1960
बोलिया, पुष्पा	उदयपुर के तीन बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयो म प्रायोगिक कायक्रम के सगठन का अध्ययन, एम एड उदयपुर वि वि, 1974
बोहरा डी आर	Teacher Education at Primary Level in Rajasthan SIE Udaipur 1971
भटनागर गणपतसिंह	The Role of the Supervisory Staff in the Follow up Programmes of In Service Teacher Education M Ed Udaipur Uni 1967
भडारी, पुष्पलता	A Critical Study of Statements of Objectives of Science Lessons M Ed Udaipur Uni 1973
भीमसिंह	अध्यापको के प्रशिक्षणकालीन एव सेवाकालीन सफलताओ के मापन मे सह सम्बन्ध, एम एड, राज वि वि, 1972
मनमोहन कौर	A Study of the Motivating Factors for the Selection of Teaching Profession by the Teachers M Ed Raj Uni 1968
माथुर दुर्गाप्रसाद	A Study of the Attitudes of Secondary School Teachers towards the In Service Training Programmes through Specialised Agencies M Ed Raj Uni 1970
माथुर नीना	The Effect of Adjustment Orientation Pro gramme on the Adjustment Behaviour of B Ed Students M Ed Raj Uni 1974
माथुर मीरा	An Investigation into the Reactions of Vaca tion Course Students towards their B Ed Programme M Ed Jodhpur Uni 1970
माथुर, सज्जनराम	A Study of the Expectations of the Secondary School Teachers of Udaipur Area from the Programmes of the Extension Services Department M Ed Udaipur Uni 1966
मान रवीन्द्रसिंह	Relationship b tween External Examination Marks and Internal Assessment of Junior Basic Student Teachers M Ed Raj Uni 1964

माहेश्वरी श्यामबाबू — Problems of Trained Teachers in Service and their bearing on Teacher Education Programme
M Ed Raj Uni 1972

मिश्र ब्रजकिशोर — A Study of the Expectations of Secondary School Teachers from the Teachers College Programmes
M Ed Udaipur Uni 196[illegible]

मेहता वल्लभसिंह — राजस्थान के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्राध्यापकों की सामाजिक पृष्ठभूमि : एक अध्ययन
एम एड राज वि वि 1970

मेहता डी एस — Status Study of Teacher Training Institutions at Primary level
SIE Udaipur 1965

मल्होत्रा उर्मिला — छात्राध्यापकों के अपव्यय एवं उनके कारण व्यवसाय पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन
एम एड राज वि वि 1973

माथुर कामतानाथ — A Study of Some Correlates of Effective Practice Teaching in Teachers Training
M Ed Raj Uni 1965

रमिन्दर कौर — A Study of the Attitudes of Science Teachers towards Science and Scientists
M Ed Raj Uni 1973

राज्य शिक्षा संस्थान — शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय गोवर्धन विलास उदयपुर की वार्षिक परीक्षा सन 1966 के व्यावहारिक पाठों (हिन्दी) का अध्ययन 1968

राठौर रंजना — शिक्षण व्यवसाय के प्रति शिक्षा-स्नातक छात्राओं की अभिवृत्ति
एम एड उदयपुर वि वि 1974

रावत म कोविन्द — History and Problems of Teachers Training in India
M Ed Raj Uni 1954

राना विमलाकुमारी — The Need Structure of Student Teachers
M Ed Raj Uni 1970

रीनाकिशोरी — Mutual Expectations of Pupil Teachers and Teacher Educators in Training Colleges
M Ed Udaipur Uni 1966

वर्मा नयना — अध्यापन-अभ्यास के समय सम्बद्ध विद्यालयों के कार्य एवं समस्याएँ,
एम एड, राज वि वि, 1972

वर्मा मानूराम — A Study into the Relationship of Some Correlates of Teaching Ability of Student Teachers in J B T Schools with a view to Improve the Methods of Selection and Guidance of Prospective Teachers
M Ed Raj Uni 1972

वली, उपासुन्दरी	Supervision and Evaluation of Practice Teaching Programme in a Teachers College A Case study M Ed Udaipur Uni 1966
वाजपेयी अवधविहारी	शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय, मसूदा (अजमेर) की व्यावहारिक परीक्षा 1966 के हिन्दी पाठो का अध्ययन राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर, 1967
वावल, कुमुदिनी	ग्रीष्मकालीन हिन्दी प्रशिक्षण शिविर का अध्यापकों की व्यावसायिक क्षमता पर प्रभाव एम एड, उदयपुर वि वि 1974
व्यास, भरवलाल	An Investigation into the Qualities of Student Teachers of Teachers Colleges of Udaipur University M Ed Udaipur Uni 1967
व्यास, शशिशेखर	राजस्थान में शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयो की काय क्षमता राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर, 1974
व्यास, श्यामसुन्दर	How B Ed Students Meet Their Expenditure M Ed Udaipur Uni 1969
विजयवर्गीय डी पी	An Investigation into the Programmes of the Extension Services Centres for Primary School Teachers in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1966
विश्वविजयसिंह	Contribution of Various Agencies to the In Service Programme of Teacher Education in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1969
वीरेन्द्रसिंह	A Comparative Study of the Organisation of Secondary Teachers Training Colleges in Rajasthan and Punjab M Ed Udaipur Uni 1965
शमा, अम्बिकाप्रसाद	Human Relationship and Pupil Performance A Study of Teacher pupil Relationship and its Impact on Pupils Performance M Ed Udaipur Uni 1966
शमा अम्बिकाप्रसाद	Development of Professional Education in Rajasthan Ph D (Edu) Udaipur Uni 1972
शमा आर क	Guidance Needs of Student Teachers M Ed Raj Uni 1958
शर्मा उपारानी	उदयपुर के शिक्षक महाविद्यालय म भाषाध्यापन का निर्देशन एव परिवीक्षण, एम एड उदयपुर वि वि 1972
शमा कन्हैयालाल	A Study of Adjustment Difficulties of Student Teachers in S T C Schools M Ed Udaipur Uni 1967

शर्मा कुमुद — राजस्थान में माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु विद्यालयों एवं ग्रीष्मकालीन पाठ्यचर्या का तुलनात्मक अध्ययन,
एम एड उदयपुर वि वि 1974

शर्मा धर्मचन्द — A Study of the Pattern of Supervision and Evaluation of Practice Teaching in a B S T C School
M Ed Udaipur Uni 1967

शर्मा बजरंगलाल — An Investigation into Creative Teaching in Practice Teaching
M Ed Raj Uni 1972

शर्मा मदनलाल — An Investigation into the Achievement and Attitudes of S T C Student Teachers towards the Profession
M Ed Raj Uni 1967

शर्मा मोतीराम — An Investigation into the Objectives of Practice Teaching and their Realization
M Ed Raj Uni 1974

शर्मा वी एम — A Study of the Economic Status of the Trainees in Elementary Teacher Training Institutions of Rajasthan
SIE Udaipur 1971

शर्मा शिवकुमार — 10 Case Studies of Elementary Training Institutions in the State
SIE Udaipur 196[illegible]

श्रीमाली भँवरलाल — राजस्थान के शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयों की प्रवेश सम्बन्धी समस्याएँ एक अध्ययन
एम एड उदयपुर वि वि 1969

सक्सेना रमाप्रकाश — A Comparative Study of Achievement of Student Teachers and Delta Class Students in Basic Subjects
M Ed Udaipur Uni 1968

सक्सेना गोपीनाथ — Adjustment of Pupil Teachers at Vidya Bhawan Teachers College Udaipur
M Ed Raj Uni 1957

सरिया गणपत — विद्याभवन शिक्षक महाविद्यालय उदयपुर द्वारा संचालित ब्लाक अध्यापन अभ्यास का मूल्यांकन,
एम एड उदयपुर वि वि, 1972

साथ पी सी — Expectations of Headmasters of Secondary Schools from T T College Programmes
M Ed Udaipur Uni 1965

सामर महेन्द्रसिंह — A Comparative Study of the Creative Talent of Science and Non Science Student Teachers
M Ed Raj Uni 1974

सिंघल सुषमा — संकाय, श्रेणी, आयु व अध्यापन अनुभव का बी एड परीक्षा में कर्तृत्व पर प्रभाव,
एम एड राज वि वि, 1973

सीताराम	An Investigation into Some Factors of Teachers Training and its Relationship with Other Variables M Ed Raj Uni 1966
सुखवाल, कलाशदेवी	**अध्यापिकाओं द्वारा शिक्षण व्यवसाय के चयन के कारण,** एम एड, उदयपुर वि वि 1971
सुम्बाली, किरण	A Study of the Supervisory Remarks in *Science Teaching* M Ed Udaipur Uni 1972
सोनार ऋद्धिकरण	A Study of Work Load on the Staff of Teachers Training Schools in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1967
हल्गे, शिर्ले अना	A Study of the Characteristics of Science Teachers Implications for Teacher Education M Ed Raj Uni 1973



शिक्षा-प्रशासन

◘ हरिश्चन्द्र मित्तल
◘ सूरजनारायण राय

शिक्षा प्रशासन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के कारण अध्ययन एवं शोध का एक रोचक विषय रहा है। इस विषय के विभिन्न आयामों पर अनेक शोध अध्ययन किए जाने का एक कारण यह रहा है कि इस स्तर पर इसका वर्चस्विक विषयों में एक स्थान रहा है। विद्यालय व्यवस्था के पक्ष के प्रश्नों भी शिक्षा प्रशासन के क्षेत्र में हुए अब तक के शोध कार्यों को जिन वर्गों में बाँटा जा सकता है वे हैं — शिक्षा प्रशासन में सत्ता एवं अधिकार, शिक्षा प्रशासन में प्रशासनिक विकास एवं वर्तमान स्थिति, शिक्षा प्रशासकों एवं शिक्षकों के बीच सम्बन्ध एवं समस्याएँ, शिक्षा प्रशासन में सुधार के प्रयत्न एवं नवाचार, शिक्षा प्रशासन एवं पर्यवेक्षण तथा शिक्षा प्रशासन एवं वित्त।

शिक्षा प्रशासन में सत्ता एवं अधिकार

संवैधानिक दृष्टि से शिक्षा राज्य के अधिकार क्षेत्र में आती है किन्तु केन्द्र द्वारा शोध अथवा अभिकरणों के माध्यम से परोक्ष नियंत्रण रखने के औचित्य के प्रश्न को लेकर जोशी (1959) ने ज्ञात किया कि केन्द्र राज्यों की सम्मति से शिक्षा पर नियंत्रण कर रहा था। उसके अनेक अभिकरण यथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल आदि केन्द्र के इस नियंत्रण कार्य में सहायक हो रहे थे। धर्मपालगिरि (1959) ने अभिकरणों के अध्ययन तथा मतावलियों आदि से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला कि केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय समुदायों का शिक्षा में सहयोग होना चाहिए। रामदत्त शर्मा (1962) ने शिक्षा प्रशासन के ढाँचे की अंग्रेजी व्यवस्था के विकास के रूप में व्याख्या तथा पाया कि कुशलता के नाम पर शिक्षा में नियंत्रण बढ़ा हुआ था। उन्होंने यह भी मालूम किया कि शिक्षा तन्त्र प्रशासन में भी ग्रस्त था। स्वतंत्रता पश्चात् के शिक्षा प्रशासन का विकासात्मक अध्ययन करके जगन्नाथनारायण (1958) ने मालूम किया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय शिक्षा पर सरकार का अधिकार मामूली था किन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् कई राज्यों में सरकारी शिक्षा संस्थाओं की संख्या बढ़ गई तथा उनकी संख्या 6.6% से बढ़कर 23.4% हो गई। राजस्थान के सन्दर्भ में चारण (1953) ने पता लगाया था कि शिक्षा में निजी संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका थी। एक तिहाई स्कूल निजी संस्थाएँ चला रही थी। हाई स्कूल परीक्षा में बैठे 20% विद्यार्थी इन निजी संस्थाओं से थे। निजी संस्थाओं में अध्यापक

छात्र अनुपात 1 20 था, जबकि सरकारी विद्यालया म 1 17 5 था। किन्तु निजी सथाग्रा म पढने वाले विद्यार्थिया का परीक्षा परिणाम सरकारी विद्यालया के विद्यार्थिया की तुलना म गुणात्मक तथा सख्यात्मक दृष्टि स उत्तम रहा। परन्तु 1968 म जगदीश प्रसाद वर्मा ने पाया कि जहाँ भारत मे 32 2% विद्यालय निजी सस्थाग्रा द्वारा चलाए जाते थे, राजस्थान म निजी मस्थाग्रा का प्रतिशत 2 9% था। 1974 म मुरलीमोहन शर्मा न पाया कि उदयपुर शहर की 62% शिक्षासस्थाएँ गर सरकारी थी। अध्यापक-छात्र अनुपात 1 35 था, सरकारी स्कूलो की तुलना मे साधन सुविधाएँ इनमें अच्छी थी।

राजस्थान म 1959 म प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के साथ ही ग्रामीण क्षेत्र मे शिक्षा प्रशासन पचायत राज व्यवस्था को सौंपा गया। 1963 में नायक शिक्षा समिति न विकेन्द्रीकरण के इस नवीन प्रयोग के सन्दभ में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति का जायजा लिया था। इस ग्रायाम न शिक्षानुसधानाग्रा का भी ध्यान ग्राकर्षित किया। मेहता (1962), भामू (1965) द्विवेदी (1966), कौशिक (1969) तथा देवल (1973) न इसके विभिन्न पक्षों का लेकर अध्ययन किए। मेहता न राज्य एव पचायत समितिया के बीच अच्छे सबधा के अभाव की स्थिति पाइ तथा मालूम किया कि मानवीय सबधो की वित्तीय तथा सगठनात्मक समस्याएँ इससे बढीं। भामू ने शिक्षा प्रसार अधिकारियो में द्वन्द्वात्मक स्थिति देखी तथा प्रशासन के विभिन्न स्तरा के बीच मधुर सबधा का अभाव पाया। द्विवदी न अध्यापका का हौसला गिरा हुआ पाया तथा परिवीक्षण व्यवस्था में ह्रास के लक्षण देखे किन्तु यह भी पाया कि अध्यापका की उपस्थिति में बढोतरी हुइ उन्हें वेतन समय पर मिलन लगा था तथा ग्रामीण लागा न शिक्षा के महत्व को अधिक समझना शुरु कर दिया था। व शिक्षा में अधिक रुचि लेने लग थ। कौशिक क अनुसार पचायत समिति की शिक्षा समिति में 78 ' सदस्य उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर तक शिक्षित थे समिति की बठकें कारम पूरा न हान के कारण प्राय स्थगित हो जाती थी। दवल के अनुसार पचायत समिति प्रशासन क अन्तगत सवारत अध्यापक सरकारी स्कूला में जाना ज्यादा पसद करत थ। स्कूला में पचा तथा नताग्रा का वचस्व बढ गया था। अध्यापको को शिक्षेतर काय करन का बाध्य होना पडता था। वी ग्रार जोशी (1967) न एक पचायत समिति की स्कूला पर विकेन्द्रीकरण के प्रभाव का अध्ययन करन पर पाया कि अध्यापका को सरकारी अध्यापका के समान ही सुविधाएँ प्राप्त थी परिवीक्षकगण सक्षम नही थे कि शिक्षका का मागदशन कर सकें। अध्यापको क चयन में राजनतिक प्रभाव काम करता था 93% अध्यापक सरकारी सवा म जाना चाहते थे। भटनागर (1967) ने बडगाँव पचायत समिति के अन्तगत चल रहे प्राथमिक विद्यालया के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के ग्राधार पर उन्ही तथ्यो की पुष्टि की।

प्रबधगत विकास एव वतमान स्थिति

शिक्षा में निजी सस्थाग्रा की भूमिका क सदम में पाडे (1953) न विद्याभवन बेसिक स्कूल का तथा मूँदडा (1970) न विद्याभवन सासायटी का विकासात्मक अध्ययन व उनकी उल्लेखनीय प्रवृत्तिया तथा यागदान की समीक्षा की। पाडे ने मालूम

शिक्षा-प्रशासन

◻ हरिश्चन्द्र मित्तल
◻ सूरजनारायण राव

शिक्षा प्रशासन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के कारण अध्ययन एवं शोध का एक रोचक विषय रहा है। इस विषय के विभिन्न आयामों को लेकर शोध अध्ययन किए जाने का एक कारण यह रहा है कि एम.एड. स्तर पर इसका वैकल्पिक विषयों में एक स्थान रहा है। विद्यालय व्यवस्था के पक्ष के अलावा भी शिक्षा प्रशासन के क्षेत्र में हुए अनेक तरह के शोध कार्यों को जिन वर्गों में बाँटा जा सकता है वे हैं : शिक्षा प्रशासन में सत्ता एवं अधिकार, शिक्षा प्रशासन में प्रशासनगत विकास एवं वर्तमान स्थिति, शिक्षा प्रशासकों एवं शिक्षकों के बीच सम्बन्ध एवं समस्याएँ, शिक्षा प्रशासन में सुधार के प्रयास एवं नवाचार, शिक्षा प्रशासक एवं पर्यवेक्षण तथा शिक्षा प्रशासन एवं वित्त।

शिक्षा प्रशासन में सत्ता एवं अधिकार

संवैधानिक दृष्टि से शिक्षा राज्य के अधिकार क्षेत्र में आती है किन्तु केन्द्र द्वारा कोष अथवा अभिकरणों के माध्यम से परोक्ष नियंत्रण रखने के औचित्य के प्रश्न को लेकर जोशी (1959) ने ज्ञात किया कि केन्द्र राज्यों की सम्मति से शिक्षा पर नियंत्रण कर रहा था। उसके अनेक अभिकरण यथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल आदि केन्द्र के इस नियंत्रण कार्य में सहायक हो रहे थे। धर्माधिकारी (1959) ने अभिकरणों के अध्ययन तथा मतावलियों आदि से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला कि केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय समुदायों की शिक्षा में सहभागिता होनी चाहिए। समन्त शर्मा (1962) ने शिक्षा प्रशासन के ढाँचे को अंग्रेजी व्यवस्था की विरासत के रूप में देखा तथा पाया कि कुशलता के नाम पर शिक्षा में नियंत्रण बढ़ा हुआ था। उन्होंने यह भी मालूम किया कि शिक्षा लालफीताशाही प्रशासन से भी ग्रस्त थी। स्वतन्त्रता पश्चात् के शिक्षा प्रशासन का विकासात्मक अध्ययन करके लक्ष्मीनारायण (1958) ने मालूम किया कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय शिक्षा पर सरकार का अधिकार मामूली था किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् बहुत से राज्यों में सरकारी शिक्षा संस्थाओं की संख्या बढ़ गई तथा उनकी संख्या 6.6% से बढ़कर 23.4% हो गई। राजस्थान के सन्दर्भ में चारण (1953) ने पता लगाया था कि शिक्षा में निजी संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका थी। एक तिहाई स्कूल निजी संस्थाएँ चला रही थीं। हाई स्कूल परीक्षा में करीब 20% विद्यार्थी इन निजी संस्थाओं के थे। निजी संस्थाओं में अध्यापक

छात्र अनुपात 1 20 था, जबकि सरकारी विद्यालयो मे 1 17 5 था। किन्तु निजी सथाग्रा म पढने वाले विद्यार्थियो का परीक्षा परिणाम सरकारी विद्यालयो के विद्यार्थिया की तुलना म गुणात्मक तथा सख्यात्मक दृष्टि स उत्तम रहा। परन्तु 1968 म जगदीश प्रसाद वर्मा ने पाया कि जहाँ भारत मे 32 2% विद्यालय निजी सस्थाग्रा द्वारा चलाए जाते थे, राजस्थान म निजी सस्थाग्रा का प्रतिशत 2 9% था। 1974 म मुरलीमोहन शर्मा ने पाया कि उदयपुर शहर की 62% शिक्षासस्थाएँ गर सरकारी थी। अध्यापक छात्र अनुपात 1 35 था, सरकारी स्कूलो की तुलना म साधन सुविधाएँ इनमे अच्छी थी।

राजस्थान मे 1959 म प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के साथ ही ग्रामीण क्षेत्र म शिक्षा प्रशासन पचायत राज व्यवस्था का सौपा गया। 1963 में नायक शिक्षा समिति न विकेन्द्रीकरण क इस नवीन प्रयोग के सन्दर्भ में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति का जायजा लिया था। इस आयाम न शिक्षानुसधाताग्रा का भी घ्यान आकर्षित किया। मेहता (1962) भामू (1965), द्विवेदी (1966) कौशिक (1969) तथा देवल (1973) न इसके विभिन्न पक्षो को लेकर अध्ययन किए। मेहता ने राज्य एव पचायत समितिया क बीच अच्छे सबधा के अभाव की स्थिति पाई तथा मालूम किया कि मानवीय सबधो की, वित्तीय तथा सगठनात्मक समस्याएँ इनसे बनी। भामू ने शिक्षा प्रसार अधिकारियो में द्वद्वात्मक स्थिति देखी, तथा प्रशासन के विभिन्न स्तरो के बीच मधुर सबधो का अभाव पाया। द्विवदी न अध्यापका का हौसला गिरा हुआ पाया तथा परिवीक्षण व्यवस्था में ह्रास के लक्षण देखे किन्तु यह भी पाया कि अध्यापका की उपस्थिति में बढोतरी हुई, उन्हे वतन समय पर मिलन लगा था तथा ग्रामीण लागा न शिक्षा के महत्व का अधिक समझना शुरू कर दिया था। व शिक्षा में अधिक रुचि लेने लगे थे। कौशिक क अनुसार पचायत समिति की शिक्षा समिति में 78/ सदस्य उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर तक शिक्षित थे, समिति का बठकें कोरम पूरा न हाने क कारण प्राय स्थगित हो जाती थी। देवल के अनुसार पचायत समिति प्रशासन के अन्तगत सवारत अध्यापक सरकारी स्कूला में जाना ज्यादा पसद करत थ। स्कूला में पचा तथा नताग्रा का वचस्व बढ गया था। अध्यापका को शिक्षेतर काय करन का बाध्य होना पडता था। वी आर जोशी (1967) न एक पचायत समिति की स्कूला पर विकेन्द्रीकरण के प्रभाव का अध्ययन करन पर पाया कि अध्यापको को सरकारी अध्यापको के समान ही सुविधाएँ प्राप्त थी परिवीक्षकगण सक्षम नही थे कि शिक्षको का मागदशन कर सकें। अध्यापको के चयन में राजनतिक प्रभाव काम करता था 93% अध्यापक सरकारी सेवा में जाना चाहत थे। भटनागर (1967) न बडगाँव पचायत समिति के अन्तगत चल रहे प्राथमिक विद्यालया के अध्ययन स प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर उन्हा तथ्यो की पुष्टि की।

प्रबधगत विकास एव वतमान स्थिति

शिक्षा में निजी सस्थाग्रा की भूमिका के सदभ में पाडे (1953) ने विद्याभवन बसिक स्कूल का तथा मूँदडा (1970) न विद्याभवन सोसायटी का विकासात्मक अध्ययन व उनकी उल्लखनीय प्रवृत्तियो तथा योगदान की समीक्षा की। पाडे न मालूम

किया कि विद्यालय ने वर्धा शिक्षा योजना को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप ढाल कर सफलतापूर्वक लागू किया था।

आशाराम शर्मा (1967) ने भारत में केन्द्रीय विद्यालयों के उद्देश्य, कार्य प्रणाली तथा संगठन का अध्ययन करके मालूम किया कि इनका उद्देश्य केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के बच्चों को शिक्षा देना। आवश्यकताओं की पूर्ति करना था तथा इन्हें भाषागत प्रकार के कारण होने वाली कठिनाइयों को कम करना था। इन विद्यालयों का पाठ्यक्रम केन्द्रीय शिक्षा-बोर्ड द्वारा तैयार किया जाता था। इन विद्यालयों का विस्तार भार केन्द्रीय सरकार वहन करती थी। (उल्लेखनीय है कि अब केन्द्रीय विद्यालय संगठन एक स्वायत्तशासी संस्था के रूप में विकसित हो गया है।)

महेन्द्रपाल शर्मा (1972) ने भारत के माध्यमिक शिक्षा बोर्डों का अध्ययन करके मालूम किया कि इनके कार्यकलाप तथा संगठन के आधार पर ये तीन वर्गों में बाँटे जा सकते थे। इनकी प्रवृत्तियों का संचालन एवं नीतियों का निर्धारण समितियों के माध्यम से होता था किन्तु समितियों की संख्या तथा उनमें सदस्यों की संख्या में सबमें एकरूपता नहीं थी। परीक्षा संचालन के अतिरिक्त बोर्ड अन्य शैक्षिक कार्य, यथा विद्यालयों को मान्यता प्रदान करना, पाठ्यक्रम/पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित करना, अध्यापक कल्याण के कार्य, व्यावसायिक उन्नयन के कार्य आदि करते थे। रूप (1968) ने राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा किये गये सुधारों में परीक्षा सुधार, आन्तरिक मूल्यांकन योजना, सुनियोजित परिवर्तन, उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण तथा मूल्यांकन की ओर अभिनवन प्रशिक्षण कार्यक्रमों को उल्लेखनीय बताया।

प्रशासनिक संबंध एवं समस्याएँ

अध्यापकों के व्यावसायिक विकास एवं कार्य-संतुष्टि से संबंधित समस्याओं, उनकी मूल्य प्रणाली (Value System) तथा उनकी अन्य अनुकूल समस्याओं को केन्द्र बिन्दु बनाकर शोध कार्य किए गए। माथुर (1960) ने पाया कि लगभग तीन चौथाई अध्यापक संगठन कार्य के भार, अभिभावकों की उदासीनता तथा पदोन्नति संबंधी नियमों के कारण अपने व्यवसाय (job) से असंतुष्ट थे। लक्ष्मीनारायण शर्मा (1967) ने मालूम किया कि शिक्षण सामग्री का अभाव, स्थानीय लोगों की शिक्षा के प्रति उदासीनता तथा समय विभाग चक्र में बारम्बार परिवर्तन उनके असंतोष के कारण थे। शिवकुमार शर्मा (1968) ने और पन्त (1972) ने शिक्षकों की आधुनिक शैक्षिक प्रवृत्तियों के प्रति अभिवृत्तियों को अनुकूल पाया था। हरचरणकौर (1970) ने माध्यमिक विद्यालयों की अध्यापिकाओं को अध्यापकों की तुलना में अपने व्यवसाय से अधिक संतुष्ट पाया। जिन अध्यापकों ने स्वेच्छा से अध्यापन पेशा स्वीकार किया था वे उन अध्यापकों की अपेक्षा जो कि मजबूरी के कारण इस व्यवसाय में आए थे—अधिक संतुष्ट थे। सत्री (1972) के अनुसार अध्यापकों में व्यावसायिक साहित्य पढ़ने की आदत अध्यापिकाओं से अधिक थी जबकि अध्यापिकाएँ उपन्यास पढ़ने की अधिक शौकीन पाई गई। मदनलाल शर्मा (1967) के अनुसार 23% प्राथमिक शालाओं के प्रशिक्षित अध्यापकों ने मत में एक

भी पुस्तक नहीं पढ़ी थी। पुरोहित (1969) ने यह निष्कर्ष निकाला कि कम उम्र वाले अध्यापकों का अपने व्यवसाय से कम संतोष था, मगर उम्र बढ़ने के साथ साथ व्यवसाय के प्रति संतोष बढ़ता जाता था। अधिक शैक्षिक योग्यता वाले अध्यापक शिक्षण व्यवसाय के प्रति तुलनात्मक रूप से अधिक असंतुष्ट पाए गए। गालव (1969) ने वरिष्ठ अध्यापकों की तुलना में सहायक अध्यापकों को अपने व्यवसाय के प्रति अधिक संतुष्ट पाया। उन्होंने अध्यापकों के व्यावसायिक मूल्यों तथा व्यवसाय के प्रति संतोष के बीच सार्थक सहसंबंध नहीं पाया। मांगीलाल शर्मा (1970) के अनुसार व्यवसाय में प्रवेश के समय तो अध्यापकों के आदर्श उच्च थे, किन्तु अनुभव प्राप्त करने तथा कार्यरत रहने के बाद इन आदर्शों में ह्रास होता गया। यादव (1971) ने पाया कि अध्यापक का स्तर उसके आदर्शों के आधार पर नहीं अपितु उसकी योग्यता तथा गुणों के आधार पर आँका जाता था। पड्या (1974) ने अध्यापिकाओं की समस्याओं के अध्ययन से मालूम किया कि उनमें से अधिकांश ने आर्थिक कठिनाई से तंग आकर यह व्यवसाय चुना था। आहूजा (1974) ने भी इस तथ्य की पुष्टि की।

चौधरी (1974) ने राजस्थान व हरियाणा राज्यों के अध्यापकों की समस्याओं के तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि दोनों ही राज्यों के अध्यापक समय पर वार्षिक वेतन वृद्धि न मिलने, वेतन का भुगतान न होने, सत्र भर स्थानान्तरण होते रहने तथा शिक्षण सामग्री के अभाव के कारण असन्तुष्ट थे। कैलाशनाथ व्यास (1967) ने पाया कि गैर सरकारी विद्यालयों के शिक्षक स्वतन्त्र अभिव्यक्ति से डरते थे तथा प्रबन्ध उनके कार्यों में दखलन्दाजी करता था। लाल (1967) ने इन्हीं तथ्यों की पुष्टि की तथा यह भी मालूम किया कि वे सरकारी स्कूलों के अध्यापकों की तुलना में अपने को कम सुरक्षित अनुभव करते थे। जोशी (1966) ने शिक्षकों एवं प्रधानाध्यापकों की प्रभावी भूमिका में स्थानान्तरण नीति को बाधक पाया। यानसिंह (1967) ने स्थानान्तरणों में राजनीतिक दखलंदाजी को प्रभावशील पाया। अध्यापकों के स्थानान्तरणों के अन्य कारणों में पक्षपातपूर्ण रवैया, उनकी कार्यकुशलता में कमी, घरेलू परिस्थितियाँ आदि भी थे। प्राथमिक स्तर पर सत्यनारायण शर्मा (1967) ने अध्यापकों की तुलना में अध्यापिकाओं को अधिक समस्या ग्रस्त पाया। एक अध्यापकीय विद्यालयों की समस्याओं पर एकमात्र शोध अध्ययन भवरलाल शर्मा (1966) का उपलब्ध है। तदनुसार एक अध्यापकीय विद्यालयों के अध्यापक कार्यभार से अधिक ग्रस्त थे। 80% से अधिक विद्यालयों में फर्नीचर आदि की कमी से अध्यापक परेशान थे। त्रिवेदी (1967) ने शिक्षा प्रशासन पर विभिन्न स्तरों के दबावों के अध्ययन में मालूम किया कि शिक्षा प्रशासन पर दबावों का औसत 42.3% था। स्थानान्तरण के दबाव के 144 मामलों में से 68 सामने आए। दबावों के कई रूपों तथा उनके प्रयोजनों की जानकारी इस अध्ययन से मिलती है।

छात्रों में अनुशासनहीनता की समस्या को लेकर द्रोण (1969) मडावत (1969) तथा रामदेव (1970) द्वारा किए गए तीन शोध उपलब्ध हैं। द्रोण (1969) के अनुसार छात्रों में अनुशासनहीनता के लिए 69% मामलों में राजनीतिक दल जिम्मेदार थे।

अन्य कारणों में छात्रों की पाठ्येतर क्रियाओं में प्रवृत्ति, शिक्षकों व शिक्षा अधिकारियों का अविवेकपूर्ण व असहानुभूतिपूर्ण रवैया, समाज में नैतिक मूल्यों का ह्रास, घर का वातावरण आकर्षक न होना आदि थे। रामदेव (1970) ने भी राजनीतिक दलों के हस्तक्षेप तथा छात्रों के हीन सामाजिक आर्थिक स्तर को अनुशासनहीनता के लिए जिम्मेदार पाया।

प्राथमिक एवं माध्यमिक-शाला स्तरों पर अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या का सतत ज्ञापन शोध हुआ है। इसमें माध्यमिक स्तर पर मारवाड़ी (1974) तथा मिश्रा (1968) के अध्ययन तथा प्राथमिक स्तर पर राज्य शिक्षा संस्थान के शिवकुमार शर्मा (1965) और एम. एल. भागरगा, अमरनाथ शर्मा (1955) के अध्ययन उल्लेख्य हैं। मिश्रा ने अपव्यय का अनुपात नगर और नगरियों में 70.56 पाया। पिछड़ी जाति के बालकों में अपव्यय 82% था। लड़कों में अवरोधन का प्रतिशत 26 था। अध्यापकों व शिक्षकों के लिए प्रतिकूल भाव, शिक्षा का अभाव तथा अभिभावकों के निम्न स्तर, शिक्षा स्तर का अल्प समस्या के लिए उत्तरदायी बताया गया। मारवाड़ी ने अपव्यय एवं अवरोधन का अनुपात 30.70 पाया। मिश्रा के निष्कर्षों के विपरीत उन्होंने लड़कियों की शिक्षा में (लड़कों की तुलना में) अपव्यय एवं अवरोधन क्रमशः 29% तथा 33% अधिक पाया। अमरनाथ शर्मा (1955) के अनुसार सर्वाधिक अपव्यय प्राथमिक कक्षाओं में 8–11 आयु वर्ग के छात्रों में था। इसके कारणों में गरीबी, अभिभावकों की उदासीनता, विद्यालयों के पर्याप्त विषम आदि को मुख्य पाया गया। शिवकुमार शर्मा (1965) के अध्ययन के अनुसार प्रतिवर्ष अवरोधन का प्रतिशत बढ़ रहा था तथा अपव्यय का घट रहा था। अपव्यय के मुख्य कारण थे अभिभावकों का स्थानान्तरण तथा बच्चों का बीमार होना, जबकि अवरोधन का एक मुख्य कारण था अध्ययन स्तर का औसत से नीचा रहना। गिरासिया (1969) ने बालिका शिक्षा के अध्ययन में पाया कि रूढ़ परम्परागत बालिका शिक्षा में बाधक थीं। बालविवाह भी उनकी शिक्षा में रुकावट डालता था। बालिकाओं के शिक्षित होने पर उपयुक्त वर न मिलने का डर, घरेलू कार्यों में लगे रहना, सगाई आदि छात्राओं की शिक्षा में अवरोध के अन्य कारण थे।

शिक्षा प्रशासन में सुधार के प्रयत्न एवं नवाचार

कोठारी शिक्षा आयोग (1964–66) ने विभिन्न स्तरों के विद्यालयों को निकट लाने तथा उनमें सहयोगपूर्वक कार्य करने के प्रयोजन से विद्यालय संगम की अनुशंसा की थी। राजस्थान में 1967 में इस प्रयोग का प्रारम्भ किया गया। इस पक्ष को लेकर किए गए कुछ अनुसंधान उपलब्ध हैं। मेहता (1973) ने विद्यालय संगम की प्रशासनिक समस्याओं सम्बन्धी अध्ययन में ज्ञात किया कि इनकी एक प्रमुख समस्या बैठकों के समय निर्धारण की थी। यदि विद्यालय समय में बैठक बुलाई जाती तो अध्ययन-कार्य की हानि होती और विद्यालय समय उपरान्त बैठक आयोजित करने पर बैठकों में उपस्थिति बहुत कम रहती थी। आवागमन के साधन और वित्तीय साधन सम्बन्धी कठिनाइयाँ भी अनुभव की जाती थीं। नरेशचन्द्र शर्मा (1974) ने पाया कि अध्यापकगण विद्यालय संगम की बैठकों में अनिच्छा से भाग लेते थे, प्रदर्शन पाठ देने

से कतराते थे तथा उनमें पहल करने की भावना नही थी। इस पक्ष पर मूल्यांकनपरक विस्तृत सर्वेक्षण राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर के तत्वावधान में मेहता मिश्रा तथा वर्मा न 1972 में किया। शोधकर्त्ताओं न पाया कि 53% विद्यालय सगम वार्षिक योजना बनात थे, 49% में विषय समितियां कायम थी, 64% में प्रदशन पाठ दने की व्यवस्था थी, किन्तु ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालय सगमा म दिए गए प्रदशन पाठा का औसत 15 था, जबकि शहरी क्षेत्र में 6 का औसत था। इन्हे अधिकाशत कनिष्ठ एव कम अनुभव वाले अध्यापक देते थे। 56% विद्यालय सगम उत्सव परिवार के रूप में मनाते थे तथा उनमें समान परीक्षा व्यवस्था थी। लगभग 5% विद्यालयो के अध्यापक अन्य विद्यालयो स प्राप्त पुस्तको साधना आदि का लाभ उठाते थे। सहयाग का लाभ न उठान का एक प्रमुख कारण था अध्यापका की उदासीनता। उसी वष 1972 म ही चित्तौडगढ जिले के सर्वेक्षण के आधार पर श्रीवास्तव व वर्मा ने मालूम किया कि 74% अध्यापक तो विद्यालय सगमा की प्रवृत्तिया स ही अनभिज्ञ थे। राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानर के प्रस्तार सेवा विभाग द्वारा 1974 म किए 272 विद्यालय सगमा के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि 91% विद्यालय सगमा म प्रदशन पाठ के काय आयोजित हुए थे, किन्तु प्रदशन पाठ देने वाले अधिकाश अध्यापक सहायक अध्यापक ही थ। 170 विद्यालय-सगमा मे विषय समितियाँ गठित थी। 135 विद्यालय सगमा म उपकरणा का आदान प्रदान हुआ था। 95 ने सामूहिक उत्सव कायक्रम आयोजित किए।

व्यास (1969) न प्रधानाध्यापक वाकपीठा का अध्ययन करके मालूम किया कि वे शक्षिक समस्याओं के समाधान पर अधिक ध्यान देते थे, व्यावसायिक उन्नयन म प्रभावी रूप म सहायक थे किन्तु वित्तीय कठिनाइयो से ये बुरी तरह ग्रस्त थ।

शिक्षा प्रशासन एव परिवीक्षण

इस वग म एक ओर शिक्षा परिवीक्षका का भूमिका को लेकर तथा दूसरी ओर उनसे की जान वाली अपेक्षाओं को लेकर शोध-काय उपलब्ध हैं। पाठक (1974) ने इन्दौर (मध्यप्रदश) के सन्दर्भ में स दम म ज्ञात किया कि परिवीक्षका का प्रशासनिक एव परिवीक्षण कायभार बढा हुआ था। व पुरानी पद्धति से ही निरीक्षण करते थे। पानेरी (1966) न राजस्थान म इसी पक्ष पर अपन अध्ययन म ज्ञात किया कि निरीक्षका का रवया सहानुभूतिपूण नही था वे अधिकारी का सा व्यवहार करते थे शिक्षका की सहायता करने की दृष्टि उनम नही थी। वे प्राय दनिक प्रशासनिक कार्यों म ही उलझे रहते थे। चौधरी (1974) ने मालूम किया कि पनल परिवीक्षण का अध्यापका के व्यावसायिक उन्नयन पर तो प्रभाव पडा किन्तु उससे पाठ निर्माण योजना म प्रभावी मागदशन नही मिला। हाँ अध्यापका की प्रश्न प्रविधि म सुधार हुआ। के एल शर्मा (1961) के अनुसार परिवीक्षण वस्तुत निरीक्षण था। सहयोग व सहायता करने की अभिवृत्ति परिवीक्षको म नही थी।

प्राथमिक विद्यालय स्तर पर यादव (1966) ने पाया कि शिक्षा प्रसार अधिकारी माह म 39% दिन ही परिवीक्षण काय म लगाते थे। लड्ढा (1967) के

अनुसार शिक्षा प्रसार अधिकारी को परिवीक्षण के लिए अपेक्षित समय नहीं मिलता था, क्योंकि वे पंचायत समिति के अन्य कार्यों में व्यस्त रहते थे। विद्यालयों की संख्या का अनुपात अधिक होने से सम्पर्क प्रणाली की समस्याएँ अनुभव की जाती थी।

दरबारीलाल (1967) ने सफल विद्यालय प्रशासक के 23 गुणों का पता लगाया। अतीकखान (1971) ने पाया कि अध्यापकों ने आदर्श परिवीक्षक में उच्च बौद्धिक स्तर भावात्मक वृत्ति व सामाजिक गुणों को पसन्द किया, जबकि अध्यापिकाओं ने परिवीक्षकों की व्यावसायिक कुशलता एवं शारीरिक सुष्ठुता को पसन्द किया। गोपालदास शर्मा (1974) ने अध्ययन के आधार पर परिवीक्षक से अध्यापक का मित्र बन कर उसकी सहायता करने की छात्रों व स्थानीय जनताओं से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने की अपेक्षा की। जनार्दनप्रसाद शर्मा (1968) ने प्रधानाध्यापकों के द्वन्द्व का अध्ययन करके मालूम किया कि जिन प्रधानाध्यापकों का दृष्टिकोण संकुचित होता है, वे अच्छे प्रधानाध्यापक नहीं होते तथा द्वन्द्व में पीड़ित रहते हैं। प्रधानाध्यापक मुख्यतः परिवीक्षण में मानवीय सम्बन्ध बनाने आदि में द्वन्द्वात्मक स्थिति का अनुभव करते थे।

गौरी (1960) तथा बृजमोहन शर्मा (1960) ने परिवीक्षण के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि विद्यालयों में परिवीक्षकों के व्यवहार में सहानुभूति की कमी थी। अध्यापकों में उनके व्यवहार के प्रति असन्तोष था।

शिक्षा प्रशासन एवं वित्त

स्वतन्त्रता के पश्चात् तीव्र गति से शिक्षा का विकास हुआ है और शिक्षा शास्त्रियों एवं अर्थशास्त्रियों की यह मान्यता बन गई है कि देश का विकास शिक्षा के प्रसार से सीधा सम्बन्धित है। अतः प्रतिवर्ष शिक्षा पर होने वाले व्यय में प्रति व्यक्ति वृद्धि की दर क्या है उसकी उपादेयता कितनी है ऐसी समस्याओं पर भी कुछ शोध कर्त्ताओं ने अध्ययन किए हैं।

उपाध्याय (1954) ने राजस्थान में शिक्षा वित्त का अध्ययन करके ज्ञात किया कि शिक्षा पर होने वाले कुल व्यय का 15% राज्य सरकार वहन कर रही थी। स्थानीय निकाय निजी संस्थाएँ धर्माथ ट्रस्ट आदि शेष वित्तीय व्यवस्था करते थे। शृंगी (1969) ने शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रति विद्यार्थी शिक्षा व्यय की गणना एवं तुलना की तथा मालूम किया कि ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में प्रति विद्यार्थी शिक्षा-व्यय शहरों की अपेक्षा बहुत अधिक था। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति इकाई अधिक व्यय का कारण अध्यापक छात्र का कम अनुपात, ऐच्छिक विषयों की न्यूनता आदि थे। कुमारी नलवरा (1971) ने ज्ञात किया कि निजी शिक्षण संस्थाओं का प्रति इकाई व्यय राजकीय शिक्षण संस्थाओं की अपेक्षा अधिक था। इस अधिक व्यय के कारण निजी शिक्षण संस्थाओं में अच्छी प्रयोगशालाएँ अच्छे पुस्तकालय, उच्च स्तर के सामाजिक कार्यक्रम, अच्छे छात्रावास थे जिनसे छात्रों को अधिक सुविधाएँ प्राप्त होती थी।

राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर के हेडा एव जोशी (1966) ने प्राथमिक, उच्च प्राथमिक एव माध्यमिक विद्यालयो म प्रति इकाई व्यय का अध्ययन करके यह ज्ञात किया कि प्राथमिक स्तर पर अच्छे विद्यालय मे प्रति इकाइ व्यय 49 37 रुपये साधारण म 54 89 रुपय तथा हीन म 53 80 रुपये था। उच्च प्राथमिक स्तर पर अच्छे विद्यालय मे प्रति इकाई यय 78 67 रुपय, मध्यम म 88 09 रुपय तथा हीन म 53 30 रुपये था। उच्च माध्यमिक स्तर पर अच्छे विद्यालय मे प्रति इकाई व्यय 195 48 रुपये, साधारण मे 241 86 रुपय तथा हीन म 154 45 रुपये था। इस अध्ययन स यह स्पष्ट होता है कि सुप्रबधित अच्छे विद्यालय मे चाहे वह किसी स्तर का हो, प्रति इकाई व्यय भी कम होता था और परीक्षा परिणाम भी श्रेष्ठ रहते थे।

विविध

टिक्कीवाल (1954) न राजस्थान मे शिक्षा प्रशासन के अधिकार विन्यास का अध्ययन करके मालूम किया कि केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति से शिक्षा प्रशासन ग्रस्त था, शिक्षा के विभिन्न अभिकरणा म समुचित तारतम्य नही था, साक्षरता का प्रतिशत मात्र 8 4% था। जन (1960) ने भारत म उच्च शिक्षा का अन्य दशो की शिक्षा स तुलनात्मक अध्ययन करके ज्ञात किया कि ब्रिटिश शासन मे ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा पर ध्यान नही दिया गया था किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इस पक्ष पर समुचित ध्यान दिया जाने लगा था। वगू (1963) न राजस्थान में माध्यमिक शिक्षा की स्थिति की जम्मू और कश्मीर की शिक्षा से तुलना की तथा पाया कि राजस्थान परीक्षा सुधार कायक्रमा में शिक्षक प्रशिक्षण कायक्रमो में, शारीरिक शिक्षका के प्रशिक्षण कायक्रमो में अग्रणी था।

जोशी (1969) ने शिक्षा प्रशासन में नौकरशाही की भूमिका पर, तो उधर कौशिक (1972) न अपने पीएच डी अध्ययन में शिक्षक सघा की भूमिका पर शोध किया। जाशी क अनुसार नीति सम्बन्धी मामलो में नौकरशाही की भूमिका नगण्य थी किन्तु क्रियान्वयन में इसकी भूमिका प्रमुख थी। नीतिया पर क्रियान्वयन नियमानुसार केवल 10% मामला में ही हाता था। अधिकाश उत्तरदाताओं ने नौकरशाही को नियमा में जब तब परिवतन करने का दोषी बताया। नौकरशाही के अनुसार पक्षपातपूण निणया का कारण उन पर आने वाला दवाव था। कौशिक न मालूम किया कि भारत में शिक्षक सगठन प्रारम्भिक अवस्था में शक्षिक समस्याओ के समाधान पर बल देते थे, किन्तु शन शन उनका झुकाव शिक्षको की आर्थिक समस्याओ के समाधान की ओर बढता गया। इन सगठना का शिक्षा के आयोजन व उसकी प्रक्रिया में नगण्य प्रभाव था, किन्तु वेतनमान बढ़वाने गर सरकारी विद्यालया के अध्यापको को सरकारी विद्यालयो के अध्यापका के समान महगाई भत्ता दिलान उनकी सेवा शर्तों का सरक्षण दिलवाने में इन सगठनो ने सफलता प्राप्त की। आन्दोलनात्मक प्रवृत्ति इनमें देखी गई। कौशिक ने यह मालूम किया कि इनमें आन्तरिक तथा वाहरी सम्प्रेषण व्यवस्था का अभाव था। फलत लोगो में इनके प्रति गलतफहमियाँ भी थी तथा इनमें अध्यापका की अपेक्षित आस्था नही थी।

सम्भावनाएँ एवं सुझाव

गत बीस वर्षों में शिक्षा प्रशासन क्षेत्र में शोधकर्ताओं ने प्रशासन के मानवीय संगठन पर अधिक ध्यान दिया। विभिन्न अभिकरणों की स्थिति का अध्ययन शोध का अधिक प्रिय विषय रहा। इस तथ्य को उजागर किया गया कि कार्मिक जनों के लिए कार्य की सन्तोषजनक स्थिति शिक्षा की मूलभूत आवश्यकता है। स्वायत्त तथा निजी संस्थाओं के अध्ययनों में उन्हें अधिक स्वतन्त्रता देने की स्थिति स्पष्ट की गई पर विकेन्द्रीकरण के कुप्रभावों से बचने की आवश्यकता भी व्यक्त की गई थी।

बहुसंख्यक शोधकर्त्ताओं ने (Normative survey) सर्वेक्षण प्रणाली से अध्ययन किए। प्रामाणिक तथा परीक्षण विधि से शायद ही कोई शोध किया गया। न्यादर्श प्राय सामान्य विद्यालयों से ही लिए गए। विशेष प्रकार के विद्यालयों जैसे, पब्लिक स्कूल, प्राविधिक स्कूल तथा विकलांगों के विद्यालयों के न्यादर्श नहीं लिए जा सके।

उपकरणों की दृष्टि से देखें तो प्राय सभी शोधकर्त्ताओं ने स्वनिर्मित उपकरणों का ही प्रयुक्त किया। उन्होंने मानकीकृत उपकरण बनाने अथवा बने तैयार उपकरणों के प्रयोग में कम रुचि दिखाई।

सांख्यिकी में सामान्य आँकड़ों का ही उपयोग किया गया। प्राविधिक सांख्यिकी विधाओं का नगण्य उपयोग किया गया।

शोधकार्यों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यदि अध्ययन के समय शोधकर्त्ता विषय की गहराई में उतरने का प्रयास करते एवं उसके विभिन्न पक्षों को उभारने का प्रयास करते तो अध्ययन और अधिक महत्वपूर्ण बन पाते।

शिक्षा में नियन्त्रण एवं प्रशासन के अन्तर्गत यद्यपि पर्याप्त समस्याओं पर शोध कार्य किए गए किन्तु जिला शिक्षा अधिकारी के कार्य, उनकी समस्याएँ, उनके विभिन्न इकाइयों से सम्बन्ध, उनके स्वयं के कार्यालय कर्मचारियों से अन्तर्सम्बन्ध पर शोध कार्य नगण्य हैं। इसी प्रकार अध्यापकों के अन्तर्सम्बन्धों एवं मनोवृत्तियों तथा इन सबका के शाला प्रशासन पर प्रभाव को लेकर भी शोध-कार्य किए जाने की जरूरत है। अध्यापकों की पारिवारिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि को लेकर भी अध्ययनों का अभाव है। अध्यापक अभिभावकों के अन्तर्सम्बन्धों का शाला विकास पर छात्र छात्राओं के चरित्र निर्माण पर उनके परीक्षा-परिणाम पर पड़ने वाले प्रभाव को लेकर अध्ययन भी अपर्याप्त है।

यद्यपि विद्यालयों की भौतिक एवं मानवीय समस्याओं पर कुछ अध्ययन किए गए हैं किन्तु शाला उन्नयन कार्यक्रम, कार्यानुभव, समाजोपयोगी एवं क्रीडा प्रतियोगिताएँ, सांस्कृतिक एवं सामाजिक-समारोह आयोजन, विज्ञान अवकाश कार्यक्रम की उपादेयता, स्काउट एवं गाइड आन्दोलन का प्रसार इन सब के प्रति दृष्टिकोण एव उनका प्रभाव आदि से सम्बन्धित प्रशासनिक समस्याओं के प्रति शोधकर्त्ताओं की दृष्टि से बच रहे गए हैं।

शिक्षा में विकेन्द्रीकरण से उत्पन्न समस्याओं ने यद्यपि शोधकर्त्ताओं का ध्यान आकर्षित किया है और पंचायत समितियों के अध्यापकों की समस्याओं शिक्षा प्रसार

अधिकारी की समस्याओं, एक अध्यापकीय शालाओं की समस्याओं पर कुछ अध्ययन उपलब्ध हैं, किन्तु पंचायत समितियों व अध्यापकों के व्यावसायिक विकास शिक्षण-स्तर के समुन्नयन, समकक्ष राजकीय शालाओं के शिक्षण स्तर से उसकी तुलना, ग्रामीण शाला के सामुदायिक केन्द्र के रूप मे विकसित होने के लक्ष्य की प्रगति आदि ऐसे क्षेत्र हैं जिन पर शोधकर्त्ताओं को ध्यान देना जरूरी है। एक अध्यापकीय शालाओं की व्यवस्था एवं कार्य प्रणाली शोधकर्त्ताओं के लिए लगभग एक अछूता, मगर रोचक आयाम है।

परिवीक्षण के अन्तर्गत, उसके प्रभाव के मूल्यांकन की दृष्टि से कोई अध्ययन नही किया गया। परिवीक्षण में आधुनिक तकनीक एवं उपकरणों का उपयोग एवं उपादेयता, परिवीक्षण में मानक प्रपत्रों के उपयोग से परिवीक्षण को सुगम एवं प्रभावी बनाने के प्रयास, स्व मूल्यांकन, प्रश्नावलियों के उपयोग एवं उनकी उपादेयता आदि ऐसे क्षेत्र हैं जो अब तक अछूते हैं।

राजस्थान में शिक्षा के विकास में निजी शिक्षण संस्थाओं की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इन संस्थाओं के अध्यापकों में व्याप्त असंतोष एवं उनके शोषण की घटनाएँ भी यदा-कदा प्रकाशित होती रहती हैं, किन्तु इन संस्थाओं के परीक्षा परिणाम पर्याप्त अच्छे रहते हैं अभिभावक भी इन विद्यालयों को महत्व देते हैं, इसके पीछे क्या कारण हैं—इनका अध्ययन होना चाहिए। स्वतन्त्रता के पश्चात् राज्य में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देने वाली निजी संस्थाओं की बाढ सी आ गई है उनमे प्रवेश की समस्या भी विकट हैं किन्तु उनके प्रशासन को लेकर एक भी शोध अध्ययन उपलब्ध नही है। निजी संस्थाओं की कार्य प्रणाली एवं स्थानीय समकक्ष राजकीय शिक्षण संस्थाओं की कार्य प्रणाली के तुलनात्मक अध्ययन का भी अभाव है।

शिक्षा एवं वित्त की समस्याओं पर जहाँ विकसित देशों में विगत बीस वर्षों में अत्यधिक अध्ययन हुए हैं, वहाँ राजस्थान में पीएच डी स्तर पर तो एक भी शोध-कार्य अब तक नही हुआ, एम एड स्तर पर केवल चार शोध अध्ययन दृष्टि में आए हैं। शिक्षा व्यय एवं उत्पादकता में व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय अभिवृद्धि अंग्रेजी माध्यम की निजी शिक्षण संस्थाओं में प्रति व्यक्ति शिक्षा का व्यय, पब्लिक स्कूलों में प्रति व्यक्ति शिक्षा का व्यय एवं उसका प्रतिफलन, ग्रामीण अंचल की शिक्षण-संस्थाओं मे प्रति व्यक्ति व्यय, प्रशासन पर होने वाले व्यय का अनुपात, अन्य राज्यों मे शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर होने वाले व्यय से राजस्थान के व्यय की तुलना, शिक्षक प्रशिक्षण पर प्रति व्यक्ति व्यय, महिलाओं पर होने वाला प्रति व्यक्ति व्यय एवं उसकी उपयुक्तता—ये कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमे शोध की पूरी गुंजाइश है।

शिक्षा प्रशासन के अन्तर्गत हुए अब तक के अध्ययनों में प्रयोगात्मक अध्ययनों का अभाव खटकता है। यद्यपि प्रयोगात्मक अध्ययनों में कठिनाइयाँ अधिक हैं शोधकर्ता को भी अधिक परिश्रम करना पडता है फिर भी शोध के क्षेत्र में ऐसे अध्ययन होने चाहिए। शिक्षा प्रशासन का वर्तमान स्वरूप अंग्रेजी राज्य की देन है किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् देश में हुए सामाजिक आर्थिक परिवर्तनों के संदर्भ में इस प्रशासन के ढाँचे में

अपेक्षित परिवर्तनों का स्वरूप क्या हो, सामान्य जनता एवं शिक्षकों की आशाओं की पूर्ति में प्रशासन का सहयोग क्या हो, अथवा प्रशासन के स्वरूप में क्रमिक परिवर्तन किस तरह से किए जाने चाहिएँ—इन मुद्दों पर अनुसंधानकर्ताओं को काम करके प्रशासन या संस्थागत स्तर पर प्रयोगात्मक प्रायोजना कार्य भी करने चाहिए।

सन्दर्भाकित अनुसंधान

अताकबानू	An Ideal Supervisor as Viewed by Teachers M Ed Raj Uni 1971
आहूजा, भगवती	A Study of the Familial Adjustment of the Women teachers of the School of Raja Park Jaipur B A (Adult Education) Raj Uni 1974
उदावत, जगदम्बालाल	An Investigation into the Educational Finance in Rajasthan M Ed Raj Uni 1954
कोठारी, चन्दनमल	A Survey of A C C and Scouts Organisation in Bikaner Division with reference to Educational Organisational and Financial Factors M Ed Raj Uni 1962
कौशिक श्यामलाल	A Comparative Study of Teachers Associations in Rajasthan and the Neighbouring States Ph D (Edu) Udaipur Uni 1972
कौशिक सूरजनारायण	Qualifications of the Members of Education Committee of Panchayat Samities and their Effectiveness M Ed Udaipur Uni 1969
खत्री, रामदान	A Study into the Attitude towards Studies of Primary and Secondary School Teachers in Chittorgarh District B A (Adult Education) Raj Uni 1972
गर्ग, भँवरलाल	A Study of Reforms Introduced by the Board of Secondary Education Rajasthan and Their Impact on Teachers M Ed Udaipur Uni 1968
गालव नन्दलाल	A Study of Values and Job Satisfaction of Secondary School Teachers M Ed Udaipur Uni 1969
गौरी गफूरमोहम्मद	An Investigation into the Attitudes of Secondary School Teachers towards the Prevailing Practices of Inspection in Rajasthan M Ed Raj Uni, 1960
चारण सांवलदान	The Role of Private High School in the Educational Development of Rajasthan M Ed Raj Uni, 1953

चौधरी सुषमा	माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर राजस्थान और हरियाणा के प्रधानाध्यापकों एव प्रधानाध्यापिकाओं की प्रशासकीय समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन एम एड, राज वि वि, 1974
चौधरी हरदीनाराम	नागौर जिले के माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे परिवीक्षण के प्रभाव का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1974
जगदीशनारायण	Trends in Local Educational Administration in India since Independence A Comparative Study M Ed Raj Uni 1958
जन प्रह्लादराय	A Comparative Study of the Development of Rural Higher Education in India U K U S A and U S S R, M Ed Raj Uni 1960
जोशी, अनराज	State Control over Higher and Secondary Education in India since 1947 A Comparative Study M Ed Raj Uni 1959
जोशी, चिरजीवलाल	Bureaucracy and Educational Policies M Ed Udaipur Uni 1969
जोशी दिनशचन्द्र	A Study of the Concept of School Improvement Programme as Conceived by Teachers and its Bearing on their Work M Ed Udaipur Uni 1966
जोशी वी आर	The Impact of Panchayat Raj on the Primary Schools of Panchayat Samiti Badgaon M A (Rural Studies) Udaipur Uni 1967
जाशी, लक्ष्मीनारायण	Professional Problems of Rural Secondary School Teachers of Udaipur District M Ed Udaipur Uni 1967
टिक्कावाल श्यामप्रकाश	Educational Administration in Rajasthan M Ed Raj Uni 1954
तलसरा हेमलता	उदयपुर शहर मे सरकारी तथा गैर सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे शिक्षा पर लागत व्यय तथा सावजनिक परीक्षा परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, उदयपुर वि वि, 1971
त्रिवेदी, शकरलाल	Pressures on Educational Administration M Ed Udaipur Uni 1967
दरबारीलाल	Leadership Qualities of Successful Secondary School Headmasters in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1967
द्विवेदी हरिश्चन्द्र	The Impact of De centralisation on the Primary Schools of Panchayat Samiti Simalwara M Ed Udaipur Uni 1966

अपेक्षित परिवर्तनों का स्वरूप क्या हो, सामान्य जनता एवं शिक्षक की आकांक्षाओं की पूर्ति में प्रशासन का सहयोग क्या हो अथवा प्रशासन के स्वरूप में अपेक्षित परिवर्तन किस तरह से किए जाने चाहिएँ—इन मुद्दों पर अनुसंधानकर्ताओं को, खास करके प्रशासन या संस्थागत स्तर पर प्रयोगात्मक प्रायोजना कार्य भी करने चाहिए।

सन्दर्भांकित अनुसंधान

अनीवबानू — An Ideal Supervisor as Viewed by Teachers
M Ed Raj Uni 1971

आहूजा, भगवती — A Study of the Familial Adjustment of the Women teachers of the School of Raja Park Jaipur
B A (Adult Education) Raj Uni 1974

उदावत, जगदम्बालाल — An Investigation into the Educational Finance in Rajasthan
M Ed Raj Uni 1954

कोठारी, चन्दनमल — A Survey of A C C and Scouts Organisation in Bikaner Division with reference to Educational Organisational and Financial Factors
M Ed Raj Uni 1962

कौशिक, श्यामलाल — A Comparative Study of Teachers Associations in Rajasthan and the Neighbouring States
Ph. D (Edu) Udaipur Uni 1972

कौशिक सूरजनारायण — Qualifications of the Members of Education Committee of Panchayat Samities and their Effectiveness
M Ed Udaipur Uni 1969

खत्री रामलाल — A Study into the Attitude towards Studies of Primary and Secondary School Teachers in Chittorgarh District
B A (Adult Education) Raj Uni 1972

गर्ग, भँवरलाल — A Study of Reforms Introduced by the Board of Secondary Education Rajasthan and Their Impact on Teachers
M Ed Udaipur Uni 1968

गालव नन्दलाल — A Study of Values and Job Satisfaction of Secondary School Teachers
M Ed Udaipur Uni 1969

गौरी गफूरमोहम्मद — An Investigation into the Attitudes of Secondary School Teachers towards the Prevailing Practices of Inspection in Rajasthan
M Ed Raj Uni 1960

चारण सांवलदान — The Role of Private High School in the Educational Development of Rajasthan
M Ed Raj Uni 1953

चौधरी सुषमा	माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर राजस्थान और हरियाणा के प्रधानाध्यापकों एव प्रधानाध्यापिकाओं की प्रशासकीय समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1974
चौधरी, हरदीनाराम	नागौर जिले के माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयो मे परिवीक्षण के प्रभाव का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1974
जगदीशनारायण	Trends in Local Educational Administration in India since Independence A Comparative Study M Ed Raj Uni 1958
जन प्रह्लादराय	A Comparative Study of the Development of Rural Higher Education in India U K U S A and U S S R M Ed, Raj Uni 1960
जोशी, धनराज	State Control over Higher and Secondary Education in India since 1947 A Compara tive Study M Ed Raj Uni 1959
जोशी चिरजीवलाल	Bureaucracy and Educational Policies M Ed Udaipur Uni 1969
जोशी, दिनेशचन्द्र	A Study of the Concept of School Improve ment Programme as Conceived by Teachers and its Bearing on their Work M Ed Udaipur Uni 1966
जोशी वी आर	The Impact of Panchayat Raj on the Primary Schools of Panchayat Samiti Badgaon M A (Rural Studies) Udaipur Uni 1967
जाशी लक्ष्मीनारायण	Professional Problems of Rural Secondary School Teachers of Udaipur District, M Ed Udaipur Uni 1967
टिक्कावाल श्यामप्रकाश	Educational Administration in Rajasthan, M Ed Raj Uni 1954
तलेसरा हेमलता	उदयपुर शहर में सरकारी तथा गर सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालयो मे शिक्षा पर लागत व्यय तथा सावजनिक परीक्षा परिणामो का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, उदयपुर वि वि, 1971
त्रिवेदी, शकरलाल	Pressures on Educational Administration M Ed Udaipur Uni 1967
दरबारीलाल	Leadership Qualities of Successful S condary School Headmasters in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1967
द्विवेदी हरिश्चन्द्र	The Impact of De-centralisation on the Pri mary Schools of Panchayat Samiti Simal wara M Ed Udaipur Uni, 1966

द्विवेदी श्यामनारायण
इटावा जनपद के सहायता प्राप्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की समस्याओं का अध्ययन,
एम एड, राज वि वि, 1973

देवल गुमानसिंह
पंचायत समिति और शिक्षा विभागीय प्राथमिक शाला के शिक्षकों की समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन,
एम एड, राज वि वि 1973

द्रोण कृष्णवीर
Factors Leading to Students Unrest A Psychological Study
M Ed Udaipur Uni 1969

धर्मपालसिंह
Trends in the Administrative Partnership between the Central State and Local Educational Authorities in India since 1947
M Ed Raj Uni 1959

पन्त महेन्द्रकुमार
अजमेर नगर के माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों की अध्यापन-व्यवस्था के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन
एम एड राज वि वि, 1972

पन्ड्या शकुन्तला
माध्यमिक शाला स्तर पर कार्यरत अध्यापिकाओं की समस्याएँ,
एम एड, राज वि वि 1974

प्रसार सेवा विभाग
राजस्थान में सत्र 1973 74 में विद्यालय संगमों के कार्यों का अध्ययन
राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय सांगानेर
1974

पचार, शान्ति
A Study of a School Principal s Job
M Ed Udaipur Uni 1967

पाठक, आर बी
The Role of Inspectorial Staff in Educational Administration of Indore District (Madhya Pradesh)
M Ed Raj Uni 1964

पाण्डे आर जी
The Growth and Development of the Vidya Bhawan Basic School
M Ed Raj Uni 1953

पालीवाल देवाराम
The Role of the Inspector of Schools in the Educational Administration of Udaipur District
M Ed Udaipur Uni 1966

पारीक कृष्णा
Job Satisfaction of Men and Women Teachers in Relation to their Experience
M Ed Raj Uni 1972

पुरोहित एच सी
A Study of the Self Esteem and Job Satisfaction of Teachers
B A (Adult Edu) Raj Uni, 1969

बेनीवाल, ओमप्रकाश	राजस्थान मे शिक्षा के क्षेत्र मे कार्यरत विशिष्ट अभिकरणो के कार्यों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1973
भटनागर, जगदीशनारायण	An Investigation into Some Administrative Problems of Primary Schools under Panchayat Samiti Badgaon M Ed Udaipur Uni 1967
भडावत, उमरावमल	Causes of Students Unrest in India M Ed Raj Uni 1969
भामू, गणपतसिंह	The Administration of Primary Education *under the Panchayat Samiti Fatehpur* M Ed Udaipur Uni 1965
मानवेन्द्रसिंह	उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अपव्यय एव अवरोधन, एम एड, राज वि वि, 1974
मिश्रा, हरिनन्दन	A Study of Drop outs and Repeaters in Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1968
मूंदडा, शंकरलाल	विद्याभवन सोसाइटी के विगत तीन दशक, एम एड, राज वि वि, 1970
मेहता, कृष्णचन्द्र	Administrative Problems of School Complex Programme in Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1973
मेहता च सि मिश्रा, ह न एव वर्मा प ला	School Complex Programme in Rajasthan Govt Teachers Training College Bikaner 1972
मेहता, पारसमल	Diagnosis of the Problems of Educational Administration in the Panchayat Raj M Ed Raj Uni 1962
यादव, जी एल	Survey of the Inspections of Primary Schools by Education Extension Officers in Udaipur District SIE Udaipur 1966
यादव, हरिराम	अधिकतम स्वीकृत एव न्यूनतम स्वीकृत अध्यापकों के मूल्य एम एड, राज वि वि, 1971
याज्ञनिक, गोविन्दमाधव	Transfer Problems of the Heads of Govt Secondary/S T C Schools in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1967
रामदेव विजयराज	A Comparative Study of the Views of Pupils Teachers and Administrators of Secondary Schools about the Problems of Indiscipline M Ed Jodhpur Uni 1970
लड्ढा गोवर्धनलाल	The Role of Education Extension Officer in the Changing Pattern of Society M Ed Udaipur Uni 1967

लाल एमरल्ड अरवजेंड्रा	A Comparative Study of the Service Conditions of Teachers in Government and Aided Secondary Schools in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1967
वगू मोहनलाल	A Study of Some Significant Developments in Secondary Education in the States of Rajasthan and Jammu & Kashmir M Ed Raj Uni 1963
वर्मा, जगदीशप्रसाद	A Study of Contribution of Private Enterprize to the Educational Development of Udaipur M Ed Raj Uni 1968
वर्मा एन एन	A Survey of the Uneconomic Secondary and Higher Secondary Schools of Rajasthan S I E Udaipur 1968
व्यास अमचरण	बीकानेर शहर के माध्यमिक व उच्च माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की समस्याओं का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
व्यास कन्नानाथ	An Investigation into the Working Conditions of Teachers of Aided Secondary and Higher Secondary Schools M Ed Udaipur Uni 1967
व्यास जगदीशचन्द्र	उदयपुर-कोटा परिक्षेत्र के प्रधानाध्यापक वाक्पीठ एक अध्ययन एम एड उदयपुर वि वि, 1969
व्यास जगनानचन्द्र	पाली जिले में आठवीं कक्षा के स्तर पर शाला छोड़ने के कारणों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1968
व्यास जानकीलाल	A Study of Aims Objectives Functions and Organisation of Central Schools in India M Ed Udaipur Uni 1967
विजय श्यामबिहारी	A Study of Teachers Unrest in Rajasthan M Ed Udaipur Uni 1969
वैष्णव हंसराज	Patterns of Educational Finance in Government and Private Institutions M Ed Udaipur Uni 1969
शर्मा अमरलाल	Wastage and Stagnation in the Primary Schools of Udaipur City M Ed Raj Uni 1955
शर्मा के एन	Supervision in Higher Secondary Schools of Udaipur District Rajasthan A Comparative Study with the U S A , M Ed Raj Uni 1961
शर्मा, गोपालदास	Expectations from a Supervisor M Ed Raj Uni 1974
शर्मा, जनार्दनप्रसाद	A Study of Role Conflict in Headmasters of Secondary Schools in Rajasthan M Ed Udaipur Uni., 1968

शर्मा, वृजमोहन	An Investigation into the Attitudes of Teachers serving in Multi Purpose Schools of Rajasthan towards School Supervision M Ed Raj Uni 1960
शर्मा, भँवरलाल	The Problems of Single Teacher Primary Schools of Panchayat Samiti Ghatol District Banswara *M Ed Udaipur Uni 1966*
शर्मा, भरतलाल	A Study of the Reading Interests and Habits of Primary School Teachers M Ed Udaipur Uni 1967
शर्मा मांगीलाल	अध्यापकों के मूल्यों का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1970
शर्मा मुरलीमोहन	उदयपुर शहर मे माध्यमिक शिक्षा मे स्वच्छिक प्रयास की भूमिका एम एड, उदयपुर वि वि, 1974
शर्मा, मोहनप्रकाश	भारत के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के गठन एव कार्यों का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि, 1972
शर्मा, रामदत्त	The Evaluation of Pattern of Educational Administration in India since 1813 M Ed Raj Uni 1962
शर्मा, शिवकुमार	A Study to find out Wastage and Stagnation in Class I of a Primary School of Delwara Village SIE Udaipur 1965
शर्मा, शिवदत्त	An Investigation into the Attitudes of Teachers towards Modern Trends in Education M Ed Raj Uni 1968
शर्मा सत्यनारायण	*A Study of the Problems of the Trained* Teachers in Primary Schools M Ed Udaipur Uni 1967
शर्मा, हरिशंकर	School Complex A Case Study M Ed Raj Uni 1974
शृंगी, महावीरकुमार	Unit Cost of Higher Secondary Education in Rural and Urban Areas M Ed Udaipur Uni 1969
श्रीवास्तव, ए एल एव वर्मा पी एल	School Complex Programme in Chittorgarh District (With Special Reference to its Impact on Teachers) Inspector of Schools Chittorgarh 1972
श्रीवास्तव प्रकाशचन्द	A Study of Inspection Reports by Inspectors of Schools M Ed Raj Uni 1973

साबू शमशेरसिंह	An Investigation into the Personal and Professional Problems of Teachers Serving in Secondary Schools of Bikaner Division M Ed Raj Uni 1960
सिसोदिया, ज एस	A Study of the Factors influencing Girls Enrolment in Primary Schools of Panchayat Samiti Balesar M Ed Raj Uni 1969
हरचरणकौर	A Study of the Attitudes of Secondary School Teachers towards their Profession M Ed Jodhpur Uni 1970
हाण्डा, पुष्पारानी	A Study of Professional Problems of Secondary School Teachers in Relation to their Experience (Quality point) and Adjustment M Ed Raj Uni 1970
हुक्कू, वी एन	The Case Study of Four Higher Secondary Schools to Recognize Patterns of Schooling in Relation to Academic Achievement, M Ed Raj Uni 1970
हूजा आर सी एव जोशी जी के	Study of the Unit Cost on Primary Middle Higher Secondary and STC Schools of Good Medium and Poor Standards in the State of Rajasthan SIE. Udaipur 1966



विद्यालय-व्यवस्था

□ विद्यासागर शर्मा
□ शशिशेखर व्यास

शिक्षा के क्षेत्र म विद्यालयो की व्यवस्था एव उनके प्रशासन से सबधित पक्ष को दो स्वरूपो मे देखा जा सकता है—एक शिक्षा प्रशासन और दूसरा विद्यालय-व्यवस्था। शिक्षा प्रशासन म विद्यालय सम्बन्धी उन सभी बाह्य एव आन्तरिक प्रशासनिक क्रियाकलापो को सम्मिलित किया जाता है जिनके अन्तगत शिक्षा की मशीनरी को सुव्यवस्थित रूप से चलाने की व्यवस्था विद्यमान हो, जबकि विद्यालय-व्यवस्था मे विद्यालय स्तर के वे सभी कार्यकलाप सन्निहित हैं जिनकी सहायता से शिक्षा के निर्धारित लक्ष्यो को प्राप्त किया जा सके। क्षेत्र की दृष्टि से शिक्षा प्रशासन इतना व्यापक है कि उसम प्राथमिक विद्यालय से लेकर शिक्षा मत्रालय तक की सम्पूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था एव गतिविधियाँ सम्मिलित होती हैं। इसके विपरीत विद्यालय व्यवस्था म प्रशासन का दायरा विद्यालय तक ही सीमित है, और इसम विद्यालयी प्रशासन के साथ ही विद्यालय स्तरीय शैक्षिक, सहशैक्षिक एव अन्य वे सभी क्रियाकलाप सम्मिलित होते हैं, जिनका विद्यालय के उन्नयन स सीधा सम्बन्ध हो। वस्तुत इन दोनो क्षेत्रो म इतना अधिक अन्तर्वेशन एव सहसम्बन्ध है कि इन दोनो को पूरी तरह से अलग अलग परिप्रेक्ष्य म देख सकना कठिन है। यदि शिक्षा प्रशासन को मात्र प्रशासन की दृष्टि स ही देखा जाए तो भी उसम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से विद्यालय-व्यवस्था का पक्ष जुडा रहता है और इसी प्रकार विद्यालय-व्यवस्था म शिक्षा प्रशासन का।

राजस्थान म विद्यालय व्यवस्था के क्षेत्र मे शोध अध्ययन की प्रवृत्ति का विकास बीसवी शताब्दी के छठे दशक से ही प्रारभ हुआ है। इस क्षेत्र म पहला शोध अध्ययन त्रिवेदी (1957) द्वारा किया गया मिलता है। जिसम उदयपुर नगर के एक माध्यमिक विद्यालय की प्रशासनिक व्यवस्था सम्बधी जानकारी प्राप्त करने का प्रयास हुआ। सन् 1951 से 1960 तक के दशक म केवल एक अध्ययन हुआ। सन् 1961 से 1970 तक के दशक म 17 अध्ययन एव सन् 1971 से 1974 तक की अवधि म 10 अध्ययन हुए। यह स्थिति इस तथ्य को इगित करती है कि अनुसधानकर्ताओ का ध्यान इस क्षेत्र की ओर उत्तरोत्तर आकृष्ट होता गया है।

सन् 1974 तक सम्पन्न हुए विद्यालय व्यवस्था सम्बन्धी सभी शोध अध्ययनो को उनके अध्ययन प्रकार की दृष्टि से देखने पर, यह ज्ञात होता है कि अनुसधानकर्ताओ ने

इस क्षेत्र में मुख्यतया सर्वेक्षण, तुलनात्मक अध्ययन, प्रकरण अध्ययन आदि ही किए हैं। यहां कहीं विद्यालयों के विभिन्न पक्षों के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति ज्ञात करने के प्रयास भी किए गए हैं, जिनमें एक पक्ष का नाम मात्र के लिए ही स्पर्श किया गया है।

अब तक किए गए शोध अध्ययनों में सर्वाधिक संख्या प्रमानात्मक सर्वेक्षण (Normative Survey) की है। संख्या की दृष्टि से दूसरा स्थान प्रकरण अध्ययनों का आता है। प्रयोगात्मक अध्ययन केवल एक ही किया गया है। प्रयोगात्मक अध्ययन की दृष्टि से इस क्षेत्र में विद्यार्थियों ने कोई प्रयोग नहीं किया ऐसा प्रतीत होता है। इस दिशा में एकमात्र प्रयोग संस्था-स्तर पर राजस्थान राज्य शिक्षा संस्थान, उदयपुर (1965) द्वारा त्रिघंटा पाठशाला (Three Hours School) पर किया गया।

अब तक किए गए शोध अध्ययनों में जो चार मुख्य पक्ष उभर कर आते हैं, वे हैं विद्यालय योजना, विद्यालयी कार्यक्रम एवं उनकी उपलब्धियाँ, विद्यालय क्षेत्र के पारस्परिक सम्बन्ध और विद्यालय-व्यवस्था एवं उसकी समस्याएँ।

विद्यालय योजना

विद्यालय योजना के अन्तर्गत अब तक केवल दो अध्ययन ही उपलब्ध हैं जिनमें से एक राजस्थान राज्य शिक्षा संस्थान उदयपुर द्वारा और दूसरा एम. एड. स्तर पर किया गया है। मिश्र (1974) ने एक उच्च माध्यमिक विद्यालय की समुन्नयन योजना के सन्दर्भ में प्रकरण अध्ययन किया और पाया कि प्रधानाध्यापक के नेतृत्व व्यवहार में विद्यालय योजना की क्रियान्विति बड़ी आसानी से की जा सकती है और लक्षित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। संस्था स्तर पर राजस्थान राज्य शिक्षा संस्थान, उदयपुर में इस अध्ययन में अनुसंधाता जगन्नाथ शर्मा (1974) ने पाया कि राजस्थान राज्य में विद्यालय समुन्नयन योजनाओं का विधिवत और योजनाबद्ध क्रियान्वयन हुआ है। यह भी ज्ञात हुआ कि समुन्नयन-योजना के क्षेत्र में नैतिक प्रवृत्तियाँ सह-शैक्षिक प्रवृत्तियाँ अध्यापकों की व्यावसायिक उन्नति, विद्यालयों भौतिक स्थिति में उन्नति एवं विकास द्वारा सुझाए गए कार्यक्रम भी मुख्य रहे हैं। किन्तु जब इन योजनाओं का मूल्यांकन किया गया तो इनका स्तर अच्छा नहीं पाया गया।

विद्यालयी कार्यक्रम एवं उनकी उपलब्धियाँ

वैसे इस पक्ष में वस्तुतः विद्यालय की कई प्रवृत्तियाँ आती हैं परन्तु जिन पर अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान विशेष आकर्षित हुआ है वे हैं—अध्यापक परिषद् एवं छात्र नेतृत्व, सह-शैक्षिक प्रवृत्तियाँ एवं विद्यालयी पत्रिकाएँ।

(क) अध्यापक परिषद् एवं छात्र नेतृत्व : जैन (1966) और नसिंहदास (1973) ने क्रमशः उदयपुर और बीकानेर के राजकीय और अराजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थी परिषद् के कार्यकलापों का अध्ययन किया और ज्ञात किया कि अराजकीय विद्यालयों में विद्यार्थी परिषद् का राजकीय विद्यालयों की अपेक्षा एक विशिष्ट स्थान है। जैन ने अपने अध्ययन में पाया कि अराजकीय विद्यालयों में गठित छात्र-परिषदों में सभी विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को सम्मिलित किया जाता था, जबकि

राजकीय विद्यालया म केवल एक अध्यापक और विद्यार्थियो के चुन हुए पदाधिकारियो को ही छात्र-परिषद मे शरीक किया जाता था। नसिंहदास न अपन "यादश मे एक पब्लिक स्कूल को शामिल करते हुए पाया कि पब्लिक स्कूल म अन्य दो प्रकार के विद्यालयो के अध्यापको की अपेक्षा गृहपति का ज्यादा प्रभाव होता था। अब्दुलगफार (1971) ने उच्च माध्यमिक विद्यालया म स्टास और कक्षा प्रतिनिधियो का नेतृत्व के गुणा की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि मानविकी दल की बालिकाओ के अलावा स्टाम (बालक और बालिकाएँ) कई कार्यों मे छात्र प्रतिनिधिया से श्रेष्ठ थे। दवे (1972) ने राजकीय और अराजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयो में निणया "वयन सम्बन्धी कामा में अध्यापका के सहयोग पर एक अध्ययन किया। परिणाम स्वरूप ज्ञात हुआ कि राजकीय विद्यालया में बजट बनाने में अध्यापका का सहयोग नही लिया जाता। विद्यार्थिया की भर्ती के सम्बन्ध में भी राजकीय और अराजकीय विद्यालया में क्रमश 77 प्रतिशत और 72 प्रतिशत निणय प्रधानाध्यापक द्वारा लिए जात थे। केवल 25 प्रतिशत मामले, जसे पुस्तकालय व्यवस्था, सास्कृतिक कायक्रम आदि में प्रधानाध्यापक अपने सहायक अध्यापका की राय लते थे।

(ख) सहगामी प्रवृत्तिया इन प्रवृत्तिया के अन्तगत अनुसधानकर्ताओ ने पुस्तकालय व्यवस्था, खेल व शारीरिक शिक्षा व्यवस्था और इन व्यवस्थाओ के प्रति विद्यार्थियो की अभिवृत्ति को प्रमुख मान कर शोध अध्ययन किया। श्रीमती सक्सेना (1971) ने माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयो और राजस्थान राज्य शिक्षा सस्थान के तत्वाधान म बोहरा (1973) न उच्च प्राथमिक विद्यालयो के पुस्तकालया का अध्ययन किया। श्रीमती सक्सेना न ज्ञात किया कि केवल 38 प्रतिशत विद्यालया मे पुस्तकालय अच्छी स्थिति म थ। 88 प्रतिशत विद्यालया म पुस्तका की सख्या पर्याप्त थी, किन्तु बठने की व्यवस्था ठीक नहा थी। केवल 3 प्रतिशत विद्यालय ही एसे थे जिनम प्रशिक्षित स्नातक पुस्तकालयाध्यक्ष थे और पुस्तको का वर्गीकरण किया हुआ था। सत्र 1969 70 के आँकडा के अनुसार बालका द्वारा पढी जाने वाली पुस्तका की वार्षिक औसत सख्या 5 थी। 56 प्रतिशत छात्र केवल कहानी की पुस्तकें ही पढ़त थे। बोहरा ने ज्ञात किया कि उच्च प्राथमिक विद्यालया के पुस्तकालयों म औसत 1130 पुस्तकें उपलब्ध थी। सर्वाधिक पुस्तकें हिन्दी भाषा म थी। बाल-साहित्य पर 47 1 प्रतिशत, विज्ञान पर 5 5 प्रतिशत और शेष पुस्तकें अन्य विषयो की थी। पुस्तकालय की दृष्टि से अलग कमरा कवल 32 प्रतिशत विद्यालया म था। चल पुस्तकालया का सुविधा केवल 10 विद्यालया को उपलब्ध थी। प्रति विद्यालय वषभर मे औसत 24 छात्र ही पुस्तकालय का लाभ लेत थ। 92 3 प्रतिशत विद्यालया म दनिक समाचार पत्र आत थे।

उपाध्याय (1973) न उच्च माध्यमिक विद्यालयो म खेल एव शारीरिक शिक्षा के कायक्रमा का प्रशासन और व्यवस्था की दृष्टि से अध्ययन किया और निष्कष के रूप म यह पाया कि विद्यालया म खेल कूद का सामान अपर्याप्त था और विद्यार्थियो के लिये शारीरिक शिक्षा सुविधाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। इस सम्बन्ध म अभिभावकों की वृत्ति भी उदासीन पाई गई।

गुप्ता (1970) ने विद्यालय व्यवस्था के विभिन्न पक्षों, यथा—पुस्तकालय, कक्षा शिक्षण, गृह कार्य, पाठ्य सामग्री आदि के प्रति ग्रामीण व शहरी माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की जानकारी की और पाया कि शहरी छात्रों व बालक-बालिकाओं की अभिवृत्ति इनके प्रति अनुकूल थी। इसी अध्ययन में यह भी पाया गया कि छात्राओं की तुलना में छात्रों की अभिवृत्ति अध्यापकों के प्रति कम अनुकूल थी।

(ग) **विद्यालयी उपलब्धियाँ** विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत तय किए गए लक्ष्यों की प्राप्ति की स्थिति का अध्ययन करते शर्मा (1966) ने उदयपुर शहर के एक विद्यालय का प्रकरण अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि शिक्षकों की अभिवृत्ति एवं छात्रों और शिक्षकों के पारस्परिक सम्बन्धों की मधुरता इस दिशा में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नागनाथन (1968) ने मात्रात्मक दृष्टि से उच्च और निम्न उपलब्धियों वाले विद्यालयों का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि उच्च उपलब्धि प्राप्त करने वाले विद्यालयों में *भौतिक साधन-सुविधाएँ उपलब्ध* मात्रा में उपलब्ध थीं, शिक्षकों को अच्छा वेतन मिलता था। इन विद्यालयों में सामाजिक वातावरण, उपचारात्मक कक्षाएँ, गृहकार्य आदि पर विशेष ध्यान दिया जाता था। सक्सेना एवं (1971) ने एक आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने वाली छात्राओं की शैक्षिक सम्प्राप्ति, उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं तथा मनोकामनाओं का अध्ययन किया और ज्ञात किया कि जो छात्राएँ छात्रावास में अधिक समय से रह रही हैं उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति अपेक्षाकृत उच्च स्तरीय होती है। अध्ययन के निष्कर्षों में यह भी पाया गया कि कुछ गुण, जैसे—अन्तर्मुखीपन, बहिर्मुखीपन, बुद्धि, सृजनात्मक स्थिरता, चिन्ता आदि पर आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो मनोकामनाएँ छात्राओं की छात्रावास में प्रवेश के समय होती हैं वे ही अन्त तक रहती हैं।

पारस्परिक सम्बन्ध

विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत पारस्परिक सम्बन्धों के क्षेत्र में जो शोध-अध्ययन उपलब्ध हैं उनमें से एक शोध प्रबन्ध स्तर का है। शर्मा (1969) ने अपनी पीएच.डी. की शोध प्रायोजना में राजस्थान के बड़े नगरों के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययन किया। इस अध्ययन में प्राक्कल्पना के आधार पर सहभागी, तटस्थ और प्रतिगामी विद्यालयों की व्याख्या करते हुए जिला शिक्षा अधिकारियों से उनके क्षेत्र के ऐसे विद्यालयों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई और राज्य में उपयुक्त प्रत्येक श्रेणी के दो-दो विद्यालयों का चयन किया गया। बेल्स कैटेगरी सिस्टम (Bales Category System) के आधार पर इन विद्यालयों के अध्यापकों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनकी औपचारिक व अनौपचारिक प्रतिष्ठा समूहों का निर्माण और व्यावहारिक प्रतिमानों का गहन अध्ययन किया गया। शर्मा ने निष्कर्ष निकाला कि प्रधानाध्यापकों की प्रतिष्ठा का ऊँचा या कम होना उनकी अनौपचारिक प्रतिष्ठा पर निर्भर करता है। जब अध्यापकों या प्रधानाध्यापकों के अपेक्षित कार्यकलापों और [illegible] में सामंजस्य नहीं होता तभी [illegible] समस्या [illegible] और

(1964) ने उदयपुर शहर

के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया और पाया कि पारस्परिक सम्बन्धों का मूल आधार प्रधानाध्यापक का व्यक्तित्व है। नारग (1966) ने जयपुर के एक बड़े बहुउद्देशीय उच्च माध्यमिक विद्यालय म सम्प्रेषणीयता के माध्यमों का अध्ययन करते हुए पाया कि सम्प्रेषण माध्यमों मे अध्यापकों की बठकों का एक प्रमुख स्थान था। वर्मा (1968) के अनुसार दो पारी विद्यालयो मे पारस्परिक सम्बन्ध इतने अच्छे नहीं थे, जितने कि एक पारी विद्यालयों म। एक पारी विद्यालयों म सम्प्रेषण व्यवस्था सीधी होने से पारस्परिक सम्बन्ध अच्छे थे। शिक्षक समितियों के गठन पर अध्ययन करके सक्सेना (1972) ने मालूम किया कि उनके सगठत, कार्यप्रणाली, सविधान, पारस्परिक सम्बन्धों आदि मे सुस्पष्टता नहीं थी। निर्णयान्वयन और सचालन दोनो स्तरों पर सहयोग का अभाव था जिसके कारण ये समितियाँ न तो विद्यालय म सुदृढ वातावरण बना पाती थी न ही शक्षिक चिन्तन कर पाती थी।

विद्यालय प्रशासन एव उसकी समस्याएँ

शोध अध्ययनों की दृष्टि से राज्य म यह पक्ष शोधकर्ताओं को सर्वाधिक प्रिय रहा प्रतीत होता है। इस क्षेत्र म अब तक 10 शोध अध्ययन किए जा चुके हैं, जिनमे अनुसधानकर्ताओ ने शक्षिक परिवीक्षण प्रशासनिक समस्याएँ छात्रों का भगोडापन और उनकी विद्यालय म अनुपस्थिति के कारणों का अध्ययन किया है। इन शोध अध्ययनो मे एक अध्ययन सस्थान स्तर पर व शेष नौ एम एड के विद्यार्थियो द्वारा सम्पादित किए गए।

गहलोत (1965) और चौहान (1970) ने उच्च माध्यमिक व माध्यमिक विद्यालयों म शक्षिक परिवीक्षण का अध्ययन किया। अपने प्रकरण अध्ययन मे गहलोत ने पाया कि शक्षिक परिवीक्षण का कार्यक्रम व्यावसायिक उन्नति की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। चौहान ने उदयपुर के दस माध्यमिक विद्यालयो के सम्बन्ध म पाया कि विद्यालयो मे दनिक कार्य के परिवीक्षण के लिए प्रधानाध्यापकों को बहुत कम समय मिल पाता था और व इस कार्य को साधारणत अपने प्रथम सहायक को सौंप देते थे। इस अध्ययन म यह भी पाया गया कि विद्यालयो में परिवीक्षण का रेकार्ड नही रखा जाता था और अनुवर्तन कार्य भी नही सुझाए जाते थे।

चेतनस्वरूप (1970) ने बालकों के भगोडेपन तथा शर्मा (1972) ने छात्रों के विद्यालय में अनुपस्थित रहने के कारणों का अध्ययन किया। चेतनस्वरूप ने पाया कि भगोडेपन और छात्रों की बुद्धि में कोई सार्थक सम्बन्ध नही है लेकिन भगोडेपन और सामाजिक आर्थिक स्तर में सार्थक सम्बन्ध है। विद्यार्थियो का विद्यालयी वातावरण के साथ सामजस्य नहीं होना भगोडेपन का एक प्रमुख कारण था। शर्मा के अध्ययन के अनुसार विद्यालयो में बालकों का उपस्थित नहीं रहने में उनके घरेलू वातावरण का प्रभाव होता है। उसका दुष्प्रभाव बालिकाओ की अपेक्षा बालकों पर अधिक पड़ता है। आर्थिक और सामाजिक स्तर की समस्याएँ भी बालकों की विद्यालय में अनुपस्थिति का प्रमुख कारण थी। त्रिवेदी (1957) कमल (1963) सूद (1964) जैन (1969) और

गुप्ता (1970) ने विद्यालय व्यवस्था के विभिन्न पक्षों, यथा–पुस्तकालय, कक्षा शिक्षण, गृह कार्य, पाठ्यसामग्री आदि के प्रति ग्रामीण व नगरीय माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति को जानकारी की और पाया कि दोनों ही क्षेत्रों के बालक-बालिकाओं की अभिवृत्ति इनकी ओर अनुकूल थी। इसी अध्ययन में यह भी पाया गया कि छात्राओं की तुलना में छात्रों की अभिवृत्ति अध्यापकों के प्रति कम अनुकूल थी।

(ग) **विद्यालयी उपलब्धियाँ** विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत तय किए गए लक्ष्यों की प्राप्ति की स्थिति का अध्ययन करके शर्मा (1966) ने उदयपुर शहर के एक विद्यालय का प्रकरण अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि शिक्षकों की अभिवृत्ति एवं छात्रों और शिक्षकों के पारस्परिक सम्बन्धों की मधुरता इस दिशा में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नागनाथन (1968) ने प्रशासनिक दृष्टि से उच्च और निम्न स्तर वाले विद्यालयों का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि उच्च उपलब्धि प्राप्त करने वाले विद्यालयों में भौतिक साधन-सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थीं, शिक्षकों को अच्छा वेतन मिलता था। इन विद्यालयों में सामाजिक वातावरण, उपचारात्मक कार्य इत्यादि आदि पर विशेष ध्यान दिया जाता था। भटनागर देवी (1971) ने एक आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने वाली छात्राओं की शैक्षिक सम्प्राप्ति उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं तथा मनोकामनाओं का अध्ययन किया और पता किया कि जो छात्राएँ छात्रावास में अधिक समय से रह रही हैं उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति अपेक्षाकृत उच्च स्तरीय होती है। अध्ययन के निष्कर्षों में यह भी पाया गया कि कुछ गुण जैसे—अन्तर्मुखीपन बहिर्मुखीपन, बुद्धि, भावनात्मक स्थिरता, विवेक आदि पर आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो मनोकामनाएँ छात्राओं की छात्रावास में प्रवेश के समय होती हैं वे ही अन्त तक रहती हैं।

पारस्परिक सम्बन्ध

विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत पारस्परिक सम्बन्धों के क्षेत्र में जो शोध-अध्ययन हुए हैं, उनमें से एक शोध ही स्तर का है। शर्मा (1969) ने अपनी पीएच. डी. शोध प्रायोजना में राजस्थान के केन्द्रीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययन किया। इस अध्ययन में प्राक्कल्पना के आधार पर सहकारी, तटस्थ और प्रतिरोधी विद्यालयों की व्याख्या करते हुए जिला शिक्षा अधिकारियों से उनके क्षेत्र के ऐसे विद्यालयों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई और बाद में उपर्युक्त प्रत्येक श्रेणी के दो-दो विद्यालयों का चयन किया गया। बेल्स कैटेगरी सिस्टम (Bales Category System) के आधार पर इन विद्यालयों के अध्यापकों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनकी औपचारिक व अनौपचारिक प्रतिष्ठा सम्बन्धों का निर्माण और व्यावहारिक प्रतिमानों का गहन अध्ययन किया गया। शर्मा ने निष्कर्ष निकाला कि प्रधानाध्यापकों की प्रतिष्ठा का ऊँचा या कम होना उनकी अनौपचारिक प्रतिष्ठा पर निर्भर करता है। जब अध्यापकों या प्रधानाध्यापकों के अपेक्षित कार्यकलापों और वास्तविक कार्यकलापों में सामंजस्य नहीं होता, तभी स्टाफ के सदस्यों में शंकाएँ और झगड़े उत्पन्न होते हैं। गुप्ता (1964) ने उदयपुर शहर के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रधानाध्यापकों व अध्यापकों

के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया और पाया कि पारस्परिक सम्बन्धों का मूल आधार प्रधानाध्यापक का व्यक्तित्व है। नारंग (1966) ने जयपुर के एक बडे बहुउद्देशीय उच्च माध्यमिक विद्यालय म सम्प्रेषणीयता के माध्यमो का अध्ययन करते हुए पाया कि सम्प्रेषण माध्यमों मे अध्यापको की बठकों का एक प्रमुख स्थान था। वर्मा (1968) के अनुसार दो पारी विद्यालयो म पारस्परिक सम्बन्ध इतने अच्छे नही थे, जितने कि एक पारी विद्यालयो म। एक पारी विद्यालयो म सम्प्रेषण व्यवस्था सीधी होने से पारस्परिक सम्बन्ध अच्छे थे। शिक्षक समितियो के गठन पर अध्ययन करके सक्सेना (1972) ने मालूम किया कि उनके सगठन, कार्यप्रणाली, सविधान, पारस्परिक सम्बन्धो आदि म सुस्पष्टता नही थी। निर्णय चयन और सचालन दोनो स्तरो पर सहयोग का अभाव था जिसके कारण ये समितियाँ न तो विद्यालय मे सुदृढ वातावरण बना पाती थी न ही शक्षिक चिन्तन कर पाती थी।

विद्यालय प्रशासन एव उसकी समस्याएँ

शोध अध्ययनो की दृष्टि स राज्य मे यह पक्ष शोधकर्ताओ को सर्वाधिक प्रिय रहा प्रतीत होता है। इस क्षेत्र म अब तक 10 शोध अध्ययन किए जा चुके हैं, जिनम अनुसधानकर्ताओ ने शक्षिक परिवीक्षण प्रशासनिक समस्याएँ छात्रो का भगोडापन और उनकी विद्यालय म अनुपस्थिति के कारणो का अध्ययन किया है। इन शोध अध्ययनो मे एक अध्ययन सस्थान स्तर पर व शेष नौ एम एड के विद्यार्थियो द्वारा सम्पादित किए गए।

गहलोत (1965) और चौहान (1970) न उच्च माध्यमिक व माध्यमिक विद्यालयो म शैक्षिक परिवीक्षण का अध्ययन किया। अपने प्रकरण अध्ययन म गहलोत न पाया कि शक्षिक परिवीक्षण का कार्यक्रम व्यावसायिक उन्नति की दृष्टि स बहुत उपयोगी है। चौहान न उदयपुर के दस माध्यमिक विद्यालयो के सम्बन्ध मे पाया कि विद्यालयो म दनिक कार्य के परिवीक्षण के लिए प्रधानाध्यापको को बहुत कम समय मिल पाता था और वे इस कार्य को साधारणत अपने प्रथम सहायक को सौंप देत थे। इस अध्ययन म यह भी पाया गया कि विद्यालयो में परिवीक्षण का रेकार्ड नही रखा जाता था और अनुवर्तन कार्य भी नही सुझाए जाते थे।

चेतनस्वरूप (1970) ने बालको के भगोडेपन तथा शर्मा (1972) ने छात्रो के विद्यालय में अनुपस्थित रहने के कारणो का अध्ययन किया। चेतनस्वरूप ने पाया कि भगोडेपन और छात्रो की बुद्धि में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है लेकिन भगोडेपन और सामाजिक आर्थिक स्तर में सार्थक सम्बन्ध है। विद्यार्थियो का विद्यालयी वातावरण के साथ सामजस्य नही होना भगोडेपन का एक प्रमुख कारण था। शर्मा के अध्ययन के अनुसार विद्यालयो में बालको का उपस्थित नही रहने में उनके घरेलू वातावरण का प्रभाव होता है। उसका दुष्प्रभाव बालिकाओ की अपेक्षा बालको पर अधिक पडता है। आर्थिक और सामाजिक स्तर की समस्याएँ भी बालको की विद्यालय में अनुपस्थिति का प्रमुख कारण थीं। त्रिवेदी (1957), कमल (1963) सूद (1964), जैन (1969) और

गुप्ता (1970) ने विद्यालय व्यवस्था के विभिन्न पक्षों, यथा—पुस्तकालय, कक्षा शिक्षण, गृह कार्य, पाठ्यान्तर क्रियाओं आदि के प्रति ग्रामीण व शहरी माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की जानकारी की और पाया कि शहरी क्षेत्रों के बालक-बालिकाओं की अभिवृत्ति ग्रामीणों से अधिक अनुकूल थी। इसी अध्ययन में यह भी पाया गया कि छात्राओं की तुलना में छात्रों की अभिवृत्ति अध्यापकों के प्रति कम अनुकूल थी।

(ग) विद्यालयी उपलब्धियाँ विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत तरह तरह की उपलब्धियों की प्राप्ति की स्थिति का अध्ययन करते हुए शर्मा (1966) ने जयपुर शहर के एक विद्यालय का प्रकरण अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि शिक्षकों की अभिवृत्ति एवं छात्रों और शिक्षकों के पारस्परिक सम्बन्धों की मधुरता इस दिशा में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नागनाथन (1968) ने शैक्षणिक दृष्टि से उच्च और निम्न स्तरीय वर्गों वाले विद्यालयों का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि उच्च स्तरीय परिणाम प्राप्त करने वाले विद्यालयों में भौतिक साधन-सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थीं शिक्षकों को अच्छा वेतन मिलता था। इन विद्यालयों में सामाजिक वातावरण उपयोगात्मक, कक्षाएँ, गृहकार्य आदि पर विशेष ध्यान दिया जाता था। सक्सेना तथा (1971) ने एक आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने वाली छात्राओं की शैक्षिक सम्प्राप्ति उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं तथा मनोवृत्तियों का अध्ययन किया और ज्ञात किया कि जो छात्राएँ छात्रावास में अधिक समय से रह रही हैं उनकी शैक्षिक सम्प्राप्ति अपेक्षाकृत उच्च स्तरीय होती है। अध्ययन के निष्कर्षों में यह भी पाया गया कि कुछेक गुणों जैसे—अनुशासन, बहिर्मुखता, बुद्धि, भावात्मक स्थिरता, विवेक आदि पर आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो मनोवृत्तियाँ छात्राओं की छात्रावास में प्रवेश के समय होती हैं वे ही अन्त तक रहती हैं।

पारस्परिक सम्बन्ध

विद्यालय व्यवस्था के अन्तर्गत पारस्परिक सम्बन्धों के क्षेत्र में जो शोध अध्ययन उपलब्ध हैं उनमें से एक शोध का स्तर का है। शर्मा (1969) ने अपनी शोध की प्रायोजना में राजस्थान के बहुउद्देशीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययन किया। इस अध्ययन में प्राक्कल्पना के आधार पर सहयोगी, तटस्थ और प्रतिरोधी विद्यालयों की व्याख्या करते हुए जिला शिक्षा अधिकारियों से उनके क्षेत्र के ऐसे विद्यालयों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई और बाद में उपयुक्त प्रत्येक श्रेणी के दो-दो विद्यालयों का चयन किया गया। बेल्स कैटेगरी सिस्टम (Bales Category System) के आधार पर इन विद्यालयों के अध्यापकों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनकी औपचारिक व अनौपचारिक प्रतिष्ठा समूहों का निर्माण और व्यावहारिक प्रतिमानों का गहन अध्ययन किया गया। शर्मा ने निष्कर्ष निकाला कि प्रधानाध्यापकों की प्रतिष्ठा का ऊँचा या कम होना उनकी अनौपचारिक प्रतिष्ठा पर निर्भर करता है। जब अध्यापकों या प्रधानाध्यापकों के अपेक्षित कार्यकलापों और वास्तविक कार्यकलापों में सामंजस्य नहीं होता तभी स्टाफ के सदस्यों में शंकाएँ और झगड़े उत्पन्न होते हैं। गुप्ता (1964) ने जयपुर शहर के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रधानाध्यापकों व अध्यापकों

के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया और पाया कि पारस्परिक सम्बन्धों का मूल आधार प्रधानाध्यापक का व्यक्तित्व है। नारंग (1966) ने जयपुर के एक बड़े बहुउद्देशीय उच्च माध्यमिक विद्यालय में सम्प्रेषणीयता के माध्यमों का अध्ययन करते हुए पाया कि सम्प्रेषण माध्यमों में अध्यापकों की बैठकों का एक प्रमुख स्थान था। वर्मा (1968) के अनुसार दो पारी विद्यालयों में पारस्परिक सम्बन्ध इतने अच्छे नहीं थे, जितने कि एक पारी विद्यालयों में। एक पारी विद्यालयों में सम्प्रेषण व्यवस्था सीधी होने से पारस्परिक सम्बन्ध अच्छे थे। शिक्षक समितियों के गठन पर अध्ययन करके सक्सेना (1972) ने मालूम किया कि उनके संगठन, कार्यप्रणाली, संविधान, पारस्परिक सम्बन्धों आदि में सुस्पष्टता नहीं थी। निर्णयान्वयन और संचालन दोनों स्तरों पर सहयोग का अभाव था जिसके कारण ये समितियाँ न तो विद्यालय में सुदृढ़ वातावरण बना पाती थीं न ही शैक्षिक चिन्तन कर पाती थी।

विद्यालय प्रशासन एवं उसकी समस्याएँ

शोध अध्ययनों की दृष्टि से राज्य में यह पक्ष शोधकर्ताओं को सर्वाधिक प्रिय रहा प्रतीत होता है। इस क्षेत्र में अब तक 10 शोध अध्ययन किए जा चुके हैं जिनमें अनुसंधानकर्ताओं ने शैक्षिक परिवीक्षण, प्रशासनिक समस्याएँ, छात्रों का भगोड़ापन और उनकी विद्यालय में अनुपस्थिति के कारणों का अध्ययन किया है। इन शोध अध्ययनों में एक अध्ययन संस्थान स्तर पर व शेष नौ एम. एड. के विद्यार्थियों द्वारा सम्पादित किए गए।

गहलोत (1965) और चौहान (1970) ने उच्च माध्यमिक व माध्यमिक विद्यालयों में शैक्षिक परिवीक्षण का अध्ययन किया। अपने प्रकरण अध्ययन में गहलोत ने पाया कि शैक्षिक परिवीक्षण का कार्यक्रम व्यावसायिक उन्नति की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। चौहान ने उदयपुर के दस माध्यमिक विद्यालयों के सम्बन्ध में पाया कि विद्यालयों में दैनिक कार्य के परिवीक्षण के लिए प्रधानाध्यापकों को बहुत कम समय मिल पाता था और वे इस कार्य को साधारणतः अपने प्रथम सहायक को सौंप देते थे। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि विद्यालयों में परिवीक्षण का रेकार्ड नहीं रखा जाता था और अनुवर्तन कार्य भी नहीं सुझाए जाते थे।

चेतनस्वरूप (1970) ने बालकों के भगोड़ेपन तथा शर्मा (1972) ने छात्रों के विद्यालय में अनुपस्थित रहने के कारणों का अध्ययन किया। चेतनस्वरूप ने पाया कि भगोड़ेपन और छात्रों की बुद्धि में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है, लेकिन भगोड़ेपन और सामाजिक आर्थिक स्तर में सार्थक सम्बन्ध है। विद्यार्थियों का विद्यालयी वातावरण के साथ सामंजस्य नहीं होना भगोड़ेपन का एक प्रमुख कारण था। शर्मा के अध्ययन के अनुसार विद्यालयों में बालकों का उपस्थित नहीं रहने में उनके घरेलू वातावरण का प्रभाव होता है। उसका दुष्प्रभाव बालिकाओं की अपेक्षा बालकों पर अधिक पड़ता है। आर्थिक और सामाजिक स्तर की समस्याएँ भी बालकों की विद्यालय में अनुपस्थिति का प्रमुख कारण थी। त्रिवेदी (1957) कमल (1963) सूद (1964), जैन (1969) और

मान्द्राज (1966) ने राजकीय और अराजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों की प्रशासनिक समस्याओं का अध्ययन किया और पाया कि राजकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों की समस्याएं अराजकीय विद्यालयों में कार्य करने वाले अध्यापकों की अपेक्षा अधिक थी। अराजकीय विद्यालयों में शिक्षण स्तर अपेक्षाकृत ऊँचा था और इन विद्यालयों में अध्यापकों की समस्याएं अधिकतर उनके व्यवस्थापकों से सम्बद्ध थीं। अमरजीत सिंह (1963) ने सरकारी विद्यालयों के उद्देश्यों का अध्ययन करके मालूम किया कि विभाग का लक्ष्य विद्यालय के माध्यम से उस इलाके में शैक्षिक उत्प्रेरण पैदा करने का होता है। प्रधानाध्यापकों की नजर में बालकों की परीक्षाओं में अपना परीक्षा फल उन्नत करने का लक्ष्य होता है। अधिकारों का प्रत्यायोजन प्रधानाध्यापक में होता है और वह शैक्षिक निर्णय भी स्वयं तक सीमित रखता है। उन विद्यालयों में असन्तोष की स्थिति अध्यापकों छात्रों और स्वयं प्रधानाध्यापक में भी मौजूद थी।

वर्मा (1968) ने एक पारी व दो पारी में चलाए जा रहे दोनों विद्यालयों का समन्वय व सम्प्रेषणीयता की समस्याओं की दृष्टि से अध्ययन किया और ज्ञात किया कि एक पारी व्यवस्था में अध्यापकों पर कार्यभार अधिक पड़ता है। दो पारी विद्यालयों में अध्यापकों की छुट्टियाँ कम होती हैं और कम संख्या में अध्यापकगण विद्यालयी कार्यकलापों में उत्साह प्रदर्शित करते हैं। द्विसत्रीय तथा बहुसत्रीय विद्यालयों के तुलनात्मक अध्ययन में प्रह्लादनारायणसिंह (1971) ने पाया कि बहुसत्रीय विद्यालयों में व्यवस्था सम्बन्धी समस्याएं अपेक्षाकृत थीं और शिक्षक अप्रशिक्षित। न तो वहाँ व्यावसायिक कार्यों की धारणा थी न छात्र औद्योगिक या व्यावसायिक कार्यों में रुचि रखते थे। द्विसत्रीय विद्यालयों में विज्ञान शिक्षकों का कार्यभार ज्यादा पाया गया और दोनों ही प्रकार के विद्यालयों में प्रयोगशाला का अभाव। 89 प्रतिशत मामलों में भवन, स्थान उपकरण और वित्तीय समस्याएँ प्रमुख थी, शैक्षिक समस्याओं की स्थिति 72 प्रतिशत थी।

राजस्थान राज्य शिक्षा संस्थान उदयपुर ने विद्यालय-व्यवस्था के सम्बन्ध में जो अध्ययन किया है वह है प्रहर पाठशाला का प्रयोग। प्रहर पाठशाला में प्रयास किया गया कि विद्यालयों को राज्य सरकार द्वारा निर्धारित समय पर ही न चला कर समुदाय की आवश्यकतानुसार दिन में किसी भी समय एक प्रहर तक चलाया जाए और यह जाँचा जाए कि प्रारम्भिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों एवं प्रहर पाठशालाओं में शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्रों की उपलब्धियों में क्या अन्तर है। निष्कर्ष के रूप में यह पाया गया कि इन दोनों व्यवस्थाओं में पढ़ने वाले छात्रों की विकासात्मक उपलब्धि में कोई अन्तर नहीं आता और विद्यालय-व्यवस्था के अन्तर्गत प्रहर पाठशालाओं को एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में स्वीकारा जा सकता है।

सम्भावनाएँ और सुझाव

शिक्षा के प्रसार एवं साधन सुविधाओं के अत्यधिक विस्तार के उपरान्त भी इस क्षेत्र में जो शोध अध्ययन हुए हैं उनकी संख्या सन्तोषजनक प्रतीत नहीं होती।

विद्यालय-व्यवस्था के जिन क्षेत्रों में कार्य किया गया है उनमें भी अभी शोध की दृष्टि से बहुत कुछ किया जा सकता है। साथ ही इन क्षेत्रों के अतिरिक्त भी विद्यालयी व्यवस्था के बहुत से ऐसे पक्ष हैं जिन पर शोधकर्ताओं का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ है या किन्हीं कारणों से उन पक्षों को छुआ ही नहीं गया है। ये महत्वपूर्ण पक्ष विद्यालय भवन विद्यालयों की भौतिक साधन-सुविधाएँ, विद्यालय समुदाय के घटकों का परस्पर सहसम्बन्ध, विद्यालयों में अनुरंजनात्मक सुविधाएँ अध्यापकों का कार्य भार विद्यालयी स्वास्थ्य सेवाएँ, अभिभावक शिक्षक सहसम्बन्ध आदि हैं। इन पक्षों पर अध्ययन किए जाने से विद्यालयी व्यवस्था से सम्बन्धित वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त की जा सकती है, जिनके आधार पर विद्यालयी कार्यक्रमों को शिक्षा में उन्नयन की दृष्टि से अधिक उपयोगी और प्रभावी बनाया जा सकता है।

व्यवस्था पक्ष में निजी संस्थाओं की तरह राजकीय संस्थाओं को भी आद्यन्त विद्यालय (कक्षा I से कक्षा XI तक पूरा एक साथ) बनाया जाए तो उनकी सम्प्राप्ति और समस्याएँ क्या रहेंगी—इस दिशा में प्रयोगात्मक कार्य करने की आवश्यकता है। स्तरवार अलगाव का प्रभाव आँकना, शिक्षकों में वेतनवार विभेदीकरण का औचित्य या अनौचित्य खोजना, शक्ति नियोजन और अधिकारों के प्रत्यायोजन की बारीकियों का सर्वेक्षण, समय विभाग चक्र और विषयवार समयानुपात का नई परिस्थितियों में पुनरीक्षण, शिक्षकों के कार्यभार की व्याख्या तथा अन्य व्यवसायों से उसकी तुलना आदि ऐसे प्रसंग हैं जो इस क्षेत्र में अनुसंधान/प्रयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं। मात्र छिद्रान्वेषण करने से कहीं बेहतर होगा कि कुछ रचनात्मक प्रयोग किए जाएँ और उनके आधार से परिवर्तन की दिशाएँ खोली जाएँ।

संदर्भांकित अनुसंधान

अब्दुलगफ्फार	A Comparative Study of Leadership Functions Performed by the Representatives and Stars of the Higher Secondary Classes M Ed Raj Uni 1971
अमरजीतसिंह	A Study of the Administrative Set up of a Govt Higher Secondary School at Udaipur M Ed Raj Uni 1963
उपाध्याय विनोदचन्द्र	*उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में खेलकूद एवं शारीरिक* शिक्षा का प्रशासन एवं संगठन, एम एड राज वि वि, 1973
कमल केवलकृष्ण	A Study of the Administrative Set up of a Privately Managed High School of Udaipur M Ed Raj Uni 1963
गहलोत नाहरसिंह	A Case Study of the Programme of Instructional Supervision in Vidya Bhawan M P H S School Udaipur M Ed Udaipur Uni 1965

गुप्ता रमाचन्द्र	विद्यालय के विभिन्न पक्षों के प्रति छात्रों की अभिवृत्ति, एम एड, राज वि वि 1970
घनस्वरूप	A Study of the Causes of Truancy in IX Class Boys Reading in Higher Secondary Schools of Jodhpur M Ed Jodhpur Uni 1970
चौहान उदयसिंह	A Study of the Instructional Supervision in Secondary Schools of Udaipur City, M Ed Udaipur Uni 1970
जैन कुन्दनलाल	The Role of Student Unions in the Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1966
जैन बाबूलाल	A Comparative Study of the Administrative Problems of Government and Privately Managed Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1969
तापनीवाल घनश्यामलाल	A Study of Factors Differentiating Academically High and Low Achieving Schools M Ed Udaipur Uni 1968
त्रिवेदी जी एम	Some Problems of Administration of High Schools in Udaipur M Ed Raj Uni 1957
देव, अमृतलाल वी	Teacher Participation in Decision Making in Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1972
नारंग बसन्तस्वरूप	A Study of Communication Channels in a Large Multipurpose School M Ed Udaipur Uni 1966
नसिंहराम	उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत छात्र संसदों का अध्ययन एम एड राज वि वि 1973
प्रह्लादनारायणसिंह	उदयपुर क्षेत्र की द्विमकाय एवं बहुमकाय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रशासनिक समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
बोहरा देवराज	राजस्थान में उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुस्तकालयों की स्थिति राज्य शिक्षा संस्थान, 1973
भारद्वाज, [illegible]	A Comparative Study of the Administrative Problems of the Teachers Working in Govt and Privately Managed Secondary and Higher Secondary Schools of Udaipur City M Ed Udaipur Uni 1966

माथुर छलबिहारी	An Investigation into the Functioning of Staff Councils in the Secondary Schools of Udaipur M Ed Raj Uni 1963
मिश्र कपिलदेव	Case Study of Institutional Planning in a School M Ed Raj Uni 1974
वर्मा पन्नालाल	A Study of Problems of Coordination and Communication in Double shift and Single-shift Schools M Ed Udaipur Uni 1968
शर्मा केदारनाथ	A Case Study of a Multipurpose Higher Secondary School of Udaipur, M Ed Udaipur Uni 1966
शर्मा जगदीशदत्त	A Critical Appraisal of the Implementation of School Improvement Plans in Rajasthan SIE Udaipur 1974
शर्मा, लालचन्द	सामाजिक आर्थिक स्तर, बुद्धि और लिंग भेद के सन्दर्भ मे शालाओं मे अनुपस्थिति के कारणों का अध्ययन एव इसका निष्पत्ति पर प्रभाव एम एड राज वि वि, 1972
शर्मा शिवकुमार	A Study of the Staff Relations in the Multi purpose Higher Secondary Schools of Rajasthan Ph D (Ed) Udaipur Uni. 1969
शुक्ला, के सी	The Pattern of Relationship between the Head and the Members of the Staff in two Higher Secondary Schools of Udaipur M Ed Raj Uni 1964
सक्सेना राज्यश्री	Functioning of the Teachers Councils in the Girls Secondary and Higher Secondary Schools M Ed Raj Uni 1972
सक्सेना स्वराज्यदेवी	बीकानेर मण्डल के माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालयों की कार्य-व्यवस्था का अध्ययन, एम एड, राज वि वि, 1971
सरोजनीदेवी	आवासीय विद्यालय मे अध्ययन करने वाली छात्राओं की शैक्षिक सप्राप्ति, व्यक्तित्व की विशेषताओं तथा मनोकामनाओं का अध्ययन, एम एड, राज वि वि 1971
सूद जे ओ के	Sharing of Responsibilities in School Organisation M Ed Raj Uni 1964

समाज शिक्षा

□ मोहम्मद हुसन

समाज शिक्षा देश के नागरिकों में राजनैतिक एवं आर्थिक-सामाजिक सांस्कृतिक चेतना जागृत करने, उनको अपने कर्त्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति सजग करने का एक सशक्त माध्यम है। प्रजातन्त्र को सुदृढ़ करके देश को समृद्धिशाली एवं शक्तिशाली बनाने में यह कार्यक्रम काफी सहायक हो सकता है। राजस्थान में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के साथ ही यह कार्यक्रम योजनाबद्ध तरीके से आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम इसका आरम्भ प्रौढ़-साक्षरता अभियान के रूप में हुआ। प्रौढ़ साक्षरता से प्रौढ़ शिक्षा तथा उसके पश्चात् समाज शिक्षा के रूप में यह कार्यक्रम व्यापक एवं विस्तृत होता चला गया और कई नई संकल्पनाएँ उभर कर आई। प्रौढ़-साक्षरता, प्रौढ़ शिक्षा, व्यावसायिक साक्षरता, सामुदायिक शिक्षा, सतत शिक्षा, अनवरत शिक्षा, किसान क्रियात्मक साक्षरता, अनौपचारिक शिक्षा, आजीवन शिक्षा आदि सभी सम्प्रत्यय समाज शिक्षा के क्षेत्र में समाहित हैं और इसके महत्व एवं इसकी उपादेयता में उत्तरोत्तर वृद्धि के परिचायक हैं।

राष्ट्रीय स्तर के इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम के स्वरूप, संगठन, प्रबन्ध एवं दुर्बल पक्षों की समीक्षा, समालोचना एवं सर्वेक्षण करके इसके सुन्दर संयोजन हेतु उपाय सुझाना अनुसंधानकर्ताओं का एक पुनीत कर्त्तव्य है।

आलोच्य अवधि में राजस्थान में समाज शिक्षा के क्षेत्र में कुल 12 अनुसंधान उपलब्ध हैं जिनमें से चार एम.एड. स्तर के, चार एम.ए. (ग्रामीण समाज शास्त्र) के, एक अधिस्नातक प्रौढ़ शिक्षा एवं तीन प्रौढ़ स्नातक उपाधि के लिए किए गए थे। इनमें से कुछ शोधकार्य प्रौढ़-साक्षरता एवं कुछ समाज शिक्षा का अध्ययन करने हेतु किए गए। ये शोधकार्य सर्वेक्षण और प्रकरण अध्ययन की विधा पर आधारित हैं। अधिकांश शोध कार्यों में प्रश्नोत्तरी, साक्षात्कार प्रपत्र एवं अवलोकन प्रपत्रों का उपयोग किया गया है। न्यादर्श ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही परिवेशों में लिए गए हैं परन्तु उनका आकार बहुत ही छोटा है। न्यादर्श के छोटे आकार तथा समस्याओं की विविधता के कारण किसी प्रकार का सामान्यीकरण अथवा प्रवृत्ति निरूपण सुसंगत प्रतीत नहीं होता। अतः प्रौढ़-साक्षरता एवं समाज शिक्षा से सम्बद्ध इन शोध कार्यों का अलग अलग विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है ताकि स्थानीय प्रवृत्ति का निरूपण हो सके तथा भावी शोधकार्यों के लिए दिशा निर्देश हो सकें।

प्रौढ़-साक्षरता कार्यक्रम की समीक्षा सम्बन्धी शोधकार्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सामान्यतया यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक नहीं चल पा रहा है। इन शोधकार्यों से यह भी ज्ञात होता है कि इस कार्यक्रम के सफल संचालन में इसके प्रति प्रौढ़ों की उदासीनता एवं उत्प्रेरणा का अभाव (शर्मा 1972), कार्यरत शिक्षकों की उदासीनता, प्रोत्साहन राशि का न मिलना (शर्मा 1972, रामावत 1974, मिश्रा 1974), अपर्याप्त प्रचार प्रसार एवं सम्बन्धित अधिकारियों की उदासीनता, सहयोग एवं समन्वय का अभाव, केन्द्रों पर साधन सुविधाओं (शिक्षण सहायक सामग्री) का अभाव एवं शिक्षण विधियों की अनुपयुक्तता (शर्मा 1972, मिश्रा 1974, रामावत 1974), मुख्य रूप से बाधक कारण हैं। महिला प्रौढ़ शिक्षा-केन्द्रों पर उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त पुराने रीतिरिवाज, रूढ़ियाँ, ससुराल पक्ष की प्रतिकूल मनोवृत्ति, बच्चों की देखरेख की समस्या एवं नव विवाहिताओं की पीहर तथा ससुराल के बीच आवाजाही आदि बाधक तत्त्व हैं (मिश्रा 1974)। अधिक आयुवर्ग के प्रौढ़ों में बीच में ही अध्ययन छोड़ देने की प्रवृत्ति अधिक है। जाति वर्ग के अन्तर का इस प्रवृत्ति पर कोई प्रभाव नहीं है (जैन 1972)। जैन (1972) के ही अनुसार अधिकांश प्रौढ़ अपना हिसाब किताब रखने एवं धार्मिक पुस्तकें पढ़ने की योग्यता में वृद्धि करने हेतु प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों में अध्ययन करते हैं। सिसोदिया (1972) ने ज्ञात किया है कि रात्रि महाविद्यालयों में अध्ययनरत प्रौढ़ अपनी आय बढ़ाने एवं जीवन स्तर ऊँचा उठाने हेतु अध्ययन करते हैं। योगी (1974) ने अपने शोधकार्य में निष्कर्ष निकाला है कि प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत करने तथा सामाजिक बुराइयों को दूर करने में सहायक हो सकता है।

समाज शिक्षा के क्षेत्र में सम्पादित शोधकार्यों में से एक समाज शिक्षा के प्रति कार्यकर्ताओं की धारणाओं एवं दृष्टिकोण पर (बिश्नोई 1964), एक समाज शिक्षा के अन्तर्गत संचालित पुस्तकालयों के सदस्यों की रुचियों पर (सिंह 1965), और चार समाज शिक्षा कार्यक्रमों के अन्तर्गत मूल्यांकन एवं समीक्षा से सम्बन्धित हैं (सिरोहिया 1957, व्यास 1970, शर्मा 1964, कर्णावट 1954)। बिश्नोई (1964) के अनुसार समाज शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न कार्यकर्ता इस कार्यक्रम की धारणा, संकल्पना, उद्देश्यों एवं उपादेयता के बारे में न तो स्पष्ट हैं और न ही एकमत। ये कार्यकर्ता अपने व्यवसाय से असन्तुष्ट एवं कर्त्तव्यों के प्रति उदासीन भी हैं। सिंह (1965) ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि कम आयु एवं अधिक शैक्षिक योग्यता प्राप्त प्रौढ़ पुस्तकालयों में नियमित रूप से उपस्थित रहते हैं, वे राष्ट्रीय समाचारों को प्राथमिकता देते हैं एवं धार्मिक पुस्तकों की अपेक्षा हिन्दी साहित्य के प्रति अधिक रुचि रखते हैं। यह अध्ययन बिहार राज्य के प्रौढ़ों पर आधारित है। राजस्थान की पृष्ठभूमि में कदाचित भिन्नता पाई जा सकती है। जिन चार शोध कार्यों में समाज शिक्षा की समीक्षा एवं उसका मूल्यांकन किया गया है उनके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि युवक मण्डल सामुदायिक केन्द्र एवं पुस्तकालय सेवा सामान्यतः सफलतापूर्वक चल रहे हैं। (सिरोहिया 1957 शर्मा 1964)। सभी शोधकार्य इस ओर इंगित करते हैं कि समाज शिक्षा कार्यक्रम कुल मिलाकर सुचारु रूप से संचालित नहीं हो पा रहा है।

इन कठिनाइयों के अनुसार इस कार्यक्रम के सफल संचालन में स्थानीय आवश्यकताओं के सर्वेक्षण का अभाव, प्रचार प्रसार एवं व्यक्तिगत सम्पर्क का अभाव (त्यागी 1970), शिक्षा विभाग, पंचायत समितियों एवं अन्य संस्थाओं के बीच सहयोग एवं समन्वय का अभाव (गिरालिया 1957, कर्णावट 1954, त्रिपाठी 1964) बाधक है। शिक्षा को प्रशासनिक स्तर एवं दिग्दर्शन कार्यकर्ताओं का स्तर उदार करना (शर्मा 1964) तथा प्रौढ़ों को उत्प्रेरित करने हेतु विभिन्न औपचारिक एवं अनौपचारिक तथा राजकीय एवं अराजकीय संस्थाओं द्वारा सम्मिलित प्रयास किए जाने की भी आवश्यकता है (त्यागी 1970, कर्णावट 1954)।

संभावनाएं एवं सुझाव

उपरोक्त कठिनाइयों से यह बात स्पष्ट रूप से झलकती है। एक तो यह कि समाज शिक्षा के प्रति सही दृष्टिकोण एवं उत्प्रेरणा का अभाव है और दूसरे यह कि यह कार्यक्रम सुचारु रूप से नहीं चल पा रहा है। इसके सफल क्रियान्वयन के लिए उपरोक्त बाधाओं के निराकरण की आवश्यकता है।

जहाँ तक प्रौढ़ साक्षरता पर अनुसंधान का प्रश्न है इस क्षेत्र अभी तक अछूता है। राजस्थान में जब तक प्रौढ़ साक्षरता केन्द्रों की संख्या, स्वरूप, संगठन एवं उनके लिए किए गए प्रौढ़ों की संख्या, उनके लिए संचालित अनुवर्तन-कार्यक्रम का स्वरूप एवं संगठन, सफलतापूर्वक संचालित प्रौढ़-साक्षरता केन्द्रों के प्रभावी पक्ष एवं असफल केन्द्रों के बाधक तत्वों आदि के बारे में राजस्थान व्यापी प्रादर्श के आधार पर तथ्यों को प्रकाश में लाने की आवश्यकता है। इसी प्रकार प्रौढ़ साक्षरता पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें, शिक्षण विधियों एवं आवश्यक साधन सुविधाओं आदि की उपयुक्तता एवं प्रभावशीलता के बारे में प्रयोग, परीक्षण एवं सर्वेक्षण की भी नितान्त आवश्यकता है। प्रौढ़ साक्षरता केन्द्रों के सफल संचालन के लिए यह आवश्यक है कि अध्यापकों को विशिष्ट प्रशिक्षण प्रदान करने, उनको विशेष भत्ता देने, प्रोत्साहन देने, प्रौढ़ों को अध्ययन के लिए उत्प्रेरित करने हेतु व्यापक प्रचार प्रसार एवं व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने के साथ-साथ संबंधित विभागों एवं कार्यकर्ताओं में आपसी सहयोग एवं समन्वय स्थापित किया जाए।

समाज शिक्षा कार्यक्रम के सफल संचालन के लिए प्रौढ़ों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों एवं आकांक्षाओं तथा इनको प्रभावित करने वाले घटकों यथा-लिंग, जाति, आयु, आय वर्ग, व्यवसाय, ग्रामीण एवं शहरी परिवेश का सर्वेक्षण करना जरूरी है। प्रौढ़ों को उत्प्रेरित करने की विधियाँ क्या हों, उनकी आशाओं एवं अपेक्षाओं में अभिवृद्धि करने पर समाज को इसका क्या मूल्य देना होगा, प्रौढ़ों की मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं आर्थिक बाधाओं का निराकरण कैसे हो, आदि प्रश्नों के उत्तर जानना भी आवश्यक है। समाज शिक्षा का दर्शन, सामाजिक एवं दार्शनिक आधार और मूल संकल्पना का सैद्धांतिक विश्लेषण करने के साथ ही कार्यक्रमों की स्पष्ट रूपरेखा, पाठ्यक्रम एवं विषय वस्तु का निर्धारण तथा प्रयोग और परीक्षण की भी आवश्यकता है। समाज शिक्षा से सम्बन्धित राजकीय एवं अराजकीय संस्थाओं के स्वरूप, संगठन तथा

द्वारा प्रदत्त एव प्रदत्त पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन करने के साथ ही कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का स्वरूप, उनकी योग्यताओं, विशेषताओं एव मनोवृत्तियों का निर्धारण भी किया जाता है। समाज शिक्षा प्रसार करने की प्रचलित पद्धतियों एव रीतियों, आज की वैज्ञानिक तकनीक के साथ उनका समायोजन, समाज शिक्षा की व्यवस्था, विधि, पाठ्य चयन, साहित्य का स्वरूप, प्रसारण तकनीक आदि के बारे में प्रयोग एव परीक्षण करना आवश्यक है। शिक्षण में सहायक सामग्री, यथा चित्र पत्रिका, कठपुतलियाँ, नाटिकाओं, रेडियो, टेलीविजन एव अभिक्रमित अध्ययन सामग्री की प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन तथा इन कार्यक्रमों को जीवन के क्रियात्मक पक्षों से जोड़ने तथा सामुदायिक शिक्षा का रूप देने के सम्बन्ध में प्रयोग किए जाने चाहिए। नवीन संकल्पनाओं यथा—मनोरंजनात्मक शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, नागरिक शिक्षा आदि के सम्बन्ध में पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों, प्रवृत्तियों एव पद्धतियों के विकास के अध्ययनों को भी समाज शिक्षा के वृहत्तर क्षेत्र में सम्मिलित किया जा सकता है।

यहाँ यह सकेत करना आवश्यक है कि जहाँ एम एड उपाधि प्राप्त करने वाले शोध छात्रों को इस क्षेत्र में अनुसधान के लिए प्रेरित करने की आवश्यकता है वहाँ सस्थागत एव आयोजनान्तर्गत अनुसधान-कार्यों को उचित प्रोत्साहन एव अनुदान प्रदान करके, इन पक्षों पर तथ्यात्मक सूचनाएँ सकलित करवाकर उन्हें समाज शिक्षा से सबद्ध सस्थाओं एव कार्यकर्ताओं को उपलब्ध कराना भी आवश्यक होगा।

सदर्भाकित अनुसधान

कर्णावट कानसिंह	A Plan of Social Education for Rajasthan M Ed Raj Uni 1954
जैन, एम एल	A Study of Factors of Continuity and Drop outs in Three Rural Adult Literacy Centres M A (Sociolgy) Udaipur Uni 1972
बिश्नोई एन एल	Social Education as Perceived by Block Functionaries M A (Sociology) Udaipur Uni 1964
मिश्रा शकुन्तला	बीकानेर नगर मे प्रवर्तमान प्रौढ़ महिला साक्षरता कार्यक्रम (सगठन शिक्षण पद्धति एव सामग्री) का समीक्षात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि, 1974
योगी जी पी	Aspirations towards Education of the Guardians in Scheduled Castes B A (Adult Edu) Raj Uni 1974
रामावत, मगलचन्द	विद्यालय निरीक्षक अजमेर द्वारा परिचालित 'रात्रि विद्यालय परियोजना' का आलोचनात्मक अध्ययन, एम एड राज वि वि, 197

व्यास जी डी	A Study of Adult Education Programme in Bikaner City B A (Adult Edu) Raj Uni 1970
शर्मा एच एन	Adult Literacy Programme in Panchayat Samiti Bandikui B A (Adult Edu) Raj Uni 1972
शर्मा, टा सी	Evaluation of Social Education Programme in Badgaon Block M A (Sociology) Udaipur Uni 1964
सिरोहिया जगतसिह	Critical Appraisal of Social Education Programme M Ed Raj Uni 1957
सिसादिया शान्ता	A Study of the Level of Aspiration of Students in the Night Colleges B A (Adult Edu) Raj Uni 1972
सिह, श्रा ए पी	Reading Interests of the Memb rs of Five Village Libraries in Bihar M A (Sociology) Udaipur Uni 1965



परिचय

श्री इन्द्रजीत खन्ना जन्म 1943, दिल्ली, सीनियर कैम्ब्रिज एम एससी (गणित) जर्मन भाषा में डिप्लोमा प्राप्त, भारतीय प्रशासनिक सेवा में 1966 में चयनित, तब से विभिन्न प्रशासनिक पदों पर कार्यरत, 1975 में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान के अध्यक्ष रहे राजस्थान में शिक्षा पर उच्चस्तरीय समिति (1975) के सदस्य-सचिव, शिक्षा पर उच्चस्तरीय समिति प्रतिवेदन के प्रधान सम्पादक, शिक्षा पर कई लेख प्रकाशित तथा अनेक रेडियो वार्ताएँ प्रसारित, सम्प्रति शिविरा एवं नया शिक्षक के प्रधान सम्पादक तथा निदेशक, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा राजस्थान बीकानेर।

डा पन्नालाल वर्मा जन्म 1934, नागौर जिला एम ए (अंग्रेजी), एम ए (संस्कृत), एम एड (स्वर्ण पदक विजेता) पीएच डी (शिक्षा), अध्यापन का त्रिविध स्तरों का लम्बा अनुभव, 1972 में समीनार रीडिंग्स प्रोग्राम के अन्तर्गत पुरस्कृत, एन सी ई आर टी प्रायोजना पर एक वर्ष सीनियर रिसर्च फेलो रहे, राज्यस्तरीय, राष्ट्रस्तरीय तथा एशिया स्तरीय शिक्षा समीनारों में भाग लिया – पत्रवाचन किया विभिन्न पत्रिकाओं में लगभग एक दजन शोध लेख तथा शिक्षा पर बीस निबंध प्रकाशित सम्प्रति अनुसंधान अधिकारी, राज्य शोध प्रकोष्ठ शिक्षा निदेशालय, बीकानेर।

श्री रवीन्द्र अग्निहोत्री जन्म 1937, लखनऊ, एम ए एम एड तीन परीक्षाओं में विश्वविद्यालय स्वर्ण पदक विजेता, देश की विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं में लगभग 150 शिक्षा संबंधी लेख प्रकाशित शिक्षा संबंधी छह पुस्तकें प्रकाशित– चार मौलिक तथा दो अनूदित। भारतीय शिक्षा दशा और दिशा पर उत्तरप्रदेश सरकार ने 1974 75 में मदनमोहन मालवीय पुरस्कार प्रदान किया वर्तमान में कतिपय शोध प्रयोजनाओं तथा पीएच डी शोध कार्य में संलग्न, सम्प्रति प्राध्यापक शिक्षा महाविद्यालय वनस्थली विद्यापीठ।

व्यास आशा	A Study of Adult Education Programme in Bikaner City B A (Adult Edu) Raj Uni 1970
शर्मा एच एन	Adult Literacy Programme in Panchayat Samiti Bandikui *B A (Adult Edu) Raj Uni 1972*
शर्मा टी मा	Evaluation of Social Education Programme in Badgaon Block M A (Sociology) Udaipur Uni 1964
सिराहिया जगतसिंह	Critical Appraisal of Social Education Programme M Ed Raj Uni 1957
सिसान्यिा, शान्ता	A Study of the Level of Aspiration of Students in the Night Colleges B A (Adult Edu) Raj Uni 1972
सिंह श्री एन पी	Reading Interests of the Members of Five Village Libraries in Bihar M A (Sociology) Udaipur Uni 1965



परिचय

श्री इन्द्रजीत खन्ना जन्म 1943, दिल्ली, सीनियर कैम्ब्रिज, एम एससी (गणित), जर्मन भाषा में डिप्लोमा प्राप्त, भारतीय प्रशासनिक सेवा में 1966 में चयनित तब से विभिन्न प्रशासनिक पदों पर कार्यरत, 1975 में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान के अध्यक्ष रहे राजस्थान में शिक्षा पर उच्चस्तरीय समिति (1975) के सदस्य सचिव, शिक्षा पर उच्चस्तरीय समिति प्रतिवेदन के प्रधान सम्पादक, शिक्षा पर कई लेख प्रकाशित तथा अनेक रेडियो वार्ताएँ प्रसारित, सम्प्रति शिविरा एवं नया शिक्षक के प्रधान सम्पादक तथा निदेशक प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर।

डा पन्नालाल वर्मा जन्म 1934 नागौर जिला, एम ए (अंग्रेजी), एम ए (संस्कृत), एम एड (स्वर्ण पदक विजेता) पीएच डी (शिक्षा), अध्यापन का विविध स्तरों का लम्बा अनुभव, 1972 में सेमीनार रीडिंग्स प्रोग्राम के अन्तर्गत पुरस्कृत एन सी ई आर टी प्रायोजना पर एक वर्ष सीनियर रिसर्च फैलो रहे, राज्यस्तरीय, राष्ट्रस्तरीय तथा एशिया स्तरीय शिक्षा सेमीनारों में भाग लिया – पत्रवाचन किया विभिन्न पत्रिकाओं में लगभग एक दर्जन शोध लेख तथा शिक्षा पर बीस निबंध प्रकाशित, सम्प्रति अनुसंधान अधिकारी, राज्य शोध प्रकोष्ठ, शिक्षा निदेशालय, बीकानेर।

श्री रवीन्द्र अग्निहोत्री जन्म 1937, लखनऊ, एम ए एम एड, तीन परीक्षाओं में विश्वविद्यालय स्वर्ण पदक विजेता, देश की विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं में लगभग 150 शिक्षा संबंधी लेख प्रकाशित शिक्षा संबंधी छह पुस्तकें प्रकाशित– चार मौलिक तथा दो अनूदित। भारतीय शिक्षा दशा और दिशा पर उत्तरप्रदेश सरकार ने 1974 75 में मदनमोहन मालवीय पुरस्कार प्रदान किया, वर्तमान में कतिपय शोध प्रयोजनाओं तथा पीएच डी शोध कार्य में संलग्न, सम्प्रति प्राध्यापक शिक्षा महाविद्यालय, वनस्थली विद्यापीठ।

श्री वीरेन्द्र ममरवाल जन्म 1936 नागौर एम ए एम एड (स्वर्ण पदक विजेता) शिक्षक प्रशिक्षण म पाँच वष का अध्यापन अनुभव न्ह का विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं म 13 लेख प्रकाशित अग्रेजी शिक्षण म पीएच डी हेतु शोध काय म सलग्न सम्प्रति प्रवक्ता (शिक्षा) शिक्षा महाविद्यालय वनस्थली विद्यापीठ।

डा श्यामलाल कौशिक जन्म 1929 बी ए एम ए (शिक्षा) एम ए (अग्रेजी) एम एड पीएच डी (शिक्षा) पिछले आठ वर्षों से शो पर एम एड कक्षाओं पठन का अनुभव अब तक 4 पुस्तकें तथा शिक्षा सबधी विषयों पर लगभग 150 लेख प्रकाशित विभिन्न सेमीनारों म पत्रवाचन किया सन्दर्भ व्यक्ति रहे 1966 म समाचार शक्ति प्रोग्राम के अन्तगत पुरस्कृत सम्प्रति वरिष्ठ प्राध्यापक राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानेर।

श्री पुरुषोत्तमलाल तिवारी जन्म 1928 उदयपुर जिला एम ए एम एड विविध स्तरों पर अध्यापन का लम्बा अनुभव हिन्दी भाषा व भाषा शिक्षण विशेष रुचि का क्षेत्र इसी विषय के विभिन्न पक्षों पर लगभग 20 लेख प्रकाशित पिछले 12 वर्षों से एन सी ई आर टी तथा रा शि स द्वारा सचालित शिविरों म सन्दर्भ व्यक्ति पदों म स्मर्या कक्षा तक की राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी पाठ्यपुस्तकों शिक्षक सदर्शिकाओं तथा पाठ्यपुस्तक निमाण की कमेटियों के निमाण का अनुभव राजस्थान म तथा एन सी ई आर टी द्वारा प्रकाशित हिन्दी विषय की पाठ्यपुस्तकों के सम्पादन व निमाण म योगदान हिन्दी भाषा शिक्षण म सबधित 4 पुस्तकें प्रकाशित सम्प्रति सम्पादक विभागीय प्रकाशन शिविरा बीकानेर।

डा ओंकारसिंह देवल जन्म 1931 जोधपुर जिला एम ए एम एड (स्वर्ण पदक विजेता) पीएच डी (शिक्षा) 1973 म राष्ट्रमण्डलीय छात्रवृत्ति के अन्तगत अनुसन्धान हेतु इंग्लैण्ड गए 1974 म बर्मिंघम विश्वविद्यालय म शिक्षा-तकनीकी म डिप्लोमा प्राप्त किया देश की विभिन्न सस्थाओं तथा विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित सेमीनारों म सन्दर्भ व्यक्ति रहे रुचि का विशिष्ट क्षेत्र – शिक्षा तकनीकी अभिक्रमित अध्ययन की राष्ट्रीय कायकारिणी तथा ब्रिटेन म अभिक्रमित अध्ययन सघ के सदस्य अब तक देश विदेश की पत्रिकाओं म शिक्षा सबधी लगभग 40 लेख प्रकाशित, दो पुस्तकों के सह लेखक, सम्प्रति प्राध्यापक विद्याभवन शिक्षक महाविद्यालय उदयपुर।

श्री वासुदेव जी दवे जन्म 1935 गढ़गन (जिला डूगरपुर) एम एमसी एम एड, पाँच दो स्नातक विज्ञान शिक्षण म विशेष रुचि नाना शिक्षक तथा अन्य पत्रिकाओं म शिक्षा सबधी लेख प्रकाशित बोर्ड द्वारा अनुमोदित प्रायोगिक 'मानव' पुस्तक के लेखक सम्प्रति उप जिला शिक्षा अधिकारी उदयपुर।

डा छैलबिहारी माथुर जन्म 1927, जयपुर, एम ए एम एड, पीएच डी (शिक्षा), टी ए टी की भारतीय परिप्रेक्ष्य में व्याख्या सम्बन्धी नूतन तकनीक का निर्माण किया, बी एड कक्षाएँ पढाने का 10 वर्ष का तथा एम एड कक्षाएँ पढाने का छह वर्ष का अनुभव, शिक्षा के विभिन्न पक्षों पर अनेकों लेख प्रकाशित विज्ञान सम्प्राप्ति परख के निर्माता शैक्षिक निर्देशन सेवाओं का चित्रात्मक ढंग से प्रस्तुतीकरण कला व मनोविज्ञान में विशेष रुचि पीएच डी गाइड, सम्प्रति प्रोफेसर, राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बीकानेर।

डा चन्द्रप्रकाश माथुर जन्म 1940 जोधपुर, एम एड, पीएच डी (शिक्षा), राजस्थान गाइडेंस न्यूज लैटर का तीन वर्ष तक सम्पादन कार्य किया, लगभग एक दजन शोध लेख प्रकाशित, निर्देशन सेवाओं के लिए 1966 में राज्य सरकार द्वारा पुरस्कृत, सम्प्रति अध्यापक, राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर।

श्री जगदीशनारायण पुरोहित जन्म 1930, भीलवाडा जिला, एम ए एम एड, बी एड कक्षाएँ पढाने का नौ वर्ष का अनुभव माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशिक्षण, अनौपचारिक शिक्षा, शैक्षिक मूल्यांकन प्रशिक्षण शिविरों आदि में सदस्य व्यक्ति का कार्य किया, महत्वपूर्ण विचार गोष्ठियों में पत्र वाचन किया, शिक्षा पर प्रकाशित चार पुस्तकों के सहलेखक तथा 'शिक्षण के लिए आयोजन' पुस्तक के लेखक, कई शोध लेख तथा शैक्षिक निबंध प्रकाशित, एन सी ई आर टी द्वारा स्वीकृत अनुसंधान एवं अनुदान प्राप्त प्रायोजनाओं में मुख्य अनुसंधानकर्त्ता रहे सम्प्रति प्राध्यापक राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय अजमेर।

श्री कृष्णगोपाल बीजावत जन्म 1934, अजमेर एम ए (हिन्दी) एम ए (अर्थशास्त्र) एवं एम ए (शिक्षा), बी एड स्तर पर स्वर्ण पदक विजेता, चार प्रकाशित पाठ्यपुस्तकों तथा तुलनात्मक शिक्षा नामक पुस्तक के लेखक, 10+2 योजना के अंतर्गत एन सी ई आर टी द्वारा प्रकाश्य हिन्दी गद्य एवं पद्य पुस्तकों के सम्पादन में संलग्न कई शैक्षिक गोष्ठियों में पत्र वाचन किए, अजमेर के शैक्षिक विकास पर पीएच डी शोध कार्य में संलग्न सम्प्रति प्राध्याता राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय अजमेर।

प्रो बजरंगलाल भोजक जन्म 1926, सरदारशहर एम ए एम एड सी आइ ई हैदराबाद से अंग्रेजी में विशेष प्रशिक्षण, प्रशिक्षण महाविद्यालय की कक्षाएँ पढाने का 15 वर्ष का अनुभव विश्वविद्यालय शिक्षण संस्थाओं सामाजिक संस्थाओं आदि के कार्यों में भिन्न भिन्न भूमिकाओं में संबद्ध भारत की विभिन्न शोध पत्रिकाओं में कई शैक्षिक शोध लेख प्रकाशित सम्प्रति प्रोफेसर गांधी विद्यामन्दिर वसिक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, सरदारशहर।

डा. अरविन्द की फाटक एम. एससी. एम. एड. पीएच. डी. (शिक्षा), विगत पन्द्रह वर्षों से विद्याभवन में संलग्न, प्राथमिक, माध्यमिक एवं उ. मा. विद्यालय के आचार्य पद पर कार्य किया। स्नातकोत्तर एवं पीएच. डी. स्तर का अध्यापन अनुभव। राज. हिन्दी ग्रंथ अकादमी द्वारा प्रकाशित दो पुस्तकों के लेखक, भारत की विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं में शिक्षा संबंधी कई लेख प्रकाशित, सम्प्रति प्राध्यापक, विद्याभवन शिक्षक महाविद्यालय, उदयपुर।

श्री कैलाशबिहारी वाजपेयी जन्म 1936 उदयपुर, एम. ए. (अंग्रेजी), एम. एड. (स्वर्ण पदक विजेता), मचेस्टर यूनिवर्सिटी (लन्दन) से टी. ई. ओ. में डिप्लोमा प्राप्त, अमेरिका जाकर वहाँ स्टेट न्यू मेक्सिको यूनिवर्सिटी में ध्वनि तथा ध्वनि विज्ञान एवं पठन योग्यताओं का मूल्यांकन सम्बन्धी पाठ्यक्रम पूरा किया। सम्प्रति प्रशासक एवं प्रधानाध्यापक, राजकीय नवीन माध्यमिक विद्यालय, उदयपुर।

श्री सत्यप्रकाश शर्मा जन्म 1928, एम. काम., एम. एड. 15 वर्ष का अध्यापन अनुभव तथा 11 वर्ष का उपनिरीक्षक, परामर्शक राज्य निर्देशन केन्द्र एवं प्रधानाध्यापक का अनुभव। शिक्षा पर कई लेख प्रकाशित। 1969 में गाइडेंस न्यूज लेटर का संपादन किया। शिक्षानुसंधाता वाकपीठ के अध्यक्ष रहे। सम्प्रति प्रधानाध्यापक, जौहरी राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, लाडनू (नागौर)।

डा. मुल्कराज चिलाना जन्म 1934 फाजिल्का (पंजाब) एम. ए. एम. एड. पीएच. डी. (शिक्षा) पोस्टग्रेजुएट डिप्लोमा (यूनेस्को) 1970–71 में यूनेस्को में वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी रहे। अब तक शिक्षा तथा अनुसंधान में 200 से भी अधिक लेख देश विदेश की पत्रिकाओं में प्रकाशित। अध्यापकों का सेवारत अध्यापन पुस्तक के लेखक, पीएच. डी. गाइड, सम्प्रति प्राध्यापक क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर।

श्री प्रकाशचन्द्र द्विवेदी जन्म 1942 गढ़ी (बाँसवाड़ा), एम. ए. (राजनीति शास्त्र), एम. एड., शिक्षानुसंधान एवं लेखन में विशेष रुचि। सम्प्रति सहायक प्रधानाध्यापक, राजकीय आदर्श उ. मा. विद्यालय, अजमेर।

श्री हरिशचन्द्र मित्तल जन्म 1928 एम. ए. एम. एड. सी. एफ. ए. एम. (प्रशासन) अध्यापन तथा प्रशासन का लम्बा अनुभव, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा संबंधी कई लेख प्रकाशित। सम्प्रति उप प्रायोजना अधिकारी, शिक्षा विभाग सचिवालय जयपुर।

श्री सूरजनारायण राव जन्म 1922 चौमू (जयपुर), एम ए (अर्थशास्त्र), एम ए (राजनीति शास्त्र), एम एड (स्वर्ण पदक विजेता) लगभग 35 वर्ष का अध्यापन एव प्रशासन सबधी अनुभव, सम्प्रति प्रधानाचार्य राजकीय पोद्दार उच्च माध्यमिक विद्यालय, जयपुर।

श्री विद्यासागर शर्मा जन्म 1936, जिला भीलवाडा, एम एससी, एम एड, पीएच डी (शिक्षा) सम्पन्न, राजस्थान की पचवर्षीय शिक्षा योजना की तयारी म योगदान रहा, सस्थान-स्तरीय प्रायोजनाएँ प्रकाशित, शिक्षा पर कई लेख प्रकाशित, सम्प्रति राज्य शिक्षा सस्थान उदयपुर मे सहायक निदशक।

श्री शशिशेखर व्यास जन्म 1933, उदयपुर, एम ए बी एड राज्य-स्तरीय कार्यगोष्ठियो म सदस्य व्यक्ति, अग्रेजी भाषा मे तीन प्रकाशित पुस्तको के लेखक, लेखन, सम्पादन व अनुसधान म विशेष रुचि, सम्प्रति अनुसधान सहायक, राज्य शिक्षा सस्थान उदयपुर।

श्री मोहम्मद हुसन जन्म 1940, उदयपुर, एम ए एम एड (स्वर्ण पदक विजेता), अभिक्रमित अध्ययन म विशेषज्ञ के नाते कई प्रशिक्षण शिविरो तथा नवाचारो पर आयोजित सगोष्ठियो म सदस्य व्यक्ति रहे देश की विभिन्न शिक्षा सबधी पत्रिकाओ मे इनके लेख/शोध लेख प्रकाशित, टीचिंग ऑफ इंग्लिश' के लेखक, सम्प्रति प्रधानाध्यापक, राजकीय माध्यमिक विद्यालय, रीछेड (उदयपुर)।

सुश्री उषासुन्दरी बली जन्म 1928 एम ए, एम एड, अध्यापक एव प्रशासक के रूप म 27 वर्ष का अनुभव, शिक्षण प्रशिक्षण, विद्यालयी शिक्षा, पूर्व विद्यालयी शिक्षा व प्रौढ शिक्षा के सबध म अनेक लेख प्रकाशित, यूनेस्को फलोशिप के अन्तर्गत एजूकेशनल प्लानिंग का अध्ययन कर रही हैं, सम्प्रति उपनिदशक (प्रशासन) शिक्षा निदेशालय, बीकानेर।

प्रो चतरसिंह मेहता जन्म 1932 सोजत (पाली), एम ए, एम एड शिक्षा विभाग म विभिन्न पदो का 26 वर्ष का अनुभव, शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित विद्यालय योजना तथा विद्यालय सगम के सहलेखक, राज हिन्दी ग्रथ अकादमी द्वारा प्रकाशित शिक्षक प्रशिक्षण के सिद्धान्त एव समस्याए खण्ड 1 व 2 के सहलेखक राजस्थान की उच्च प्राथमिक कक्षाओ की सामाजिक ज्ञान पुस्तको के सहलेखक, शक्षिक पत्र पत्रिकाओ म शिक्षा सबधी अनेक लेख प्रकाशित, सम्प्रति प्रोफसर राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर।

श्री भगवानलाल व्यास जन्म 1925, कुशलगढ (बाँसवाडा), एम ए एम एड अध्यापन एव शिक्षा प्रशासन के विविध स्तरों का लम्बा अनुभव, राष्ट्रस्तरीय

विभिन्न समीनारो म राजस्थान का प्रतिनिधित्व किया, भारत के विभिन्न राज्या – तामिलनाडु पाण्डिचेरी, केरल, महाराष्ट्र कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात – म भेज गए अध्ययन दलो का नतृत्व किया, शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित पाँच पुस्तको का लेखन/सम्पादन काय किया, विभिन्न शक्षिक सगठनो की नीति निर्धारण स सबद्ध, सम्प्रति निदेशक, राज्य शिक्षा सस्थान, उदयपुर।

श्री जनार्दन प्रसाद शर्मा जन्म 1928 एम ए (अथशास्त्र), एम एड, विभिन्न स्तरा पर अध्यापन एव प्रशासन का लम्बा अनुभव, उत्कृष्ट सवाओ के लिए 1971 मे राष्ट्रीय पुरस्कार द्वारा सम्मानित, गणित एव सामान्य विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित, शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तकालय सबधी पुस्तक के सहलेखक, शिक्षा सबधी कई लेख प्रकाशित सम्प्रति जिला शिक्षा अधिकारी, उदयपुर।

□